मार्च, 2022

I.S.S.N. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री अविनाश शुक्ला

श्री असलम खान

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह

श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2022 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मार्च, 2022 अंक - 3

प्रधान संपादक

कमला कान्त

संपादक

असलम खान

(2022) 1 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.
दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

क्या आयुध अनुज्ञप्ति सभी नागरिकों को प्रदान की जा सकती है, यदि नहीं तो इसे किन परिस्थितियों में और किन व्यक्तियों को प्रदान की जा सकती है । इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार करते हुए, माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने **रजत यादव** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** (2022) 1 सि. नि. प. 277 वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया कि याची उन विभिन्न व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं आता है जो अपने पद और अपने द्वारा निर्वहन किए जाने वाले कर्तव्यों के आधार पर आयुध अनुज्ञप्ति के हकदार हैं तथा याची को अपने जीवन और संपत्ति का संकट नहीं होने से याची आयुध अनुज्ञप्ति का हकदार नहीं है तथा याची को यदि आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान की जाती है तो वह अनुज्ञप्ति आयुध नियम, 1959 के उपबंधों से असंगत होगी ।

यदि किसी सरकारी कर्मचारी को विभागीय जांच में दोषी पाए जाने पर सेवा से पदच्युत किया जाता है तो क्या उस कर्मचारी को विभागीय जांच की रिपोर्ट उपलब्ध कराया जाना अनिवार्य है और यदि ऐसी रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराई जाती है तो पदच्युति आदेश पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा । इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार करते हुए, माननीय छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय ने **एच. के. लगर** बनाम **छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक और अन्य** (2022) 1 सि. नि. प. 338 वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया कि यदि किसी कर्मचारी को विभागीय जांच के दौरान दोषी पाए जाने पर सेवा से पदच्युत किया जाता है तो यदि उस कर्मचारी को जांच की समाप्ति पर जांच रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराई जाती है और उसे सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर उपलब्ध नहीं कराया जाता है तो ऐसा पदच्युति आदेश मनमाना और नैसर्गिक नियमों के विरुद्ध माना जाएगा तथा अभिखंडित कर दिया जाएगा ।

क्या भू-स्वामी सद्भाविक आवश्यकता के आधार पर, किराएदार को अपनी भूमि से बेदखल करा सकता है । इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार करते हुए, माननीय छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय ने **अच्छे-लाल जायसवाल और अन्य** बनाम **श्रीमती रानी बाई दीक्षित और अन्य**

(2022) 1 सि. नि. प. 387 वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि भू-स्वामी को किराएदारी भूमि की सद्भाविक आवश्यकता है तो किराएदार के विरुद्ध किराया संदाय एवं बेदखली का वाद सफल होगा भले ही प्रश्नगत भूमि के अन्य सह-स्वामियों को सम्मिलित नहीं किया है और भू-स्वामी के पास अन्यत्र परिसर भी उपलब्ध है ।

इस अंक में, भविष्य निधि अधिनियम, 1925 के हिन्दी पाठ को भी प्रकाशित किया जा रहा है जो पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक और अतिमहत्वपूर्ण है जिसका परिशीलन किया जा सकता है । उपर्युक्त निर्णयों के अतिरिक्त अन्य कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर निर्णय प्रकाशित किए जा रहे हैं जो विधि-विद्यार्थियों, अधिवक्ताओं, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए अत्यंत लाभकारी साबित होंगे ।

कमला कान्त, परामर्शदाता
प्रभारी – उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

मार्च, 2022

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अच्छेलाल जायसवाल और अन्य **बनाम** श्रीमती रानी बाई दीक्षित और अन्य	387
एच. के. लगर **बनाम** छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक और अन्य	338
मुरलीधर (मृत) के विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से **बनाम** रामलाल और अन्य	365
रजत यादव **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	277
सुरेश एस. (श्री) **बनाम** श्रीमती लक्ष्मी	326
हेम राज शर्मा **बनाम** जागिन्द्रो देवी और अन्य	415

संसद् के अधिनियम

भविष्य निधि अधिनियम, 1925 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 24

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8)

– धारा 30 और धारा 2(1)(ढ) – अपील – गृह निर्माण कार्य में नियोजित दैनिक मजदूर की निर्माण कार्य के दौरान मृत्यु – नियोजक का दायित्व – यदि कोई व्यक्ति गृह निर्माण कार्य में दैनिक मजदूरी के आधार पर नियोजित किया जाता है और निर्माण कार्य के दौरान उस मजदूर की मृत्यु हो जाती है तो उसकी मृत्यु के एवज में प्रतिकर संदाय करने का दायित्व नियोजक का होगा क्योंकि वह मजदूर संबंधित अधिनियम के अर्थान्तर्गत कर्मकार की परिभाषा के अन्तर्गत आएगा ।

हेम राज शर्मा बनाम **जागिन्द्रो देवी और अन्य** 415

कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 (1984 का 66)

– धारा 19(1) [सपठित हिन्दू विवाह अधिनियम, 1956 की धारा 13ख(1)] – अपील – आपसी सहमति से विवाह-विच्छेद की अर्जी – विवाह असुधार्य स्तर पर पहुंच जाना – पक्षकारों के बीच सुलह की कोई सम्भावना नहीं – यदि हिन्दू विवाह के पक्षकारों का विवाह असुधार्य स्तर पर पहुंच गया हो और सुलह होने की कोई सम्भावना नहीं है और यदि विवाह के दोनों पक्षकारों द्वारा आपसी सहमति से विवाह-विच्छेद कराने की अर्जी दी जाती है तो उसे मंजूर किया जा सकता है ।

सुरेश एस. (श्री) बनाम **श्रीमती लक्ष्मी** 326

पृष्ठ संख्या

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 तथा आयुध नियम, 2016] – रिट याचिका – अनुज्ञापन प्राधिकारी के समक्ष आयुध अनुज्ञप्ति के लिए याची का आवेदन – याची को अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा आयुध अनुज्ञप्ति न दिया जाना – याची उन विभिन्न व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं आता है जो अपने पद और अपने द्वारा निर्वहन किए जाने वाले कर्तव्यों के आधार पर आयुध अनुज्ञप्ति के हकदार हैं तथा याची को अपने जीवन और संपत्ति का संकट नहीं होने से याची आयुध अनुज्ञप्ति का हकदार नहीं है तथा याची को यदि आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान की जाती है तो वह अनुज्ञप्ति आयुध नियम, 1959 के उपबंधों से असंगत होगी ।

रजत यादव बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 277

– अनुच्छेद 226 [सपठित छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी और कर्मकारी सेवा विनियम, 2007 के खंड 381(ख)(फ) और विनियम 47] – बैंक कर्मचारी की विभागीय जांच के आधार पर पदच्युति – जांच के पश्चात् भी कर्मचारी को जांच रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराना – पदच्युति आदेश को चुनौती – यदि किसी कर्मचारी को विभागीय जांच के दौरान दोषी पाए जाने पर सेवा से पदच्युत किया जाता है तो यदि उस कर्मचारी को जांच की समाप्ति पर जांच रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराई जाती है और उसे सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर उपलब्ध नहीं कराया जाता है तो ऐसा पदच्युति आदेश मनमाना और नैसर्गिक नियमों के विरुद्ध माना जाएगा तथा अभिखंडित कर दिया जाएगा ।

एच. के. लगर बनाम **छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक और अन्य** 338

पृष्ठ संख्या

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 96 [छत्तीसगढ़ आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 की धारा 12(1)(क)(ख)(ग) और (ढ)] – अपील – भू-स्वामी द्वारा किराएदार की बेदखली के लिए वाद – भू-स्वामी की सद्भाविक आवश्यकता – अन्य भूमि सह-स्वामी को सम्मिलित नहीं किया जाना – भू-स्वामी के लिए अन्यत्र परिसर उपलब्ध होना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि भू-स्वामी को किराएदारी भूमि की सद्भाविक आवश्यकता है तो किराएदार के विरुद्ध किराया संदाय एवं बेदखली का वाद सफल होगा भले ही प्रश्नगत भूमि के अन्य सह-स्वामियों को सम्मिलित नहीं किया है और भू-स्वामी के पास अन्यत्र परिसर भी उपलब्ध है ।

अच्छेलाल जायसवाल और अन्य बनाम **श्रीमती रानी बाई दीक्षित और अन्य** 387

– धारा 100 [सपठित संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क] – द्वितीय अपील – अचल संपत्ति की विक्रय संविदा – विक्रय विलेख निष्पादित होना – भागिक पालन – संविदा के एक पक्षकार द्वारा संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं होना – दूसरे पक्षकार द्वारा इस आधार पर संविदा भंग कराना – यदि किसी अचल संपत्ति का विक्रय करने के लिए दोनों पक्षकारों के बीच विक्रय करार निष्पादित किया जाता है तो यदि उनमें से एक पक्षकार, संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं है तो दूसरा पक्षकार इस आधार पर संविदा अपने हक में भंग कराने का हक्दार होगा ।

मुरलीधर (मृत) के विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से बनाम **रामलाल और अन्य** 365

रजत यादव

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

(2021 की सिविल रिट याचिका सं. 21097)

तारीख 22 अक्तूबर, 2021

न्यायमूर्ति अजय भनोट

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित आयुध अधिनियम, 1959 तथा आयुध नियम, 2016] – रिट याचिका – अनुज्ञापन प्राधिकारी के समक्ष आयुध अनुज्ञप्ति के लिए याची का आवेदन – याची को अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा आयुध अनुज्ञप्ति न दिया जाना – याची उन विभिन्न व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं आता है जो अपने पद और अपने द्वारा निर्वहन किए जाने वाले कर्तव्यों के आधार पर आयुध अनुज्ञप्ति के हकदार हैं तथा याची को अपने जीवन और संपत्ति का संकट नहीं होने से याची आयुध अनुज्ञप्ति का हकदार नहीं है तथा याची को यदि आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान की जाती है तो वह अनुज्ञप्ति आयुध नियम, 1959 के उपबंधों से असंगत होगी ।

वर्तमान मामले में, याची द्वारा प्रस्तुत अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन पर कार्रवाई करने के लिए अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा सुसंगत सरकारी विभागों अर्थात् राजस्व और पुलिस प्राधिकारियों से रिपोर्ट मांगी गई थी । उक्त रिपोर्ट तारीख 5 जुलाई, 2021 के आदेश में उद्धृत की गई है । उप जिलाधिकारी, करहल द्वारा तारीख 27 जनवरी, 2021 को प्रस्तुत रिपोर्ट में यह अभिलिखित है कि आवेदक किसी अपराध से पीड़ित नहीं है तथा वह व्यापारी, उद्योगपति, सेवाकर्मी, अर्धसैनिक बलों का सदस्य, विधानसभा सदस्य, विधान परिषद् सदस्य,

सांसद या प्रवर्तन अधिकारी नहीं है । पुलिस प्राधिकारियों की ओर से तारीख 27 जनवरी, 2021 को पुलिस स्टेशन करहल के भारसाधक निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में प्राख्यान किया गया है कि रजत यादव के विरुद्ध कोई भी आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत नहीं है । आवेदक रजत यादव के संकट की अनुभूति के विश्लेषण पर उक्त पुलिस रिपोर्ट में राय दी गई है कि आवेदक को किसी भी व्यक्ति से जीवन या संपत्ति का कोई संकट नहीं है । आवेदक को अग्न्यायुध रखने की वास्तविक आवश्यकता नहीं है । संबंधित थाने के निरीक्षक की रिपोर्ट को सर्किल अधिकारी, करहल ने अपनी रिपोर्ट तारीख 8 फरवरी, 2021 में विधिवत् रूप से अनुमोदित किया था । विभिन्न पुलिस कृत्यकारियों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट से सहमत होने के पश्चात् पुलिस अधीक्षक, मैनपुरी ने सिफारिश की कि आवेदक आयुध अनुज्ञप्ति दिए जाने का हकदार नहीं है । तारीख 5 जुलाई, 2021 के आक्षेपित आदेश में विभिन्न सक्षम प्राधिकारियों द्वारा प्रस्तुत जांच रिपोर्टों के आलोक में आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए याची की पात्रता की जांच की गई थी । याची किसी पद को धारण करने या विनिर्दिष्ट रूप से अधिकारिक कार्यों का निर्वहन करने के कारण से आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान किए जाने के हकदार व्यक्तियों की विभिन्न श्रेणियों में नहीं आता था, जिससे उसके जीवन को संकट हो । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश को निर्दिष्ट किया है, जिसका स्पष्ट रूप से आधार तत्व यह है कि केवल वे व्यक्ति ही अनुज्ञप्ति प्राप्त करने के हकदार हैं, जिनके जीवन को गंभीर संकट या आसन्न भय है या उनके जीवन को संकट होने की वास्तविक संभावना है । तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश में यह भी अनुध्यात है कि अनुज्ञापन प्राधिकारी को यह सुनिश्चित करना होगा कि ऐसे व्यक्तियों को अनुज्ञप्ति जारी न की जाए जिनको इसकी कोई वास्तविक आवश्यकता नहीं है । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने पुलिस प्राधिकारियों द्वारा प्रस्तुत संकट की अनुभूति वाली रिपोर्टों और राजस्व प्राधिकारियों की सिफारिश से स्वतंत्र रूप से सहमति व्यक्त की थी । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने पाया था कि याची को अपने जीवन या संपत्ति

के लिए किसी भी आसन्न या संभावित संकट का सामना नहीं करना पड़ता है । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने आक्षेपित आदेश में यह अभिलिखित किया था कि याची अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए उक्त शासनादेश में अधिकथित पात्रता के मापदंडों को पूर्ण नहीं करता है और उसे अग्न्यायुध की वास्तविक आवश्यकता नहीं है । इस तर्क के आधार पर अनुज्ञापन प्राधिकारी ने तारीख 5 जुलाई, 2021 के आदेश द्वारा आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए याची के आवेदन को खारिज कर दिया था । इससे व्यथित होकर याची ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की । न्यायालय द्वारा रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अग्न्यायुधों के अर्जन और धारण के विषय में विधायी आशय की निर्बंधनात्मक प्रकृति को आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 3(1) में स्पष्ट किया गया है, जिसमें यह उपबंध किया गया है कि कोई भी व्यक्ति तब तक कोई अग्न्यायुध या गोला-बारूद अर्जित नहीं करेगा, अपने कब्जे में नहीं रखेगा या साथ नहीं रखेगा, जब तक कि उसके पास आयुध अधिनियम, 1959 और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अनुसार जारी अनुज्ञप्ति न हो । अनुज्ञप्ति देने से संबंधित उपबंध अधिनियम के अध्याय III में अन्तर्विष्ट है । अधिनियम की धारा 13 अनुज्ञप्ति प्रदान करने की रीति से संबंधित है और इसे नीचे पुन: प्रस्तुत किया जाता है : अनुज्ञप्तियों का अनुदान – (1) अध्याय 2 के अधीन अनुज्ञप्ति के अनुदान के लिए आवेदन अनुज्ञापन प्राधिकारी को दिया जाएगा और वह ऐसे प्ररूप में होगा, उसमें ऐसी विशिष्टियां अन्तर्विष्ट होंगी और उसके साथ ऐसी फीस होगी, यदि कोई हों, जैसा या जैसी विहित किया जाए या की जाए । आवेदन की प्राप्ति पर अनुज्ञापन प्राधिकारी उस आवेदन पर निकटतम पुलिस थाने के भारसाधक आफिसर से रिपोर्ट मंगवाएगा और ऐसा आफिसर विहित समय के भीतर अपनी रिपोर्ट भेजेगा । (2क) अनुज्ञापन प्राधिकारी, ऐसी जांच यदि कोई हो, करने के पश्चात्, जैसी वह आवश्यक समझे और उपधारा (2) के अधीन प्राप्त रिपोर्ट पर विचार करने के पश्चात्, इस अध्याय के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए लिखित आदेश द्वारा अनुज्ञप्ति या तो अनुदत्त

करेगा या अनुदत्त करने से इनकार करेगा, परंतु जहां निकटतम पुलिस थाने का भारसाधक आफिसर आवेदन पर विहित समय के भीतर अपनी रिपोर्ट नहीं भेजता है, वहां यदि अनुज्ञापन प्राधिकारी ठीक समझे तो वह विहित समय के अवसान के पश्चात्, उस रिपोर्ट की और प्रतीक्षा किए बिना, ऐसा आदेश कर सकेगा । (3) अनुज्ञापन प्राधिकारी – (क) धारा 3 के अधीन अनुज्ञप्ति वहां अनुदत्त करेगा, जहां कि वह अनुज्ञप्ति – (i) संरक्षा या आखेट में उपयोग में लाए जाने के लिए इंच से अन्यून लंबी नाल वाली चिकने बोर की बंदूक के संबंध में या सफल संरक्षा के लिए सद्भावपूर्वक उपयोग में लाई जाने के लिए नालमुख से भरी जाने वाली बंदूक के संबंध में भारत के नागरिक द्वारा अपेक्षित की जाए, परन्तु जहां कि किसी मामले की परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए अनुज्ञापन प्राधिकारी का समाधान हो जाए कि नालमुख से भरी जाने वाली बन्दूक फसल संरक्षा के लिए पर्याप्त न होगी, वहां अनुज्ञापन प्राधिकारी ऐसा संरक्षा के लिए यथापूर्वोक्त किसी अन्य चिकने बोर की बंदूक के संबंध में अनुज्ञप्ति अनुदत्त कर सकेगा, अथवा (ii) केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुज्ञप्तया मान्यताप्राप्त राइफल क्लब या राइफल संगम के सदस्य द्वारा निशाना लगाने का अभ्यास करने में उपयोग में लाई जाने के लिए प्वाइंट 22 बोर राइफल या हवाई राइफल के संबंध में अपेक्षित की जाए ; (ख) किसी अन्य मामले में धारा 3 के अधीन की अनुज्ञप्ति या धारा 4, धारा 5, धारा 6, धारा 10 या धारा 12 के अधीन की अनुज्ञप्ति उस दशा में अनुदत्त करेगा, जिसमें अनुज्ञापन प्राधिकारी को समाधान हो जाए कि उस व्यक्ति के पास जिसके द्वारा अनुज्ञप्ति अपेक्षित है, उसे अभिप्राप्त करने के लिए अच्छा कारण है । अधिनियम की धारा 14 में अनुज्ञप्ति देने से इनकार करने का उपबंध है तथा धारा 14 में इस प्रकार से कहा गया है – **अनुज्ञप्तियां देने से इनकार करना** – (1) धारा 13 में किसी बात के होते हुए भी, अनुज्ञापन प्राधिकारी – (क) धारा 3, धारा 4 या धारा 5 के अधीन अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से वहां इनकार करेगा, जहां कि ऐसी अनुज्ञप्ति किन्हीं प्रतिषिद्ध गोलाबारूद के बारे में अपेक्षित हो ; (ख) अध्याय 2 के अधीन किसी अन्य मामले में अनुज्ञप्ति

अनुदत्त करने से वहां इनकार करेगा, – (i) जहां कि ऐसी अनुज्ञप्ति उस व्यक्ति द्वारा अपेक्षित है, जिसके बारे में अनुज्ञापन प्राधिकारी के पास यह विश्वास करने का कारण है कि वह – (1) किसी आयुध या गोलाबारूद को अर्जित करने, अपने कब्जे में रखने या वहन करने से इस अधिनियम या किसी अन्य तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा प्रतिषिद्ध है, अथवा (2) विकृत-चित्त का है, अथवा (3) इस अधिनियम के अधीन अनुज्ञप्ति के लिए किसी कारण से अयोग्य है, अथवा (ii) जहां कि अनुज्ञापन प्राधिकारी लोक शांति की सुरक्षा के लिए या लोक क्षेम के लिए ऐसी अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से इनकार करना आवश्यक समझता है । (2) अनुज्ञापन प्राधिकारी किसी भी व्यक्ति को कोई भी अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से केवल इस आधार पर इनकार नहीं करेगा कि ऐसे व्यक्ति के स्वामित्व या कब्जे में पर्याप्त संपत्ति नहीं है । (3) जहां कि अनुज्ञापन प्राधिकारी किसी व्यक्ति को अनुज्ञप्ति देने से इनकार करे वहां वह ऐसे इनकार के लिए कारण लेखन द्वारा अभिलिखित करेगा और उनका संक्षिप्त कथन मांग किए जाने पर उस व्यक्ति को उस दशा के सिवाय देगा जिसमें अनुज्ञापन प्राधिकारी की यह राय हो कि ऐसा कथन देना लोक हित में नहीं होगा । (पैरा 30, 31 और 32)

अब नियमावली के उन उपबंधों पर चर्चा की जाएगी जिनका इस विवाद्यक से संबंध है । नियमावली के नियम 11 में अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए आवेदन और उसकी विषयवस्तु के विषय में उपबंध है ; आवेदन को विभिन्न कानूनी प्रपत्रों के अनुसार प्रस्तुत किया जाना चाहिए, जैसा कि आवेदन की गई अनुज्ञप्ति की श्रेणी के अनुसार प्ररूप क-1 से प्ररूप क-14 तक आवेदन में आवश्यक जानकारी को उन्मुक्त किया जाना चाहिए और आवेदन प्रक्रिया के लिए अपेक्षित समर्थित दस्तावेजों को साथ में प्रस्तुत किया जाना चाहिए । नियम 11 में यह भी कहा गया है कि आवेदक को आवेदन पत्र में कोई भी तथ्यात्मक जानकारी नहीं छिपानी चाहिए या कोई भी गलत जानकारी नहीं देनी चाहिए । प्ररूप-क का कॉलम 18 यह अपेक्षा करता है कि आवेदक को अनुज्ञप्ति प्राप्त करने के विशेष विचार करने के लिए दावों का विवरण देना होगा । नियमावली के नियम 12 में अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाले

अनुज्ञापन प्राधिकारी के दायित्वों का उल्लेख किया गया है । उपबंध में उन व्यक्तियों की श्रेणियों का भी विवरण दिया गया है जिनकी अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन पर विचार किया जा सकता है – कतिपय मामलों में अनुज्ञापन प्राधिकारी की बाध्यताएं (2) अनुज्ञापन प्राधिकारी अनुसूची 1 में प्रवर्ग 1-ख और 1-ग में विनिर्दिष्ट निर्बंधित आयुध या गोला बारूद के लिए किसी अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए आवेदन में निम्नलिखित विचार कर सकेगा – (क) कोई व्यक्ति जो निम्नलिखित कारणों द्वारा उसके जीवन को गंभीर या संभावित संकट है – (i) किसी भौगोलिक क्षेत्र या क्षेत्रों का निवासी जहां उग्रवाद, आतंकवाद या चरमपंथी अत्यधिक सक्रिय है ; या (ii) उग्रवादी, आतंकवादी या चरमपंथियों की दृष्टि में प्रमुख लक्ष्य के रूप में है ; या (iii) उग्रवादियों, आतंकवादियों या चरमपंथियों के लक्ष्यों और उद्देश्यों के लिए विरोधी होने के कारण उसके जीवन को संकट उत्पन्न हो गया है ; या (ख) कोई सरकारी पदधारी जो अपने पद धारण करने के आधार पर उसे या उसके द्वारा पालन किए जा रहे कर्तव्यों के प्रकृति के अनुपालन में और/या अपने पदीय कर्तव्यों के सम्यक् निर्वहन में उसके जीवन में संभावित जोखिम होने का प्राकट्य है ; (ग) कोई संसद् सदस्य या विधानसभा सदस्य जो उग्रवाद रोधी, आतंकवाद रोधी या चरमपंथी रोधी कार्यक्रमों में निकट या सक्रिय रूप से सहबद्ध होने के द्वारा और सरकारी नीतियों या राजनैतिक या अन्यथा मत रखने के कारण उसके जीवन में संभावित जोखिम के लिए प्राकट्य है ; या (घ) कोई व्यक्ति जो अपने कर्तव्यों की प्रकृति या अनुपालन (भूत या वर्तमान) या सरकार में पद धारण करने की स्थिति (भूत या वर्तमान) या अन्यथा कोई ज्ञात या अनुज्ञात के लिए उसके जीवन में कोई संभावित जोखिम में डालता है का कोई कुटुंब का सदस्य या संबंधी या रक्त संबंधी ; या (ङ) कोई व्यक्ति किसी विधिसम्मत या वास्तविक कारणों के लिए अनुज्ञापन प्राधिकारी के लिए समाधान होने पर इस संबंध में सकारण आदेश पारित करेगा : परंतु इस उपनियम के अधीन कोई अनुज्ञप्ति प्रदान करने के पूर्व अनुज्ञापन प्राधिकारी, जिला मजिस्ट्रेट और संबद्ध राज्य सरकार की सिफारिशों पर आधारित और पुलिस रिपोर्ट की परीक्षा पर तथा अपने स्रोत से पृथक् सत्यापन कराने के पश्चात् अपना समाधान होने पर कि आवेदक को ऐसी अनुज्ञप्ति की अपेक्षा है । (3) अनुज्ञापन प्राधिकारी

धारा 13 की उपधारा (3) के खंड (क) में अंतर्विष्ट उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना और अनुसूची 1 में प्रवर्ग 3 में विनिर्दिष्ट अनुज्ञेय आयुध या गोला बारूद के लिए कोई अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए पुलिस रिपोर्ट पर और अपने स्वयं के निर्धारण के आधार पर निम्नलिखित के आवेदन पर विचार कर सकेगा – (क) कोई व्यक्ति जो अपने कारबार, वृत्तिक या धंधा की प्रकृति द्वारा अपने जीवन और/संपत्ति की सुरक्षा की वास्तविक अपेक्षा के लिए ; या (ख) कोई समर्पित खेल व्यक्ति इन नियमों के अधीन अनुज्ञप्ति प्राप्त किसी निशानेबाजी क्लब या किसी राइफल एसोसिएशन का कम से कम दो साल से सक्रिय सदस्य है और जो किसी संरचनात्मक शिक्षण प्रक्रिया में लक्ष्य के अभ्यास के लिए खेल निशानेबाजी को करना चाहता है ; या (ग) रक्षा बलों, केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बल, राज्य पुलिस बल में सेवारत या सेवा की है, कोई व्यक्ति और जिनके जीवन और/या संपत्ति की रक्षा की वास्तविक अपेक्षा है । तारीख 8 नवंबर, 2018 के आदेश में यह उपबंध है कि कुछ पदों के धारकों के अतिरिक्त जिन लोगों को अपने जीवन का संकट है, वे भी आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के उनके आवेदन पर विचार करने के हकदार हैं । तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश के सुसंगत उद्धरण नीचे दिए गए हैं : तदोपरान्त माननीय उच्च न्यायालय, लखनऊ खण्डपीठ लखनऊ के आदेश तारीख 28 नवंबर, 2017 के अनुपालन में जारी शासनादेश सं. 5/2018/रिट-100/छः-पु-5-2018-रिट-401/2012, तारीख 8 नवंबर, 2018 के पैरा 2 के बिन्दु सं. (1) व (2) में नवीन शस्त्र लाइसेंस निर्गत हेतु स्पष्ट किया गया है – बिन्दु सं. – (1) के अनुसार व्यक्तिगत शस्त्र लाइसेंसों की अनुज्ञप्ति जारी करने के सम्बन्ध में आयुध नियमावली, 2016 में वर्णित प्रावधानों के अनुसार आवश्यक कार्यवाही सुनिश्चित की जाए । बिन्दु सं. – (2) के अनुसार व्यक्तिगत शस्त्र लाइसेंसों की अनुज्ञप्ति जारी करते समय निम्नलिखित श्रेणियों के आवेदकों को वरीयता प्रदान की जाए – अपराध पीड़ित, वरासतन, व्यापारी/उद्यमी, बैंक/संस्थागत/वित्तीय संस्थाएं, विभिन्न विभागों के ऐसे कर्मी जो प्रवर्तन कार्य में लगे हैं, सैनिक/अर्धसैनिक/पुलिसबल के कर्मी, एम.एल.ए./एम.एल.सी./एम.पी., राज्य/राष्ट्रीय/ अन्तरराष्ट्रीय स्तर के निशानेबाज । आयुध नियमावली – 2016 के बिन्दु संख्या 12 कतिपय मामलों में अनुज्ञापन प्राधिकारी की बाध्यताओं में उल्लेख किया

गया है कि – (1) अधिनियम में अन्यथा उपबंधित प्रत्येक अनुज्ञापन प्राधिकारी उपनियम (2) या उपनियम (3) में विनिर्दिष्ट मानकों के आवेदन को सम्यक् ध्यान में रखते हुए अनुसूची 1 के क्रमश: प्रवर्ग 1-ख और 1-ग या प्रवर्ग 3 में यथाविनिर्दिष्ट निर्बन्धित या अनुज्ञेय आयुध या गोला बारूद के लिए किसी व्यष्टि को प्रारूप 3 में अनुज्ञप्ति प्रदान करेगा । 18(2) अनुज्ञापन प्राधिकारी अनुसूची 1 में प्रवर्ग 1-ख और 1-ग में विनिर्दिष्ट निर्बन्धित आयुध या गोला बारूद के लिए किसी अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए आवेदन में निम्नलिखित विचार कर सकेगा – (क) अनुज्ञापन प्रधिकारी अनुसूची 1 में प्रवर्ग 1-ख और 1-ग में विनिर्दिष्ट निर्बन्धित आयुध या गोला बारूद के लिए किसी अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए आवेदन में निम्नलिखित विचार कर सकेगा – किसी भौगोलिक क्षेत्र या क्षेत्रों का निवासी जहां उग्रवाद, आतंकवाद या चरमपंथी अत्यधिक सक्रिय है : या उग्रवादी, आतंकवादी या चरमपंथियों की दृष्टि में प्रमुख लक्ष्य के रूप में है : या उग्रवादियों, आतंकवादियों या चरमपंथियों के लक्ष्यों और उद्देश्यों के लिए विरोधी होने के कारण उसके जीवन को खतरा उत्पन्न हो गया है : या (ख) कोई सरकारी पदधारी जो अपने पद धारण करने के आधार पर उसे या उसके द्वारा पालन किए जा रहे कर्तव्यों के प्रकृति के अनुपालन में और/या अपने पदीय कर्तव्यों के सम्यक् निर्वहन में उसके जीवन में संभावित जोखिम होने का प्राकट्य है : (ग) कोई संसद् या विधानसभा सदस्य जो उग्रवाद रोधी, आतंकवाद रोधी या चरमपंथी रोधी कार्यक्रमों में निकट या सक्रिय रूप से सहबद्ध होने के द्वारा और सरकारी नीतियों या राजनैतिक या अन्यथा मत रखने के कारण उसके जीवन में संभावित जोखिम के लिए प्राकट्य है : या (घ) कोई व्यक्ति जो अपने कर्तव्यों की प्रकृति का अनुपालन (भूत या वर्तमान) या सरकार में पद धारण करने की तिथि (भूत या वर्तमान) या अन्यथा कोई ज्ञात या अनुज्ञात के लिए उसके जीवन को कोई संभावित जोखिम में डालता है या कोई कुटुंब का सदस्य या संबंधी या रक्त संबंधी : या (ङ) कोई व्यक्ति किसी विधि सम्मत या वास्तविक कारणों के लिए अनुज्ञापन प्राधिकारी के लिए समाधान होने पर उस सम्बन्ध में सकारण आदेश पारित करेगा : परन्तु इस उपनियम के अधीन कोई अनुज्ञप्ति प्रदान करने के पूर्व अनुज्ञापन प्राधिकारी, जिला मजिस्ट्रेट संबद्ध राज्य सरकार की सिफारिशों पर आधारित और पुलिस रिपोर्ट की

परीक्षा पर तथा अपने स्रोत से पृथक् सत्यापन कराने के पश्चात् अपना समाधान होने पर कि आवेदक को ऐसी अनुज्ञप्ति की अपेक्षा है । अनुज्ञप्ति प्राप्त करने के लिए दावा किए गए विशेष विचार जैसे व्यवसाय, पेशे, नौकरी या अन्य किसी भी प्रकार की प्रकृति से उत्पन्न होने वाले संकट को आवेदक द्वारा आवेदन पत्र में स्पष्ट रूप से कथित करना चाहिए । इसकी विशेष रूप से जांच की जानी चाहिए और पुलिस रिपोर्टों में दर्शित किया जाना चाहिए तथा अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा इसकी गहन परीक्षा की जानी चाहिए । दूषित संकट का मूल्यांकन या जहां पुलिस प्राधिकारी द्वारा विशिष्ट संकटों की अवज्ञा की जाती है, तो अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा इसकी उचित जांच भी की जानी चाहिए । जैसा कि पूर्व में देखा गया है कि अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा तारीख 5 जुलाई, 2021 के आक्षेपित आदेश में यह अभिलिखित है कि याची उन विभिन्न व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं आता है जो अपने पद और अपने द्वारा निर्वहन किए जाने वाले कर्तव्यों के आधार पर आयुध अनुज्ञप्ति का हकदार है । याची के जीवन और संपत्ति के संकट का आकलन पेशेवर पुलिस संस्था द्वारा किया गया था । पुलिस प्राधिकारियों के अनुसार, याची को अपने जीवन और संपत्ति का कोई भी संकट नहीं है । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने याची को आयुध अनुज्ञप्ति देने से इनकार करने की पुलिस प्राधिकारियों की सिफारिश से सहमति जताई । इसके पश्चात् अनुज्ञापन प्राधिकारी ने इस विवाद्यक पर अपनी स्वतंत्र संतुष्टि अभिलिखित की । जांच की उक्त दिशा में अनुज्ञापन प्राधिकारी ने पाया कि याची को आयुध अनुज्ञप्ति की वास्तविक आवश्यकता नहीं थी । न्यायालय ने इन निष्कर्षों के परिणामस्वरूप अनुज्ञापन प्राधिकारी ने आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन को अस्वीकार कर दिया । अनुज्ञापन प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत सामग्री विश्वसनीय प्रकृति की थी । अनुज्ञापन प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत सामग्री जिसमें पुलिस रिपोर्ट और राजस्व प्राधिकरण की रिपोर्ट सम्मिलित है, की विश्वसनीयता पर अधिक्षेप के लिए चुनौती अधिकथित नहीं है । आक्षेपित आदेश में सभी सुसंगत विचारों पर विवेक का उचित प्रयोग किया गया है । अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश सुविचारित है । जिस अनुज्ञप्ति का दावा किया गया था, उसे अभिप्राप्त करने के लिए कोई विशेष आवश्यकता है लेकिन ऐसे अभिवचनों या अभिलेखों से इसकी अपेक्षा

की गई है । एक बिंदु है जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है । याची ने रिट याचिका में अभिवाक् किया है कि वह एक अनाज व्यापारी है और उसने अपना आवेदन पत्र संलग्न किया है । यद्यपि, उक्त आवेदन पत्र में व्यवसाय से संबंधित खंड रिक्त छोड़ दिया गया है । आक्षेपित आदेश पारित करते समय निष्कर्षों में विकृति या प्रक्रियात्मक अनौचित्य, अभिवचनों और अभिलेखों से प्रकट नहीं होता है । अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा दिया गया निष्कर्ष युक्तियुक्त है । आक्षेपित आदेश अधिनियम के आदेश तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश की नियम आवश्यकताओं के अनुरूप है । (पैरा 34, 35, 36, 39, 53, 57, 58, 59 और 60)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	2019 की रिट याचिका सं. 17507 में तारीख 21 मई, 2019 को विनिश्चित : **भूरे सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** ;	3, 44
[2019]	2019 की रिट याचिका सं. 17833 में तारीख 23 मई, 2019 को विनिश्चित : **इंदल सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य ;**	3, 44
[2019]	2019 की रिट याचिका सं. 39541 तारीख 7 दिसंबर, 2019 को विनिश्चित : **कम्मोद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	3, 44
[2019]	2019 की रिट याचिका सं. 29963, तारीख 27 अक्तूबर, 1993 को विनिश्चित : **देवेन्द्र प्रताप सिंह** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट** ;	20
[2014]	2014 (2) ए. डी. जे. 134 : **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह** ;	4, 33, 47

[2013]	2013 की सिविल रिट सं. 64953, तारीख 11 दिसम्बर, 2013 को विनिश्चित : **महिपत सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	45
[2012]	(2012) 76 ए. सी. सी. 457 में प्रकाशित : **अरविंद कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	3, 43
[2012]	2012 की प्रकीर्ण न्यायपीठ सं. 3268, निर्णय तारीख 7 अक्तूबर, 2013 : **जितेन्द्र सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	23
[2011]	(2011) 75 ए. सी. सी. 331 में प्रकाशित : **बृज नंदन सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	3, 43
[2010]	(2010) 69 ए. सी. सी. 490 में प्रकाशित : **राम चन्द्र यादव** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य** ;	3, 42
[2008]	2008 (4) ए. डी. जे. 518 : **हरि शंकर** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	27
[2006]	(2006) 55 ए. सी. सी. 669 : **परवेज अहमद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	28
[1996]	1996 क्रिमनल ला जर्नल 665 : **राणा प्रताप सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	21
[1993]	ए. आई. आर. 1993 इलाहाबाद 291 : **गणेश चंद्र भट्ट** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट** ;	19
[1989]	1989 (87) ए. एल. जे. 23 : **बलराम सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	18

[1985] ए. आई. आर. 1985 इलाहाबाद 291 : **कैलाश नाथ और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य ।** 16

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2021 की सिविल रिट याचिका सं. 21097.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

प्रत्यर्थी की ओर से श्री संजीव कुमार पाण्डेय

याची की ओर से मुख्य स्थायी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति अजय भनोट – याची ने तारीख 3 जुलाई, 2020 और तारीख 7 जून, 2021 के आवेदनों द्वारा अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन किया था ।

2. तारीख 5 जुलाई 2021 के आक्षेपित आदेश द्वारा अनुज्ञापन प्राधिकारी/जिला मैनपुरी ने याची को आयुध अनुज्ञप्ति देने से इनकार कर दिया ।

3. याची के विद्वान् काउंसेल श्री संजीव कुमार पाण्डेय ने दलील दी है कि याची को इस आधार पर आयुध की अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार करना कि याची के जीवन को कोई सन्निकट संकट नहीं है, यह आधार मनमाना और अवैध है । उन्होंने इस न्यायालय द्वारा **अरविंद कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1], **राम चन्द्र यादव** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[2], **बृज नंदन सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[3] वाले मामले में दिए गए निर्णयों के अतिरिक्त इस न्यायालय द्वारा **भूरे सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[4], **इंदल सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[5] और **कम्मोद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[6] वाले मामलों में दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया है ।

---

[1] (2012) 76 ए. सी. सी. 457 में प्रकाशित ।

[2] (2010) 69 ए. सी. सी. 490 में प्रकाशित ।

[3] (2011) 75 ए. सी. सी. 331 में प्रकाशित ।

[4] 2019 की रिट याचिका सं. 17507 में तारीख 21 मई 2019 को विनिश्चित ।

[5] 2019 की रिट याचिका सं. 17833 में तारीख 23 मई, 2019 को विनिश्चित ।

[6] 2019 की रिट याचिका सं. 39541 में तारीख 7 दिसंबर, 2019 को विनिश्चित ।

4. इसके विपरीत विद्वान् अपर मुख्य स्थायी काउंसेल श्री जे. पी. एन. राज ने निवेदन किया है कि याची ने शासनादेश तारीख 8 नवंबर, 2018 में अधिकथित आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के मापदंडों को पूर्ण नहीं किया । इसके अतिरिक्त यह भी दलील दी गई कि याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है, वे इस न्यायालय के विभिन्न एकल न्यायाधीशों द्वारा दिए गए हैं । पूर्वोक्त निर्णयों का अनुपात इस न्ययालय की विद्वान् खंड न्यायपीठ द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह**[1] वाले मामले में अधिकथित विधि के विपरीत हैं । **भूरे सिंह** (उपर्युक्त), **कम्मोद सिंह** (उपर्युक्त) और **इंदल सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् खंड न्यायपीठ के निर्णय को विद्वान् एकल न्यायाधीशों को निर्दिष्ट नहीं किया गया है । याची के मामले के समर्थन में उद्धृत निर्णयों में आयुध अधिनियम और आयुध नियमावली के लागू उपबंधों के साथ-साथ शासनादेश तारीख 8 नवंबर, 2018 पर विचार नहीं किया गया है । विद्वान् एकल न्यायाधीशों द्वारा दिए गए उक्त निर्णय अनवधानता के कारण हैं ।

5. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना गया ।

6. याची द्वारा प्रस्तुत अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन पर कार्रवाई करने के लिए अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा सुसंगत सरकारी विभागों अर्थात् राजस्व और पुलिस प्राधिकारियों से रिपोर्ट मांगी गई थी । उक्त रिपोर्ट तारीख 5 जुलाई, 2021 के आदेश में उद्धृत की गई है ।

7. उप जिलाधिकारी, करहल द्वारा तारीख 27 जनवरी, 2021 को प्रस्तुत रिपोर्ट में यह अभिलिखित है कि आवेदक किसी अपराध से पीड़ित नहीं है तथा वह व्यापारी, उद्योगपति, सेवाकर्मी, अर्धसैनिक बलों का सदस्य, विधानसभा सदस्य, विधान परिषद् सदस्य, सांसद या प्रवर्तन अधिकारी नहीं है । पुलिस प्राधिकारियों की ओर से तारीख 27 जनवरी, 2021 को पुलिस स्टेशन करहल के भारसाधक निरीक्षक द्वारा प्रस्तुत

---

[1] 2014 (2) ए. डी. जे. 134.

रिपोर्ट में प्राख्यान किया गया है कि रजत यादव के विरुद्ध कोई भी आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत नहीं है । आवेदक रजत यादव के संकट की अनुभूति के विश्लेषण पर उक्त पुलिस रिपोर्ट में राय दी गई है कि आवेदक को किसी भी व्यक्ति से जीवन या संपत्ति का कोई संकट नहीं है । आवेदक को अग्न्यायुध रखने की वास्तविक आवश्यकता नहीं है । संबंधित थाने के निरीक्षक की रिपोर्ट को सर्किल अधिकारी, करहल ने अपनी रिपोर्ट तारीख 8 फरवरी, 2021 में विधिवत् रूप से अनुमोदित किया था ।

8. विभिन्न पुलिस कृत्यकारियों द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट से सहमत होने के पश्चात् पुलिस अधीक्षक, मैनपुरी ने सिफारिश की कि आवेदक आयुध अनुज्ञप्ति दिए जाने का हकदार नहीं है ।

9. तारीख 5 जुलाई, 2021 के आक्षेपित आदेश में विभिन्न सक्षम प्राधिकारियों द्वारा प्रस्तुत जांच रिपोर्टों के आलोक में आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए याची की पात्रता की जांच की गई थी । याची किसी पद को धारण करने या विनिर्दिष्ट रूप से अधिकारिक कार्यों का निर्वहन करने के कारण से आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान किए जाने के हकदार व्यक्तियों की विभिन्न श्रेणियों में नहीं आता था, जिससे उसके जीवन को संकट हो ।

10. अनुज्ञापन प्राधिकारी ने तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश को निर्दिष्ट किया है, जिसका स्पष्ट रूप से आधार तत्व यह है कि केवल वे व्यक्ति ही अनुज्ञप्ति प्राप्त करने के हकदार हैं, जिनके जीवन को गंभीर संकट या आसन्न भय है या उनके जीवन को संकट होने की वास्तविक संभावना है । तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश में यह भी अनुध्यात है कि अनुज्ञापन प्राधिकारी को यह सुनिश्चित करना होगा कि ऐसे व्यक्तियों को अनुज्ञप्ति जारी न की जाए जिनको इसकी कोई वास्तविक आवश्यकता नहीं है ।

11. अनुज्ञापन प्राधिकारी ने पुलिस प्राधिकारियों द्वारा प्रस्तुत संकट की अनुभूति वाली रिपोर्टों और राजस्व प्राधिकारियों की सिफारिश से स्वतंत्र रूप से सहमति व्यक्त की थी । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने पाया

था कि याची को अपने जीवन या संपत्ति के लिए किसी भी आसन्न या संभावित संकट का सामना नहीं करना पड़ता है । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने आक्षेपित आदेश में यह अभिलिखित किया था कि याची अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए उक्त शासनादेश में अधिकथित पात्रता के मापदंडों को पूर्ण नहीं करता है और उसे अग्न्यायुध की वास्तविक आवश्यकता नहीं है ।

12. इस तर्क के आधार पर अनुज्ञापन प्राधिकारी ने तारीख 5 जुलाई, 2021 के आदेश द्वारा आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए याची के आवेदन को खारिज कर दिया था ।

13. आधुनिक भारत ने अग्न्यायुध के स्वामित्व के विनियमन का इतिहास विविध रहा है । ब्रिटिश भारत में आयुध विधियों ने अग्न्यायुध के स्वामित्व को चुनिंदा संभ्रांत वर्ग तक सीमित कर दिया था । यहां तक कि महात्मा गांधी भी चाहते थे कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उक्त विभेदकारी विधियों को निरसित कर दिया जाए । स्वतंत्र भारत में संसद् द्वारा अधिनियमित आयुध अधिनियम, 1959 ने अग्न्यायुध के स्वामित्व में अनन्यता को समाप्त कर दिया और आयुध अनुज्ञप्ति को प्रदान करने में पारदर्शिता को पुर:स्थापित किया । लेकिन ध्यान देने वाली बात यह है कि भारतीय संसद् ने अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति को प्रदान करने में कोई उदारता नहीं दिखाई बल्कि निर्बंधनात्मक विधियों की नीति को जारी रखा । आयुध अधिनियम, 1959 सपठित आयुध नियमावली, 2016 अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए पारदर्शी प्रक्रिया को अधिकथित करता है और अग्न्यायुध के स्वामित्व को कड़ाई से विनियमित किया गया है ।

14. समाज में अग्न्यायुध के प्रचलन और राज्य निर्माण पर इसके प्रभाव तथा राज्य भंग के कारण के रूप में इसकी विभिन्न अध्ययनों में परीक्षा की गई है ।

15. बंदूकों के वैश्विक प्रवाह और राज्यों की निष्फलता की घटनाओं पर टिप्पणी करते हुए, प्रताप भानु मेहता लिखते हैं कि "अग्न्यायुध की आपूर्ति मायने रखती है और जब तक इसे नियंत्रित नहीं किया जाता है, यह स्वायत क्रियाशीलता को अर्जित कर लेती है ।

16. आयुध अधिनियम, 1959 के अधीन भारत में आयुध अनुज्ञप्ति धारित करने की निर्बंधनात्मक व्यवस्था को इस न्यायालय के समक्ष संवैधानिक चुनौती का सामना करना पड़ा था । **कैलाश नाथ और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय की पांच न्यायाधीशों की पूर्ण न्यायपीठ को इस प्रश्न का विनिश्चय करना था कि क्या अग्न्यायुध को धारित करना और अर्जित करना, भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की परिधि के भीतर आता है ।

17. **कैलाश नाथ** (उपर्युक्त) वाले मामले में, विद्वान् पांच न्यायाधीशों की पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि आयुध अधिनियम, 1959 के अधीन अग्न्यायुध अर्जित करना और धारित करना एक विशेषाधिकार से ज्यादा कुछ भी नहीं है और इस दलील के विरुद्ध अपना पक्ष रखा कि अग्न्यायुध धारित करना और अर्जित करना, भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में प्राप्त एक मूल अधिकार है । इस प्रकार अभिनिर्धारित किया कि :-

> "3. ...... मेरी राय में, आयुध अधिनियम के अधीन अग्न्यायुधों और गोला बारूद के अर्जन और धारण के लिए अनुज्ञप्ति प्राप्त करना एक विशेषाधिकार से ज्यादा कुछ नहीं है और इस प्रकार के विशेषाधिकार को प्रदान करने में किसी व्यक्ति के अधिकार का न्यायनिर्णयन सम्मिलित नहीं है न ही इसमें सिविल परिणाम सम्मिलित है । तथापि, मैं शीघ्रता से यह जोड़ना चाहूंगा कि अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन को खारिज करने वाला आदेश वैध रूप से भेद्य हो सकता है, यदि इसे मनमाने ढंग से या अनुचित रूप से या बिना विवेक के पारित किया जाता है । निस्संदेह, एक नागरिक अपने शरीर या संपत्ति की रक्षा के उद्देश्य से अग्न्यायुधों की अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन कर सकता है । लेकिन यह कार्य मुख्य रूप से राज्य का है । संविधान के अनुच्छेद 21 की परिधि में इसे दूरस्थ से भी सम्मिलित नहीं किया जा सकता है जो प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण के मूल

---

[1] ए. आई. आर. 1985 इलाहाबाद 291.

अधिकार का आधार तत्व है । यह प्राण से वंचित करने पर विचार करता है, जैसा कि गोपालन **बनाम** मद्रास राज्य [1950] एस. सी. आर. 88 = ए. आई. आर. 1950 एस. सी. 27 वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था । अनुच्छेद 21 केवल पूर्ण हानि के अर्थ में वंचित करने के मामलों में ही लागू होता है और तद्नुसार, यह मात्र स्वतंत्र रूप से अबाध संचरण करने के अधिकार को निर्बाधित करने या अग्न्यायुधों को धारण करने और उनके अर्जन करने के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान करने के मामलों में लागू नहीं होता है जो कि व्यापार या उपजीविका करने की अनुज्ञप्ति से पूर्णत: भिन्न है ।"

18. **बलराम सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने बारंबार दोहराया है कि अग्न्यायुध धारण करने के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान करना केवल राज्य द्वारा दिया जाने वाला एक विशेषाधिकार है :–

"13. इस संबंध में, मामले के दूसरे पहलू की अवहेलना नहीं की जा सकती है । अग्न्यायुध धारण करने के लिए अनुज्ञप्ति प्राप्त करने को केवल एक विशेषधिकार अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए । इसके कोई सिविल परिणाम नहीं होते है । यद्यपि, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि परिणामों का अनुसरण होता है जैसा कि अधिनियम की धारा 4 या 5 के अधीन जारी अनुज्ञप्तियों से संबंधित कार्यवाही में होता है लेकिन लोक शांति या लोक सुरक्षा सबसे सर्वोपरि होती है ....।"

(रेखांकन बल देने के लिए किया गया है ।)

19. तत्पश्चात् उपरोक्त विधिक स्थिति से विचलन हुआ है । अग्न्यायुध रखने के अधिकार की प्रकृति के संबंध में न्यायिक राय में तब मतभेद उत्पन्न हुआ जब **गणेश चंद्र भट्ट** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट**[2] वाले मामले में, इस न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायमूर्ति ने

---

[1] 1989 (87) ए. एल. जे. 23.

[2] ए. आई. आर. 1993 इलाहाबाद 291.

अग्न्यायुध रखने के अधिकार को भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में प्राप्त अधिकार के रूप में अर्थान्यावित किया :–

> "44. मेरी राय में गैर-प्रतिसिद्ध अग्न्यायुध रखने का अधिकार, संविधान के अनुच्छेद 21 का हिस्सा है, क्योंकि इसे अन्यथा अभिनिर्धारित करने का अर्थ अच्छे और शांतिप्रिय नागरिकों को प्रतिरक्षा हीन रखना होगा और अपराधी अच्छी तरह से अग्न्यायुध से सआयुध होंगे । यह पूर्ण रूप से मनमाना और अयुक्तियुक्त होगा । इन दिनों जब विधि और व्यवस्था चरमरा गई है तो केवल एक सआयुध व्यक्ति ही गरिमा और आत्मसम्मान के साथ जीवन जी सकता है । कोई भी अपराधी या गैंगस्टर प्रतिशोध के भय से ऐसे व्यक्ति पर हमला करने या उसे धमकाने की हिम्मत भी नहीं कर सकता है । चूंकि उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 21 में 'जीवन' शब्द का अर्थान्वयन सम्मान के साथ जीवन को अभिनिर्धारित किया गया है (जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है), गैर-प्रतिषिद्ध अग्न्यायुध रखने का अधिकार अनुच्छेद 21 में सम्मिलित समझा जाना चाहिए ।"

20. पूर्वोक्त विवाद्यक पर प्रतिकूल न्यायिक विचार तब सामने आए जब इस न्यायालय की विद्वान् खंड न्यायपीठ ने **देवेन्द्र प्रताप सिंह** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट**[1] वाले मामले में निर्णय दिया तथा यह अभिनिर्धारित किया कि गैर-प्रतिषेधात्मक अग्न्यायुध को रखने का अधिकार, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन नागरिकों में निहित है । **गणेश चंद्र भट्ट** (उपर्युक्त) और **देवेन्द्र प्रताप सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अधिकथित सिद्धांत **कैलाश नाथ** (उपर्युक्त) और **बलराम सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले के अभिनिर्धारणों से भिन्न थे ।

21. परिणामत:, मामले को **राणा प्रताप सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में एक बार पुन: इस न्यायालय की पांच विद्वान् न्यायाधीशों से गठित विशेष न्यायपीठ को विवाद्यक पर एक प्राधिकारपूर्ण निर्णय देने के लिए निर्दिष्ट किया गया ।

---

[1] 2019 की रिट याचिका सं. 29963, तारीख 27 अक्तूबर, 1993 को विनिश्चित ।

[2] 1996 क्रिमिनल ला जर्नल 665.

22. **राणा प्रताप सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, इस न्यायालय के विद्वान् पांच न्यायाधीशों की पूर्ण न्यायपीठ ने **कैलाश नाथ** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की राय को अनिवार्य रूप से अभिपुष्ट किया और यह अभिनिर्धारित किया कि आयुध अधिनियम, 1959 के अधीन अग्न्यायुध को अर्जित करने और कब्जे में रखने के लिए अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्राप्त करना केवल एक विशेषाधिकार है और अग्न्यायुध रखने का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की परिधि में नहीं आता है । **राणा प्रताप सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, निम्नलिखित प्रतिपादित प्रतिपादना ने अंतिम रूप से संविवाद को निपटा दिया :–

> "33. अब आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने से संबंधित संदर्भ पर विचार करते हैं, गणेश चंद्र भट्ट **बनाम** जिला मजिस्ट्रेट, अल्मोड़ा 1993 (30) ए. सी. सी. 204 वाले मामले में न्या. काटजू का निर्णय है, जिसमें विद्वान् न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया था कि गैर-प्रतिषिद्ध अग्न्यायुध रखने का अधिकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का एक भाग है, अतएव, उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 21 में 'जीवन' शब्द को उच्चतम न्यायालय ने गरिमापूर्ण जीवन के रूप में अभिनिर्धारित किया है । इस संबंध में उनका विचार था कि केवल एक सआयुध व्यक्ति ही गरिमापूर्ण जीवन और आत्मसम्मान का जीवन व्यतीत कर सकता है ।
>
> 34. विद्वान् न्यायाधीश ने विधिक प्रतिपादना के रूप में यह अधिकथित किया कि "जब भी किसी गैर-प्रतिषिद्ध आयुध की मंजूरी के लिए आवेदन किया जाता है और यदि तीन माह के भीतर उसका निपटारा नहीं किया जाता है, तो उस आवेदन को तीन माह की अवधि की समाप्ति पर मंजूर कर लिया गया समझा जाएगा ।" इतना ही नहीं, बल्कि, "सभी संबंधित प्राधिकारियों को एक परमादेश भी जारी किया गया था कि जब भी आयुध अधिनियम के अधीन अनुज्ञप्ति के लिए कोई भी आवेदन किया जाता है, तो उसे तीन माह के भीतर प्रक्रियारत और विनिश्चित किया जाना चाहिए तथा गैर – प्रतिषिद्ध अग्न्यायुधों के मामले में अनुज्ञप्ति प्रदान

करना सामान्य नियम होना चाहिए और अनुज्ञप्ति को नामंजूर किया जाना अपवाद होना चाहिए तथा आवेदक को सुने जाने का अवसर प्रदान करने के पश्चात् लिखित रूप में अभिलिखित किए जाने वाले मजबूत कारणों के साथ अनुज्ञप्ति को नामंजूर किया जाना चाहिए तथा अनुज्ञप्ति को नामंजूर करने के ऐसे कारणों को आवेदन किए जाने के तीन माह के भीतर आवेदक को संसूचित किया जाना चाहिए । अनुज्ञप्ति को सामान्य रूप से जिले या राज्य तक निर्बाधित नहीं किया जाना चाहिए सिवाय विशेष कारणों को लिखित रूप में अभिलिखित करके आवेदक को संसूचित किए जाने पर ।"

35. ये दोनों विचार अर्थात् यदि आयुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन पर आवेदन तिथि से तीन माह के भीतर कोई भी आदेश पारित नहीं किया जाता है तो आयुध अनुज्ञप्ति को प्रदान किया गया समझा जाएगा और गैर-प्रतिषिद्ध आयुध रखने का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन प्रत्याभूत अधिकार है, जिसको बाद में तारीख 27 अक्तूबर,1993 को विनिश्चित प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 29963 (देवेन्द्र प्रताप सिंह बनाम जिला मजिस्ट्रेट) में खंड न्यायपीठ द्वारा अनुमोदन से सुनिश्चित किया गया था तथा जिसमें न्यायमूर्ति एम. काटजू सदस्य थे ।

36. न्यायमूर्ति बहुगुणा द्वारा गणेश चंद्र भट्ट, 1993 (30) ए. सी. सी. 204 और **देवेन्द्र प्रताप** (उपर्युक्त) वाले मामले में 1993 की सिविल प्रकीर्ण रिट सं. 29963, तारीख 27 अक्तूबर, में दिए गए निर्णयों के मूलाधार में **अजय सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में पर प्रबल आपत्ति व्यक्त की गई थी और परिणामत: उन्होंने एक बड़ी न्यायपीठ द्वारा उनके पुनर्विचार की ईप्सा की थी ।

37. आयुध अधिनियम के सुसंगत कानूनी उपबंधों के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि आयुध की अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन पर विचार करने के लिए उपबंधों में कोई भी समय सीमा विहित नहीं की गई है तथा न ही इस आशय का कोई भी उपबंध है कि यदि आवेदन पर अंतिम रूप से किसी विशेष

समय सीमा के भीतर निर्णय नहीं लिया जाता है तो अनुज्ञापन प्राधिकारी अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए आबद्ध होगा या यह समझा जाएगा कि अनुज्ञप्ति प्रदान कर दी गई है । इसलिए, हम न्यायमूर्ति विजय बहुगुणा के इस दृष्टिकोण से सहमत हैं कि यदि विधान-मंडल का आशय ऐसा होता तो निस्संदेह अधिनियम में इसके लिए विनिर्दिष्ट उपबंध किए गए होते । प्रत्यक्षत: आयुध अधिनियम के उपबंधों का अर्थ इस प्रकार से नहीं लगाया जा सकता है कि वे मात्र एक विशेष समय अवधि की समाप्ति पर आयुध की अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए कोई आशयित उपबंध प्रदान करते हैं.... ।

38. यह विचार भी उतना ही असंधार्य है जितना कि गैर-प्रतिषिद्ध अग्न्यायुध रखने का अधिकार, संविधान के अनुच्छेद 21 के कार्यक्षेत्र में आता है तथा न ही हम न्यायमूर्ति एम. काटजू द्वारा **गणेश चंद्र भट्ट**, 1993 (30) ए. सी. सी. 204 वाले मामले में स्पष्ट किए गए इस सिद्धांत से सहमत हो सकते हैं कि केवल एक सआयुध व्यक्ति ही गरिमा और आत्मसम्मान का जीवन जी सकता है । जैसा कि **कैलाश नाथ**, 1985 ए. डब्ल्यू. सी. 493 = ए. आई. आर. 1985 इलाहाबाद 291 वाले मामले में ठीक ही अभिनिर्धारित किया गया है, कि आयुध अधिनियम के अधीन अग्न्यायुधों के अर्जन और रखने की अनुज्ञप्ति प्राप्त करना एक विशेषाधिकार से अधिक कुछ नहीं है । इस संबंध में इसके अतिरिक्त मुख्य न्यायमूर्ति एम. एन. शुक्ला ने निष्कर्ष निकाला है कि "इसमें कोई संदेह नहीं है कि कोई नागरिक अपने शरीर या संपत्ति की सुरक्षा के उद्देश्य से अग्न्यायुधों की अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन कर सकता है, लेकिन यह मुख्य रूप से राज्य का कार्य है, इसे संविधान के अनुच्छेद 21 की परिधि को दूर से भी सम्मिलित नहीं किया जा सकता है जो जीवन और दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण के मूल अधिकार का आधार तत्व है । यह जीवन से वंचित करने से संबंधित है और जैसा कि गोपालन **बनाम** मद्रास राज्य, [1950] एस. सी. आर. 88 वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है कि

अनुच्छेद 21 मात्र सम्पूर्ण हानि के भाव में वंचित करने के मामलों पर ही लागू होता है और तद्नुसार, यह मात्र स्वतंत्र रूप से अबाध संचरण करने के अधिकार से है यह निर्बंधन या अग्न्ययुधों के रखने और उनके अर्जन के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान करने के मामले में लागू नहीं होता है, जो किसी व्यापार या उपजीविका को चलाने की अनुज्ञप्ति से पूर्ण रूप से भिन्न आधार पर है ।" **गणेश चंद्र भट्ट**, 1993 (30) ए. सी. सी. 204 वाले मामले में, न्यायमूर्ति एम. के. काटजू ने इस अनुपालन को "अनवधानता के कारण" का लेबल लगाकर किनारे कर दिया था । प्रत्यक्षतः, यह विद्वान् एकल न्यायाधीश के निर्णय का एक सुस्पष्ट दृष्टांत प्रस्तुत करता है । जैसे कि वह कहते हैं कि "पटल के सभी मोहरों को घुमाकर खेल में विजय प्राप्त करने का प्रयास करना" पांच न्यायमूर्तियों की पूर्ण न्यायपीठ के बाध्यकारी निर्णय की इतने स्पष्ट रूप से अवहेलना करना, वह भी केवल यह कहकर कि यह अनवधानता के कारण है, जबकि स्पष्ट रूप से ऐसा नहीं था ।

42. इस प्रकार, यह देखा गया है कि **कैलाश नाथ** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अग्न्यायुध रखने के अधिकार और इसके संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन न आने के संबंध में की गई **समुक्ति** पर मात्र अनवधानता के कारण का लेबल लगा देना विधि और पूर्व निर्णयों पर आधारित नहीं था और इसलिए, यह पूर्ण रूप से अनुचित था, बल्कि यह इस रीति की उत्तम अवस्था का गठन करता है जिसमें अनवधानता के कारण को कभी भी लागू नहीं किया जा सकता है या नहीं किया जाना चाहिए । इसलिए, यह निष्कर्ष निकलता है कि अग्न्यायुध रखने का अधिकार, संविधान के अनुच्छेद 21 की परिधि में नहीं आता है । इस प्रकार, हम पुनः यह अभिनिर्धारित करने के लिए मजबूर हैं कि **गणेश चंद्र भट्ट**, 1993 (30) ए. सी. सी. 204 वाले मामले में और साथ ही देवेन्द्र प्रताप सिंह 1993 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 29963 तारीख 7 अक्तूबर, 1993 वाला मामला ठीक विधि को अभिनिर्धारित नहीं करते हैं और परिणामस्वरूप इन्हें नामंजूर किया जाता है ।"

23. इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **जितेन्द्र सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में, न्यायिक रूप से उत्सव गोलीबारी में की गई अनेक निर्दोष व्यक्तियों की हत्या, समाज में अग्न्यायुध का प्रसार तथा सार्वजनिक रूप से सामाजिक प्रतिष्ठा के रूप में अग्न्यायुध का प्रदर्शन करने की अवेक्षा की है ।

24. इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने **जितेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, नागरिकों को स्वतंत्र रूप से आयुध देने के परिणामों के सूक्ष्म विवरण दिया है कि :–

> "तथापि, प्रमुख सचिव, गृह ने आज एक शपथपत्र प्रस्तुत किया है, जो अत्याधिक चौंकाने वाली स्थिति को प्रदर्शित करता है । प्रमुख सचिव, गृह के अनुसार, उत्तर प्रदेश राज्य में 11,02,113 व्यक्तियों को 11,22,844 आयुध अनुज्ञप्ति जारी किए गए हैं । अनुज्ञप्ति धारकों को 11,04,701 आयुध जारी किए गए हैं जिनमें से एसबीबीएल के लिए 3,81,966 और डीबीबीएल बंदूकों के लिए 3,36,954 अनुज्ञप्ति जारी किए गए हैं । राइफल के लिए 1,68,669 अनुज्ञप्ति, रिवाल्वर के लिए 1,49,065 पिस्तौल के लिए 54,035 स्पोर्ट गन के लिए 96, कार्बाइन के लिए 525 और अन्य आयुध के लिए 13,882 अनुज्ञप्ति जारी किए गए हैं ।
>
> इसके अतिरिक्त यह कथित किया गया है कि उत्तर प्रदेश में 35,698 व्यक्तियों के पास दो आयुध अनुज्ञप्ति हैं, 5959 व्यक्तियों के पास तीन अनुज्ञप्ति हैं और 55 व्यक्तियों के पास तीन से अधिक आयुध अनुज्ञप्ति हैं । शपथपत्र के पैरा 8 में कथित किया गया है कि 5730 ऐसे व्यक्तियों के पास आयुध अनुज्ञप्ति हैं जिनके विरुद्ध आपराधिक विचारण लंबित है जबकि 1061 ऐसे व्यक्तियों के पास अनुज्ञप्ति हैं जिनके विरुद्ध विभिन्न पुलिस थानों में मामले रजिस्ट्रीकृत है ।
>
> उपरोक्त आंकड़े भयावह हैं ।

---

[1] 2012 की प्रकीर्ण न्यायपीठ सं. 3268 निर्णय तारीख 7 अक्तूबर, 2013.

बाद में, यह निवेदन किया गया है कि राज्य में अनुज्ञप्ति धारकों की कुल संख्या पुलिस बल के पास उपलब्ध आयुध से कहीं अधिक है । राज्य पुलिस के 2.13 लाख कर्मियों में से कुल 2.25 लाख आयुध उनके पास हैं । इस प्रकार, निजी नागरिकों के पास राज्य पुलिस बल की तुलना में पांच गुणा अधिक आयुध है । इसमें अप्राधिकृत आयुध के आंकड़े सम्मिलित नहीं हैं ।

एनसीआरबी के आंकड़ों का हवाला देते हुए बाद में इसके अतिरिक्त कथित किया गया कि देश में गोलीबारी से होने वाली आधी से अधिक हत्याएं उत्तर प्रदेश में होती हैं । आयुध अनुज्ञप्ति के लिए लंबित आवेदनों की संख्या अभिलेख पर नहीं है । यह बताया गया है कि अकेले लखनऊ जिले में आयुध अनुज्ञप्ति के लिए लगभग 50 हजार आवेदन लंबित हैं ।

अनुभव से पता चलता है कि आयुध अनुज्ञप्ति मात्र अपनी प्रतिष्ठा को प्रदर्शित करने के लिए उपाप्त किए जाते हैं, क्योंकि यह वैभव - प्रतीक बन गया है । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि आयुध की अनुज्ञप्ति कोई अधिकार नहीं है बल्कि यह राज्य के पास उपलब्ध वैधानिक विशेषाधिकार है । समाज का इस हद तक शस्त्रीकरण करना खतरे की घंटी बजाता है । वास्तव में, राज्य ज्वालामुखी पर बैठा है । 525 कार्बाइन समेत लाइसेंसी आयुध के साथ आपराधिक पृष्ठभूमि वाले बड़ी संख्या में व्यक्ति समाज की शांति और व्यवस्था के लिए गंभीर संकट उत्पन्न करते हैं ।

मुख्य सचिव द्वारा दिए गए आंकड़ों से पता चलता है कि 41,000 से अधिक व्यक्तियों के पास एक से अधिक अनुज्ञप्ति हैं। 55 व्यक्तियों के पास तीन से अधिक अनुज्ञप्ति हैं, जबकि आयुध अधिनियम की धारा 2(3) के अधीन यह संख्या तीन तक ही सीमित है यह स्पष्ट नहीं है कि तीन से अधिक आयुध रखने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध राज्य सरकार ने क्या कार्रवाई की है ।

पुलिस बल के पास 2,25,000 आयुध हैं तथा बड़ी संख्या में अवैध आयुध के साथ उत्तर प्रदेश के नागरिकों के पास 11,00,000

से अधिक प्राधिकृत आयुध हैं, जिससे विधि और व्यवस्था को कायम रखना स्वाभाविक रूप से अपघटन की ओर ले जाने वाला है ।"

25. इस न्यायालय ने **जितेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अनुज्ञप्ति प्रदान करने को विनियमित करने में राज्य की असमर्थता पर संदेह व्यक्त किया था :-

"यह स्थापित करने के लिए कोई भी साक्ष्य नहीं है, कि नागरिकों के शस्त्रीकरण से स्थिति में कोई भी सुधार हुआ है । वैसे भी विधि और व्यवस्था को कायम रखना राज्य का सबसे बड़ा कर्तव्य है और लोगों का शस्त्रीकरण इसका विकल्प नहीं है । वास्तव में, राज्य अपने नागरिकों की सुरक्षा की आवश्यकता के कारण अस्तित्व में आया है । राज्य की इस अनावश्यक और अनुत्पादक उदारता को विनियमित करने के लिए प्रत्यर्थियों की ओर से कोई भी प्रस्ताव सामने नहीं आया है ।"

26. **जितेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, समाज का पूर्ण रूप से शस्त्रीकरण करने के विस्तार और इसके "व्यापक हानिकर प्रभाव" को अभिलिखित करने के पश्चात् राज्य सरकार को आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने और आयुध अनुज्ञप्ति रखने वाले आपराधिक पूर्ववृत्त वाले व्यक्तियों के विरुद्ध कार्रवाई के संबंध में एक नीति तैयार करने का निदेश दिया गया था ।

27. **हरि शंकर** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में, इस न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा व्यक्त की गई कुछ समरूप चिंताओं का उल्लेख करना भी उपयुक्त होगा :-

"7. आयुध अधिनियम में अग्न्यायुध के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान करने की प्रक्रिया का उपबंध है । यदि अनुज्ञापन प्राधिकारी अधिनियम की धारा 13(3)(ग) के अधीन संतुष्ट है कि अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन करने वाले व्यक्ति के पास अनुज्ञप्ति प्राप्त करने

---

[1] 2008 (4) ए. डी. जे 518.

के लिए उचित कारण हैं, तो वह अनुज्ञप्ति प्रदान कर सकता है । ऐसे मामले में जिला अधिकारी की व्यक्ति-निष्ठ संतुष्टि को किसी निश्चित नियम के अधीन नहीं रखा जा सकता है ।

8. न्यायालय ने इस तथ्य का न्यायिक संज्ञान लिया है कि उत्तर प्रदेश में लाखों की संख्या में अग्न्यायुधों की अनुज्ञप्ति को मांगे जाने वाले व्यक्तियों की अविवेकी मांग को स्वीकार करके दिया गया है, जिनमें राजनीतिक दलों से जुड़े लोग और लंबे आपराधिक इतिहास वाले व्यक्ति भी सम्मिलित हैं । न्यायालय ने इस तथ्य का भी न्यायिक संज्ञान लिया है कि अग्न्यायुधों की अनुज्ञप्ति रखने वाले व्यक्ति इन अग्न्यायुधों को विद्यालय, महाविद्यालय, चिकित्सालय, न्यायालय, रेलवे प्लेटफार्म और अन्य स्थानों सहित सार्वजनिक स्थानों पर खुले तौर पर प्रदर्शित कर रहे हैं, जिससे समाज में भय की भावना उत्पन्न होती है । अग्न्यायुध रखना समाज में बलपूर्वक सम्मान और शक्ति प्राप्त करने का स्रोत बन गया है ।

9. अनुज्ञापन प्राधिकारियों ने उस प्रत्येक व्यक्ति को अनुज्ञप्ति दे दी है जो उनके पास अग्न्यायुध के लिए आवेदन करता है । इस प्रकार की लापरवाह कार्यकारी कार्रवाई से समाज में नागरिकों के शांतिपूर्ण अस्तित्व को संकट है । प्राय: यह पाया जाता है कि अनुज्ञापन प्राधिकारियों अपनी शक्तियों का प्रयोग उन उद्देश्यों के लिए नहीं करते हैं जिनके लिए उन्हें यह अधिकार प्रदान किया गया है ।

10. किसी व्यक्ति को अपनी आत्मरक्षा या अपनी संपत्ति की रक्षा के लिए अनुज्ञप्ति की आवश्यकता हो सकती है । व्यक्ति के कार्य की प्रकृति के कारण भी उसे अग्न्यायुध रखने की आवश्यकता हो सकती है । ऐसे सभी मामलों में विशेष परिस्थितियों को बनाने वाले तथ्यों की अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा जांच की जानी चाहिए । इन परिस्थितियों को किसी वस्तुनिष्ठ परीक्षण की परिधि में रखने की आवश्यकता नहीं है । ऐसे मामले भी हो सकते हैं, जहां कोई व्यक्ति किसी जघन्य अपराध का साक्षी हो और उसे धमकी दी गई

हो या उसके व्यवसाय की प्रकृति के कारण उसे अग्न्यायुध रखने की आवश्यकता हो । अनुज्ञप्ति प्रदान करने से पूर्व अनुज्ञापन प्राधिकारी को व्यक्ति की पृष्ठभूमि और चरित्र तथा ऐसे व्यक्ति के लिए आवश्यक अग्न्यायुध के प्रकार को भी दृष्टिगत करना चाहिए। यह तथ्य कि कोई व्यक्ति ठेकेदार हैं और उसका कोई अविनिर्दिष्ट शस्त्रु है, अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है ।

11. रिट याचिका इस मताभिव्यक्ति के साथ खारिज की जाती है कि राज्य सरकार सभी अनुज्ञप्ति प्राधिकारियों को अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए आयुध अधिनियम के उपबंधों का कड़ाई से पालन करने के लिए आवश्यक निदेश जारी करेगी और सभी अनुज्ञप्ति प्राधिकारियों के लिए ऐसे अनुज्ञप्ति प्रदान करने या विद्यमान अनुज्ञप्तियों के नवीनीकरण के लिए अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर पर्याप्त और विशेष कारण को बताना बाध्यकारी करेगी ।"

28. **परवेज अहमद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में इस प्रकार का मत व्यक्त किया गया है ।

29. अब आयुध अधिनियम, 1959 और आयुध नियमावली, 2016 के आयुध अनुज्ञप्ति को प्रदान करने/इनकार करने से संबंधित सुसंगत उपबंधों की जांच करने के लिए प्रक्रम तैयार है ।

30. अग्न्यायुधों के अर्जन और धारण के विषय में विधायी आशय की निर्बंधनात्मक प्रकृति को आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 3(1) में स्पष्ट किया गया है, जिसमें यह उपबंध किया गया है कि कोई भी व्यक्ति तब तक कोई अग्न्यायुध या गोला-बारूद अर्जित नहीं करेगा, अपने कब्जे में नहीं रखेगा या साथ नहीं रखेगा, जब तक कि उसके पास आयुध अधिनियम, 1959 और उसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अनुसार जारी अनुज्ञप्ति न हो । अनुज्ञप्ति देने से संबंधित उपबंध अधिनियम के अध्याय III में अन्तर्विष्ट है ।

---

[1] (2006) 55 ए. सी. सी. 669.

31. अधिनियम की धारा 13 अनुज्ञप्ति प्रदान करने की रीति से संबंधित है और इसे नीचे पुनः प्रस्तुत किया जाता है :-

"13. **अनुज्ञप्तियों का अनुदान** – (1) अध्याय 2 के अधीन अनुज्ञप्ति के अनुदान के लिए आवेदन अनुज्ञापन प्राधिकारी को दिया जाएगा और वह ऐसे प्ररूप में होगा, उसमें ऐसी विशिष्टियां अन्तर्विष्ट होंगी और उसके साथ ऐसी फीस होगी, यदि कोई हों, जैसा या जैसी विहित किया जाए या की जाए ।

[(2) आवेदन की प्राप्ति पर अनुज्ञापन प्राधिकारी उस आवेदन पर निकटतम पुलिस थाने के भारसाधक आफिसर से रिपोर्ट मंगवाएगा और ऐसा ऑफिसर विहित समय के भीतर अपनी रिपोर्ट भेजेगा ।

(2क) अनुज्ञापन प्राधिकारी, ऐसी जांच यदि कोई हो, करने के पश्चात्, जैसी वह आवश्यक समझे और उपधारा (2) के अधीन प्राप्त रिपोर्ट पर विचार करने के पश्चात्, इस अध्याय के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए लिखित आदेश द्वारा अनुज्ञप्ति या तो अनुदत्त करेगा या अनुदत्त करने से इनकार करेगा :

परंतु जहां निकटतम पुलिस थाने का भारसाधक ऑफिसर आवेदन पर विहित समय के भीतर अपनी रिपोर्ट नहीं भेजता है, वहां यदि अनुज्ञापन प्राधिकारी ठीक समझे तो वह विहित समय के अवसान के पश्चात्, उस रिपोर्ट की और प्रतीक्षा किए बिना, ऐसा आदेश कर सकेगा ।]

(3) अनुज्ञापन प्राधिकारी –

(क) धारा 3 के अधीन अनुज्ञप्ति वहां अनुदत्त करेगा, जहां कि वह अनुज्ञप्ति –

(i) संरक्षा या आखेट में उपयोग में लाए जाने के लिए बीच इंच से अन्यून लंबी नाल वाली चिकने बोर की बंदूक के संबंध में या सफल संरक्षा के लिए सद्भावपूर्वक उपयोग में लाई जाने के लिए नालमुख से भरी जाने वाली बंदूक के संबंध में भारत के नागरिक द्वारा

अपेक्षित की जाए : परन्तु जहां कि किसी मामले की परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए अनुज्ञापन प्राधिकारी का समाधान हो जाए कि नालमुख से भरी जाने वाली बन्दूक फसल संरक्षा के लिए पर्याप्त न होगी, वहां अनुज्ञापन प्राधिकारी ऐसा संरक्षा के लिए यथापूर्वोक्त किसी अन्य चिकने बोर की बंदूक के संबंध में अनुज्ञप्ति अनुदत्त कर सकेगा, अथवा

(ii) केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुज्ञप्तया मान्यताप्राप्त राइफल क्लब या राइफल संगम के सदस्य द्वारा निशाना लगाने का अभ्यास करने में उपयोग में लाई जाने के लिए प्वाइंट 22 बोर राइफल या हवाई राइफल के संबंध में अपेक्षित की जाए;

(ख) किसी अन्य मामले में धारा 3 के अधीन की अनुज्ञप्ति या धारा 4, धारा 5, धारा 6, धारा 10 या धारा 12 के अधीन की अनुज्ञप्ति उस दशा में अनुदत्त करेगा, जिसमें अनुज्ञापन प्राधिकारी को समाधान हो जाए कि उस व्यक्ति के पास जिसके द्वारा अनुज्ञप्ति अपेक्षित है, उसे अभिप्राप्त करने के लिए अच्छा कारण है ।

32. अधिनियम की धारा 14 में अनुज्ञप्ति देने से इनकार करने का उपबंध है तथा धारा 14 में इस प्रकार से कहा गया है :-

"14. **अनुज्ञप्तियां देने से इनकार करना** - (1) धारा 13 में किसी बात के होते हुए भी, अनुज्ञापन प्राधिकारी -

(क) धारा 3, धारा 4 या धारा 5 के अधीन अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से वहां इनकार करेगा, जहां कि ऐसी अनुज्ञप्ति किन्हीं प्रतिषिद्ध गोला बारूद के बारे में अपेक्षित हो ;

(ख) अध्याय 2 के अधीन किसी अन्य मामले में अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से वहां इनकार करेगा, -

(i) जहां कि ऐसी अनुज्ञप्ति उस व्यक्ति द्वारा अपेक्षित है, जिसके बारे में अनुज्ञापन प्राधिकारी के पास यह विश्वास करने का कारण है कि वह –

(1) किसी आयुध या गोला बारूद को अर्जित करने, अपने कब्जे में रखने या वहन करने से इस अधिनियम या किसी अन्य तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा प्रतिषिद्ध है, अथवा

(2) विकृत-चित्त का है, अथवा

(3) इस अधिनियम के अधीन अनुज्ञप्ति के लिए किसी कारण से अयोग्य है, अथवा

(ii) जहां कि अनुज्ञापन प्राधिकारी लोक शांति की सुरक्षा के लिए या लोक क्षेम के लिए ऐसी अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से इनकार करना आवश्यक समझता है ।"

(2) अनुज्ञापन प्राधिकारी किसी भी व्यक्ति को कोई भी अनुज्ञप्ति अनुदत्त करने से केवल इस आधार पर इनकार नहीं करेगा कि ऐसे व्यक्ति के स्वामित्व या कब्जे में पर्याप्त संपत्ति नहीं है ।

(3) जहां कि अनुज्ञापन प्राधिकारी किसी व्यक्ति को अनुज्ञप्ति देने से इनकार करे वहां वह ऐसे इनकार के लिए कारण लेखन द्वारा अभिलिखित करेगा और उनका संक्षिप्त कथन मांग किए जाने पर उस व्यक्ति को उस दशा के सिवाय देगा जिसमें अनुज्ञापन प्राधिकारी की यह राय हो कि ऐसा कथन देना लोक हित में नहीं होगा ।"

33. अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने और इनकार करने के लिए आयुध अधिनियम, 1959 के उपबंधों की योजना का विश्लेषण इस न्यायालय के विद्वान् खंड न्यायपीठ द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह**[1] वाले मामले में इस प्रकार से किया गया था :–

[1] (2014) 2 ए. डी. जे. 134.

"16(3) ......धारा 14 की उपधारा (1) का खंड (क) इस प्रकार उपदर्शित करता है कि वह धारा 3, धारा 4 या धारा 5 के अधीन अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार कर दिया जाएगा, जहां किसी प्रतिषिद्ध आयुध या प्रतिषिद्ध गोला बारूद के संबंध में इसकी आवश्यकता है । अध्याय-2 के अधीन किसी अन्य मामले में वहां अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार कर दिया जाएगा । जहां पर, अनुज्ञापन प्राधिकारी के पास यह मानने का कारण है कि जिस व्यक्ति को अनुज्ञप्ति की आवश्यकता है, उसे अधिनियम या किसी अन्य विधि द्वारा किसी आयुध या गोला बारूद को प्राप्त करने, अपने कब्जे में रखने या अर्जित करने से प्रतिषिद्ध किया गया है ; या वह मानसिक रूप से अस्वस्थ है या अधिनियम के अधीन अनुज्ञप्ति के लिए किसी भी कारण से आयोग्य है । इस प्रकार वहां अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार कर दिया जाएगा, जहां अनुज्ञापन प्राधिकारी लोक शांति या लोक सुरक्षा के लिए ऐसे अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार करना आवश्यक समझता है, दूसरे शब्दों में, धारा 14 का प्रभाव परिस्थितियों की एक सूचीपत्र प्रदान करना है जिसमें धारा 13 में किसी भी बात के होते हुए भी, अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार कर दिया जाएगा । इसका अर्थ यह नहीं है कि अन्य सभी मामलों में अनुज्ञप्ति आवश्यक रूप से प्रदान की जानी चाहिए । धारा 14 में उन आधारों का उल्लेख है, जब अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार कर दिया जाएगा, लेकिन अन्यथा भी, धारा 13 के अधीन अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाला प्राधिकारी यह अवधारित करने के लिए सभी सुसंगत तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के लिए बाध्य है, कि अनुज्ञप्ति को प्रदान किया जाना चाहिए या नहीं । उन मामलों में जो धारा 14 की परिधि में आते हैं, अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाले प्राधिकारी को अनुज्ञप्ति को प्रदान करने से इनकार करना ही होगा ।"

34. अब नियमावली के उन उपबंधों पर चर्चा की जाएगी जिनका इस विवाद्यक से संबंध है ।

35. नियमावली के नियम 11 में अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए

आवेदन और उसकी विषयवस्तु के विषय में उपबंध है । आवेदन को विभिन्न कानूनी प्रपत्रों के अनुसार प्रस्तुत किया जाना चाहिए, जैसा कि आवेदन की गई अनुज्ञप्ति की श्रेणी के अनुसार प्ररूप क-1 से प्ररूप क-14 तक आवेदन में आवश्यक जानकारी को उन्मुक्त किया जाना चाहिए और आवेदन प्रक्रिया के लिए अपेक्षित समर्थित दस्तावेजों को साथ में प्रस्तुत किया जाना चाहिए । नियम 11 में यह भी कहा गया है कि आवेदक को आवेदन पत्र में कोई भी तथ्यात्मक जानकारी नहीं छिपानी चाहिए या कोई भी गलत जानकारी नहीं देनी चाहिए । प्ररूप-क का कॉलम 18 यह अपेक्षा करता है कि आवेदक को अनुज्ञप्ति प्राप्त करने के विशेष विचार करने के लिए दावों का विवरण देना होगा ।

अनुसूची III

भाग II

आवेदन पत्र

प्ररूप क-1

(व्यक्तियों के लिए)

प्ररूप II, III और IV में आयुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन के प्ररूप

(नियम II देखें)

18	अनुज्ञप्ति प्राप्त करने के लिए विशेष प्रतिफल के दावे, यदि कोई हो (दस्तावेजी साक्ष्य संलग्न करें)	

घोषणा –

मैं एतद्द्वारा घोषणा करता हूं कि आवेदन में दिए गए उपरोक्त विवरण मेरे सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार सत्य, पूर्ण और सही हैं । मैं समझता हूं कि किसी भी प्रक्रम पर कोई भी जानकारी झूठी या गलत पाए जाने की स्थिति में, मेरे विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है और आयुध अधिनियम, 1959 तथा आयुध नियम, 2016 और अन्य

केन्द्रीय अधिनियमों या वर्तमान में लागू विधि के सुसंगत उपबंधों के अधीन कार्यवाही की जा सकती है ।

स्थान ....

तारीख ....

आवेदक के हस्ताक्षर/अंगूठे का निशान

36. नियमावली के नियम 12 में अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाले अनुज्ञापन प्राधिकारी के दायित्वों का उल्लेख किया गया है । उपबंध में उन व्यक्तियों की श्रेणियों का भी विवरण दिया गया है जिनकी अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन पर विचार किया जा सकता है :-

"12. **कतिपय मामलों में अनुज्ञापन प्राधिकारी की बाध्यताएं** – (2) अनुज्ञापन प्राधिकारी अनुसूची 1 में प्रवर्ग 1-ख और 1-ग में विनिर्दिष्ट निर्बंधित आयुध या गोला बारूद के लिए किसी अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए आवेदन में निम्नलिखित विचार कर सकेगा –

(क) कोई व्यक्ति जो निम्नलिखित कारणों द्वारा उसके जीवन को गंभीर या संभावित संकट है –

(i) किसी भौगोलिक क्षेत्र या क्षेत्रों का निवासी जहां उग्रवाद, आतंकवाद या चरमपंथी अत्यधिक सक्रिय है ; या

(ii) उग्रवादी, आतंकवादी या चरमपंथियों की दृष्टि में प्रमुख लक्ष्य के रूप में है ; या

(iii) उग्रवादियों, आतंकवादियों या चरमपंथियों के लक्ष्यों और उद्देश्यों के लिए विरोधी होने के कारण उसके जीवन को संकट उत्पन्न हो गया है ; या"

(ख) कोई सरकारी पदधारी जो अपने पद धारण करने के आधार पर उसे या उसके द्वारा पालन किए जा रहे कर्तव्यों के प्रकृति के अनुपालन में और/या अपने पदीय कर्तव्यों के सम्यक् निर्वहन में उसके जीवन में संभावित जोखिम होने का प्राकट्य है ;

(ग) कोई संसद् सदस्य या विधानसभा सदस्य जो उग्रवाद रोधी, आतंकवाद रोधी या चरमपंथी रोधी कार्यक्रमों में निकट या सक्रिय रूप से सहबद्ध होने के द्वारा और सरकारी नीतियों या राजनैतिक या अन्यथा मत रखने के कारण उसके जीवन में संभावित जोखिम के लिए प्राकट्य है ; या

(घ) कोई व्यक्ति जो अपने कर्तव्यों की प्रकृति या अनुपालन (भूत या वर्तमान) या सरकार में पद धारण करने की स्थिति (भूत या वर्तमान) या अन्यथा कोई ज्ञात या अनुज्ञात के लिए उसके जीवन में कोई संभावित जोखिम में डालता है का कोई कुटुंब का सदस्य या संबंधी या रक्त संबंधी ; या

(ङ) कोई व्यक्ति किसी विधिसम्मत या वास्तविक कारणों के लिए अनुज्ञापन प्राधिकारी के लिए समाधान होने पर इस संबंध में सकारण आदेश पारित करेगा :

परंतु इस उपनियम के अधीन कोई अनुज्ञप्ति प्रदान करने के पूर्व अनुज्ञापन प्राधिकारी, जिला मजिस्ट्रेट और संबद्ध राज्य सरकार की सिफारिशों पर आधारित और पुलिस रिपोर्ट की परीक्षा पर तथा अपने स्रोत से पृथक् सत्यापन कराने के पश्चात् अपना समाधान होने पर कि आवेदक को ऐसी अनुज्ञप्ति की अपेक्षा है ।

(3) अनुज्ञापन प्राधिकारी धारा 13 की उपधारा (3) के खंड (क) में अंतर्विष्ट उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना और अनुसूची 1 में प्रवर्ग 3 में विनिर्दिष्ट अनुज्ञेय आयुध या गोला बारूद के लिए कोई अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए पुलिस रिपोर्ट पर और अपने स्वयं के निर्धारण के आधार पर निम्नलिखित के आवेदन पर विचार कर सकेगा –

(क) कोई व्यक्ति जो अपने कारबार, वृत्तिक या धंधे की प्रकृति द्वारा अपने जीवन और/संपत्ति की सुरक्षा की वास्तविक अपेक्षा के लिए; या

(ख) कोई समर्पित खेल व्यक्ति इन नियमों के अधीन अनुज्ञप्ति प्राप्त किसी निशानेबाजी खेल क्लब या किसी राइफल

एसोसिएशन का कम से कम दो साल से सक्रिय सदस्य है और जो किसी संरचनात्मक शिक्षण प्रक्रिया में लक्ष्य के अभ्यास के लिए खेल निशानेबाजी को करना चाहता है; या

(ग) रक्षा बलों, केन्द्रीय सशस्त्र पुलिस बल, राज्य पुलिस बल में सेवारत या सेवा की है, कोई व्यक्ति और जिनके जीवन और/या संपत्ति की रक्षा की वास्तविक अपेक्षा है ।

37. अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों में आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने की व्यवस्था की व्याख्या इस न्यायालय द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में निम्निलिखित रीति से की गई थी :–

"16. .... अनुज्ञप्ति प्रदान करने पर विचार करते समय, प्राधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह ऐसे तथ्यों पर विचार करे जो आवेदक के लिए निजी हो सकते हैं, साथ ही अनुज्ञप्ति प्रदान करने से दूसरों की सुरक्षा और बचाव पर पड़ने वाले उस प्रभाव पर भी विचार करे, जो अनुज्ञप्ति को प्रदान करने से प्रभावित हो सकते हैं । अंततः, शासकीय परीक्षण यह है कि क्या विधि और व्यवस्था तथा लोक शांति या सुरक्षा बनाए रखने का लोक हित अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने से बढ़ेगा या बाधित होगा ।

17. इस प्रकार से, अधिनियम और नियमावली की योजना यह दर्शाती है कि अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए प्रस्तुत आवेदनों पर विनिश्चय करते समय अनुज्ञापन प्राधिकारी को व्यापक विवेकाधिकार दिया गया है और इस व्यापक सामान्य विभक्ति को स्वीकार करना संभव नहीं है जिसका विद्वान् एकल न्यायमूर्ति ने समर्थन किया है ।

18. निश्चित रूप से, अधिनियम के अनुज्ञप्ति उपबंध यह अपेक्षा करते हैं कि सक्षम प्राधिकारी को अनुज्ञप्ति प्रदान करने या इनकार करने की शक्ति का प्रयोग मनमाने ढंग से या मनमर्जी से नहीं, बल्कि न्यायसंगत और अच्छे कारणों से करना चाहिए । विधि और व्यवस्था तथा सार्वजनिक शांति और सुरक्षा को बनाए रखना

राज्य की जिम्मेदारी है । अग्न्यायुध के लिए अनुज्ञप्ति प्रदान करना अधिनियम में निहित अनुज्ञप्ति उपबंधों द्वारा शासित होता है । कोई भी नागरिक अग्न्यायुध रखने के अधिकार का दावा नहीं कर सकता है । प्रत्येक मामले में जहां अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए आवेदन किया जाता है । प्राधिकारी यह जांच करने के लिए बाध्य है कि अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए पर्याप्त आधार बनता है या नहीं । कानूनी प्राधिकारियों को जो विवेकाधिकार दिया जाता है, उसे निश्चित श्रेणियों तक सीमित नहीं किया जा सकता है ।"

38. यद्यपि **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले को नियमावली से पूर्व ही लाया गया था । तथापि, नियमावली की योजना को दृष्टिगत करते हुए **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विधि की व्याख्या संशोधित नियमों पर भी लागू होती है ।

39. तारीख 8 नवंबर, 2018 के आदेश में यह उपबंध है कि कुछ पदों के धारकों के अतिरिक्त जिन लोगों को अपने जीवन का संकट है, वे भी आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के उनके आवेदन पर विचार करने के हकदार हैं । तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश के सुसंगत उद्धरण नीचे दिए गए हैं :–

"तदोपरान्त माननीय उच्च न्यायालय, लखनऊ खण्डपीठ लखनऊ के आदेश तारीख 28 नवंबर, 2017 के अनुपालन में जारी शासनादेश सं. 5/2018/रिट-100/छः-पु-5-2018-रिट-401/2012, तारीख 8 नवंबर, 2018 के पैरा 2 के बिन्दु सं. (1) व (2) में नवीन शस्त्र लाइसेंस निर्गत हेतु स्पष्ट किया गया है –

बिन्दु सं. – (1) के अनुसार व्यक्तिगत शस्त्र लाइसेंसों की अनुज्ञप्ति जारी करने के सम्बन्ध में आयुध नियमावली, 2016 में वर्णित प्रावधानों के अनुसार आवश्यक कार्यवाही सुनिश्चित की जाए ।

बिन्दु सं. – (2) के अनुसार व्यक्तिगत शस्त्र लाइसेंसों

की अनुज्ञप्ति जारी करते समय निम्नलिखित श्रेणियों के आवेदकों को वरीयता प्रदान की जाए –

1. अपराध पीड़ित ।

2. वरासतन ।

3. व्यापारी/उद्यमी ।

4. बैंक/संस्थागत/वित्तीय संस्थाएं ।

5. विभिन्न विभागों के ऐसे कर्मी जो प्रवर्तन कार्य में लगे हैं ।

6. सैनिक/अर्धसैनिक/पुलिस बल के कर्मी ।

7. एम.एल.ए./एम.एल.सी./एम.पी. । 18

8. राज्य/राष्ट्रीय/अन्तरराष्ट्रीय स्तर के निशानेबाज ।

आयुध नियमावली – 2016 के बिन्दु संख्या 12 कतिपय मामलों में अनुज्ञापन प्राधिकारी की बाध्यताओं में उल्लेख किया गया है कि – (1) अधिनियम में अन्यथा उपबंधित प्रत्येक अनुज्ञापन प्राधिकारी उपनियम (2) या उपनियम (3) में विनिर्दिष्ट मानकों के आवेदन को सम्यक् ध्यान में रखते हुए अनुसूची 1 के क्रमश: प्रवर्ग 1-ख और 1-ग या प्रवर्ग 3 में यथाविनिर्दिष्ट निर्बन्धित या अनुज्ञेय आयुध या गोला बारूद के लिए किसी व्यष्टि को प्रारूप 3 में अनुज्ञप्ति प्रदान करेगा ।

18(2) अनुज्ञापन प्राधिकारी अनुसूची 1 में प्रवर्ग 1-ख और 1-ग में विनिर्दिष्ट निर्बन्धित आयुध या गोला बारूद के लिए किसी अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए आवेदन में निम्नलिखित विचार कर सकेगा – (क) अनुज्ञापन प्रधिकारी अनुसूची 1 में प्रवर्ग 1-ख और 1-ग में विनिर्दिष्ट निर्बन्धित आयुध या गोला बारूद के लिए किसी अनुज्ञप्ति को प्रदान करने के लिए आवेदन में निम्नलिखित विचार कर सकेगा –

(I) किसी भौगोलिक क्षेत्र या क्षेत्रों का निवासी जहां उग्रवाद, आतंकवाद या चरमपंथी अत्यधिक सक्रिय है ; या

(II) उग्रवादी, आतंकवादी या चरमपंथियों की दृष्टि में प्रमुख लक्ष्य के रूप में है ; या

(III) उग्रवादियों, आतंकवादियों या चरमपंथियों के लक्ष्यों और उद्देश्यों के लिए विरोधी होने के कारण उसके जीवन को खतरा उत्पन्न हो गया है ; या

(ख) कोई सरकारी पदधारी जो अपने पद धारण करने के आधार पर उसे या उसके द्‌वारा पालन किए जा रहे कर्तव्यों के प्रकृति के अनुपालन में और/या अपने पदीय कर्तव्यों के सम्यक् निर्वहन में उसके जीवन में संभावित जोखिम होने का प्राकट्‌य है ;

(ग) कोई संसद् या विधानसभा सदस्य जो उग्रवाद रोधी, आतंकवाद रोधी या चरमपंथी रोधी कार्यक्रमों में निकट या सक्रिय रूप से सहबद्ध होने के द्‌वारा और सरकारी नीतियों या राजनैतिक या अन्यथा मत रखने के कारण उसके जीवन में संभावित जोखिम के लिए प्राकट्‌य है ; या

(घ) कोई व्यक्ति जो अपने कर्तव्यों की प्रकृति का अनुपालन (भूत या वर्तमान) या सरकार में पद धारण करने की तिथि (भूत या वर्तमान) या अन्यथा कोई ज्ञात या अनुज्ञात के लिए उसके जीवन में कोई संभावित जोखिम में डालता है या कोई कुटुंब का सदस्य या संबंधी या रक्त संबंधी ; या

(ङ) कोई व्यक्ति किसी विधिसम्मत या वास्तविक कारणों के लिए अनुज्ञापन प्राधिकारी के लिए समाधान होने पर उस सम्बन्ध में सकारण आदेश पारित करेगा :

परन्तु इस उपनियम के अधीन कोई अनुज्ञप्ति प्रदान करने के पूर्व अनुज्ञापन प्राधिकारी, जिला मजिस्ट्रेट संबद्ध राज्य सरकार की सिफारिशों पर आधारित और पुलिस रिपोर्ट की परीक्षा पर तथा अपने स्रोत से पृथक् सत्यापन कराने के पश्चात् अपना समाधान होने पर कि आवेदक के ऐसी अनुज्ञप्ति की अपेक्षा है ।”

40. अधिनियम की योजना सपठित नियमावली तथा तारीख 8 नवंबर, 2018 का शासनादेश और **जितेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के अभिनिर्धारणों के उत्तर प्रदेश राज्य में आयुध अनुज्ञप्ति की एक ऐसी रूपरेखा बनाती है जो प्रकृति में अनुज्ञेय नहीं है, बल्कि इसके संचालन में निर्बंधनात्मक है ।

41. याची के विद्वान् काउंसेल श्री संजीव कुमार पांडे द्वारा न्यायालय में उद्धृत किए गए निर्णय इस न्यायालय के एकल न्यायमूर्ति द्वारा दिए गए हैं और उन पर पूर्ण विचार किए जाने की आवश्यकता है ।

42. **राम चन्द्र यादव** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में विद्वान् एकल न्यायमूर्ति ने निम्नलिखित राय व्यक्त की :–

> "9. आक्षेपित आदेश के परिशीलन से दर्शित होता है कि प्रतिवादी सं. 2 जिन आधारों पर याची को अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार किया है, वे है कि याची का कोई शत्रु नहीं है, याची को अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति रखने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं थी और याची को अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति की वास्तविक आवश्यकता नहीं थी । याची को अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए आक्षेपित आदेश में दिए गए कारण अधिनियम की धारा 14 में दिए किसी भी आधार के अधीन नहीं आते हैं, जिसके आधार पर अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार किया जा सकता है । मेरी राय में प्रतिवादी सं. 2 अधिनियम की धारा 14 के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए याची के आवेदन पर विचार करने और विनिश्चय करने में असफल रहा है और याची के आवेदन को मनमाने ढंग से खारिज किया है, जिससे उसका आदेश पूर्ण रूप से असंधार्य हो जाता है ।"

---

[1] 2010 (69) ए. सी. सी. 490 में प्रकाशित ।

43. **अरविंद कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] तथा **बृज नंदन सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में विद्‌वान् एकल न्यायमूर्ति द्‌वारा वैयक्तिक क्षेम और सुरक्षा के लिए अग्न्यायुध रखने को भारत के संविधान के अधीन जीवन और स्वतंत्रता के मूल अधिकार को साकार करने की एक रीति के रूप में व्याख्यापित किया गया था । **अरविंद कुमार** (उपर्युक्त) और **बृज नंदन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्‌वान् एकल न्यायमूर्ति के अभिनिर्धारण समरूप शब्दों में है और नीचे उद्धृत किए गए हैं :–

> "20. केवल संदेह और अनुमान के आधार पर तथा उस कानून के उद्देश्य को समझे बिना जिस कानून के अधीन शक्ति का प्रयोग किया जा रहा है, अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार नहीं किया जा सकता है । जीवन और स्वतंत्रता का अधिकार जिसकी परिधि में किसी व्यक्ति की सुरक्षा और संरक्षा का अधिकार सम्मिलित है तथा ऐसी सुरक्षा और संरक्षा के लिए आवश्यक साधनों को पाना, अपनाना और उनका पालन करना प्रत्येक व्यक्ति का मूल अधिकार है । वैयक्तिक क्षेम और संरक्षा के उद्देश्य से अग्न्यायुध रखना संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन स्वयं की सुरक्षा और जीवन तथा स्वतंत्रता के मूल अधिकार का आनंद लेने का प्रकार है । विधि और व्यवस्था को कायम रखने के हित में ऐसे अधिकार पर कुछ युक्तियुक्त निर्बंधन लगाए गए हैं, लेकिन इससे मूल अधिकार कार्यकारी प्राधिकारियों की अनियमितताओं पर निर्भर नहीं हो जाएगा । यह सरकार द्‌वारा किसी व्यक्ति को दिया जाने वाला विशेषाधिकार नहीं है, बल्कि केवल उस सीमा तक है, जहां किसी व्यक्ति को अग्न्यायुध की अनुज्ञप्ति प्रदान किए जाने से समाज में शांति और सौहार्द सहित विधि और व्यवस्था को कायम रखने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा या उसका प्रदर्शन होगा । साधारणतया ऐसे अधिकार से इनकार नहीं किया जाएगा । इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय ने मत व्यक्त किया है कि

---

[1] (2012) 76 ए. सी. सी. 457 में प्रकाशित ।

[2] (2011) 75 ए. सी. सी. 331 में प्रकाशित ।

अग्न्यायुध की अनुज्ञप्ति प्रदान करना सामान्यत: एक कार्यवाही है और इनकार करना अपवाद है । विनोद कुमार शुक्ला **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (रिट याचिका सं. 38645/2011) जिसे तारीख 15 जुलाई, 2011 को विनिश्चित किया गया था, में इस न्यायालय ने कहा है –

> 'जब वैयक्तिक क्षेम के लिए अग्न्यायुध प्रदान किया जाता है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि कई व्यक्तियों के कुटुंब में केवल एक ही अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति किया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त, यह आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार करने का कारण नहीं हो सकता है । अग्न्यायुध को केवल तभी अस्वीकार किया जा सकता है जब आवेदक द्वारा बताए गए कारण या आवेदन में उनके द्वारा दिए गए विवरण ठीक नहीं पाए जाते हैं, लेकिन मात्र इसलिए कि कुटुंब के किसी सदस्य के पास पूर्व से ही एक अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति है, उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता है । अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करना साधारणतया एक कार्रवाई होनी चाहिए और इससे इनकार करना अपवाद होना चाहिए । नीचे के प्राधिकारियों का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से मनमाना और अवैध है । इसमें कानून के उद्देश्य और लक्ष्य का भी अभाव है ।'

44. **भूरे सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1], **इंदल सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** और **एक अन्य**[2], **कम्मोद** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[3] वाले मामले में संबंधित विद्वान् एकल न्यायमूर्तियों द्वारा दिए गए निर्णयों में इस आधार पर अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन को अस्वीकार करने के विवाद्यक पर विचार किया गया था कि आवेदक को किसी संकट की धारणा नहीं है । **राम चंद्र यादव** (उपर्युक्त) और **बृज नंदन सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय

---

[1] 2019 की सिविल रिट सं. 17507, तारीख 21 मई, 2019 को विनिश्चित ।

[2] 2019 की सिविल रिट सं. 17833, तारीख 23 मई, 2019 को विनिश्चित ।

[3] 2019 की सिविल रिट सं. 39541 में तारीख 7 दिसम्बर, 2019 को विनिश्चित ।

के निर्णयों के पश्चात् **भूरे सिंह** (उपर्युक्त), **इंदल सिंह** (उपर्युक्त) और **कम्मोद सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में न्यायमूर्तियों ने इस आधार पर आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार को अवैध कर दिया था कि याची के विरुद्ध कोई भी संकट की प्रत्याशा नहीं थी । इस प्रकार, सभी पूर्वोक्त निर्णयों में अनुज्ञप्ति प्राधिकारियों को अधिकार दिया गया है :–

> "उपर्युक्त विचार को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के याची के आवेदन को अस्वीकार करने के लिए उल्लिखित कोई भी आधार आयुध अधिनियम की धारा 14 के अधीन नहीं आता है । जिला मजिस्ट्रेट, मैनपुरी द्वारा पारित तारीख 27 अप्रैल, 2019 के आदेश को अभिखंडित किया जाता है ।
>
> अनुज्ञापन प्राधिकारी को निदेश दिया जाता है कि वह याची द्वारा ईप्सित अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति को इस आवेदन की प्रति प्रस्तुत करने की तारीख से तीन सप्ताह के भीतर जारी करें ।
>
> रिट याचिका मंजूर की जाती है ।"

45. यही विवाद **महिपत सिंह** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में विद्वान् एकल न्यायमूर्ति के समक्ष विचार के लिए आया था जिसमें भी अनुज्ञापन प्राधिकारी ने अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन को एकमात्र आधार पर खारिज कर दिया था कि याची के जीवन को संकट की कोई अनुभूति नहीं है । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने इस तार्किकता को गलत अभिनिर्धारित करते हुए **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, विद्वान् एकल न्यायमूर्ति ने कथित किया कि :–

> "न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार के लिए ऐसी अनुज्ञप्ति प्रदान की जा सकती है जिसमें किसी व्यक्ति की सुरक्षा और संरक्षा का अधिकार भी सम्मिलित है,

[1] 2013 की सिविल रिट सं. 64953 में तारीख 11 दिसम्बर, 2013 को विनिश्चित ।

जो उसका मूल अधिकार है । याची व्यक्तिगत सुरक्षा और संरक्षा के उद्देश्य से अग्न्यायुध प्राप्त करने का हकदार था । न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि जिला मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश अनुमान और अटकलों पर आधारित था ।

इस निर्देश के बावजूद, जिला मजिस्ट्रेट ने तारीख 6 जनवरी, 2012 के आदेश द्वारा पुन: आवेदन को खारिज कर दिया था, जिसमें कहा गया था कि याची को अपने जीवन का कोई संकट नहीं है......

न्यायालय ने पाया कि रिट न्यायालय द्वारा तारीख 11 अक्तूबर, 2011 को दिए गए निर्णय में की गई टिप्पणियों का जिला मजिस्ट्रेट द्वारा पालन नहीं किया गया है । जिला मजिस्ट्रेट ऐसी टिप्पणियों से बंधे हुए थे और ऐसी टिप्पणियों को अनदेखा नहीं कर सकते । ऐसी टिप्पणियों को अनदेखा करके जिला मजिस्ट्रेट, न्यायालय की अवमानना के दोषी हो गए ।

इस मामले में, जिला मजिस्ट्रेट ने बिना किसी विवेक के और रिट न्यायालय की टिप्पणियों पर विचार किए बिना ही यंत्रवत् रूप से एक आदेश पारित कर दिया है, जिसमें याची के अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन को केवल इस आधार पर खारिज कर दिया गया है कि याची के जीवन को कोई संकट नहीं है । प्रत्यर्थी द्वारा अपनाया गया ऐसा तर्क स्पष्ट रूप से गलत हैं और आयुध अधिनियम की धारा 14 के उपबंधों के विरुद्ध हैं । अन्यथा भी न्यायालय को लगता है कि याची को अपने जीवन के संकट को दर्शाने के लिए पर्याप्त कारण पत्रावली पर आ चुके हैं, जब उसके सगे भाई की कुछ हमलावरों द्वारा हत्या कर दी गई थी और यह अपने आप में एक पर्याप्त आधार हैं । यह आवश्यक नहीं है कि याची जिला मजिस्ट्रेट को उन व्यक्तियों के नाम बताए जिनसे इसे संकट है । याची के लिए कारणों को बताना ही पर्याप्त है ।"

46. **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में, विद्वान् एकल

न्यायमूर्ति के निर्णय को राज्य द्वारा अपील में आगे चुनौती दी गई और इसे 2014 की विशेष अपील सं. 62, **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह**[1] वाले मामले में, विद्वान् खंड न्यायपीठ ने **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में दिए गए विद्वान् एकल न्यायमूर्ति के निर्णय को अपास्त कर दिया और रिट याचिका को खारिज कर दिया था ।

47. **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् न्यायपीठ ने पाया कि जिला मजिस्ट्रेट ने उचित रूप से अनुमानित किया कि प्रतिवादी के जीवन और स्वतंत्रता को कोई भी संकट नहीं था और जिला मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्ष गलत नहीं थे :–

> "22. हमारे विचार में, जिला मजिस्ट्रेट ने उचित रूप से यह अनुमान लगाया है कि प्रतिवादी के जीवन और स्वतंत्रता को कोई संकट नहीं था क्योंकि ऐसी जानकारी का खुलासा जिला मजिस्ट्रेट को यह निर्णय लेने में सक्षम बनाने के लिए आवश्यक था कि प्रतिवादी को अनुज्ञप्ति प्रदान करने का मामला बनता था या नहीं । जिला मजिस्ट्रेट ने 29 अगस्त, 2013 को आदेश पारित करते हुए यह भी देखा कि जिस घटना में प्रतिवादी के भाई की हत्या हुई थी, वह घटना 2007 में हुई थी जो लगभग छह वर्ष पूर्व की बात है और प्रतिवादी ने इस बात को दर्शित करने के लिए कोई भी सामग्री पेश नहीं की कि छह वर्ष से अधिक की इस अवधि के दौरान अब उसके जीवन को किसी संकट की आशंका का अनुमान लगाने का कोई आधार या नींव थी । इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि जिला मजिस्ट्रेट द्वारा किए गए निष्कर्ष गलत हैं ।
>
> 23. विद्वान् एकल न्यायमूर्ति ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जिला मजिस्ट्रेट के पास जो कारण हैं, वे स्पष्ट रूप से गलत हैं और अधिनियम की धारा 14 के उपबंधों के विरुद्ध है । विद्वान्

[1] 2014 (2) ए. डी. जे. 134.

एकल न्यायमूर्ति का यह निष्कर्ष सही नहीं है । क्या किसी नागरिक की सुरक्षा को संकट है, यह एक ऐसा मामला है, जिस पर अनुज्ञापन प्राधिकारी को विचार करना होगा । विद्वान् एकल न्यायमूर्ति ने संकट की धारणा के विषय में अपनी राय को जिला मजिस्ट्रेट की राय से प्रतिस्थापित करके गलती की है । हमें यह भी जोड़ना चाहिए कि ऐसे मामले में जहां किसी लोक प्राधिकारी को अग्न्यायुध रखने की अनुज्ञप्ति प्रदान करने या अस्वीकार करने का विवेकाधिकार प्रदान किया जाता है तो वहां पर न्यायिक समीक्षा का दायरा सीमित होता है । न्यायालय को इस पर विचार करना होगा कि क्या प्राधिकरण द्वारा कोई असंगत या बाहरी विचार को ध्यान में रखा गया है और यदि इसकी अवज्ञा की गई है तो उसने सुसंगत, वैध और समुचित मामलों की अनदेखी की है । वर्तमान मामले की तरह जहां पर सुसंगत परिस्थितियों पर विचार किया गया है और बाहरी विचारों को महत्व नहीं दिया गया है तो अपनी राय को अनुज्ञापन प्राधिकारी की राय से प्रतिस्थापित करना न्यायालय की न्यायिक समीक्षा की परिधि से बाहर होगा । विद्वान् एकल न्यायमूर्ति द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं थी ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

24. पूर्वोक्त कारणों से हमारा मत है कि जिला मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश स्पष्ट रूप से विधि के अनुरूप था और संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं था ।

48. **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् खंड न्यायपीठ ने इस न्यायालय के उच्च प्राधिकारियों का अवलंब यह दोहराने के लिए लिया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदान किए गए जीवन और मूल अधिकार अग्न्यायुध रखने के अधिकार को अपने में सम्मिलित नहीं करता है ।

49. पिछले विवरण से जो विधिक स्थिति आसुत की जा सकती, वह यही है । **राम चंद्र यादव** (उपर्युक्त), **भूरे सिंह** (उपर्युक्त), **इंदल सिंह** (उपर्युक्त) और **महीपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामलों में, विद्वान् एकल न्यायाधीशों ने अनिवार्य रूप से अभिनिर्धारित किया है कि आवेदक को जीवन और संपत्ति के लिए किसी भी प्रकार के संकट का सामना नहीं करने के आधार पर आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने से इनकार करना मनमाना और अवैध था । उक्त निर्णयों ने अनुज्ञापन प्राधिकारी को अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए परमादेशित किया । इन निर्णयों से यह भी पता चलता है कि जब अनुज्ञापन प्राधिकारी को लगता है कि आवेदक के जीवन और संपत्ति के लिए कोई संकट नहीं है तो उसके पास आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने से मना करने का विकल्प नहीं है ।

50. आयुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदक के पक्ष में बनाए गए अधिकार को वस्तुत: अनुज्ञापन प्राधिकारी में विधि द्वारा निहित विवेकाधिकार को नकारते हैं । विधायी अधिनियमों और सरकारी नीति द्वारा अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए बनाई गई निर्बंधानात्मक शर्तें न्यायालय निर्णयों में समर्पित उदार व्यवस्था के आगे झुक गई । विद्वान् एकल न्यायाधीशों द्वारा अभिलिखित किए गए उक्त निर्णयों द्वारा बनाई गई विधि की इस स्थिति, को **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् खंड न्यायपीठ द्वारा प्रतिपादित विधि के सिद्धांत को उलट दिया गया था ।

51. **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् खंड न्यायपीठ ने अपने निर्णय द्वारा अनुज्ञापन प्राधिकारी के विवेक को बहाल किया जो उसे विधि और नीति द्वारा दिया गया था । ऐसे मामलों में न्यायिक समीक्षा के सीमित दायरे को दोहराया गया है । सक्षम प्राधिकारियों द्वारा किए गए संकट के आकलन को प्राथमिकता दी जाती है । अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति के लिए आवेदक के जीवन और स्वतंत्रता के लिए संकट की अनुपस्थिति, अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति को स्वीकार करने का एक वैध और विधिपूर्ण कारण हो सकता है । एक अनुक्रम के रूप में, वास्तविक आवश्यकता की कमी के

परिणामस्वरूप अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति से इनकार किया जा सकता है । अग्न्यायुध अनुज्ञप्ति रखने की मात्र इच्छा अग्न्यायुध रखने की वास्तविक आवश्यकता से भिन्न है । यह बाद की आवश्यकता है जिसकी अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा जांच की जानी चाहिए ।

52. यद्यपि **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में के निर्णय को इस बात पर बल देते हुए संकुचित कर दिया गया कि अनुज्ञापन प्राधिकारी के विवेक का मनमाने ढंग से प्रयोग नहीं किया जा सकता है । प्राधिकारी के किसी गलत या अवैध निर्णय की न्यायिक समीक्षा की जा सकती है ।

53. ये व्याख्यात्मक उदाहरण मददगार होंगे । अनुज्ञप्ति प्राप्त करने के लिए दावा किए गए विशेष विचार जैसे व्यवसाय, पेशे, नौकरी या अन्य किसी भी प्रकार की प्रकृति से उत्पन्न होने वाले संकट को आवेदक द्वारा आवेदन पत्र में स्पष्ट रूप से कथित करना चाहिए । इसकी विशेष रूप से जांच की जानी चाहिए और पुलिस रिपोर्टों में दर्शित किया जाना चाहिए तथा अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा इसकी गहन परीक्षा की जानी चाहिए । दूषित संकट का मूल्यांकन या जहां पुलिस प्राधिकारी द्वारा विशिष्ट संकटों की अवज्ञा की जाती है, तो अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा इसकी उचित जांच भी की जानी चाहिए ।

54. अग्न्यायुध के लिए आवेदन अस्वीकार करने वाले आदेश में सभी सुसंगत आधारों पर समुचित विचार किया जाना चाहिए ।

55. **राम चंद्र यादव** (उपर्युक्त), **भूरे सिंह** (उपर्युक्त), **इंदल सिंह** (उपर्युक्त), **कम्मोद** (उपर्युक्त), **बृज नंदन** (उपर्युक्त), **अरविंद कुमार** (उपर्युक्त), **कैलाश नाथ** (उपर्युक्त) और **राणा प्रताप** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् एकल न्यायाधीशों द्वारा दिए गए निर्णय **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) में विद्वान् खंड न्यायपीठ द्वारा अधिकथित विधि के विपरीत है । **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **महिपत सिंह** वाले मामले में दिए गए विद्वान् खंड न्यायपीठ के निर्णय, आयुध अधिनियम, 1959 के सुसंगत उपबंध, लागू आयुध नियम और तारीख 8

नवंबर, 2018 के शासनादेश को **भूरे सिंह**, (उपर्युक्त) **इंदल सिंह**, (उपर्युक्त) **कम्मोद सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् एकल न्यायाधीश को दर्शित नहीं किए गए थे । इसलिए उक्त सभी एकल न्यायमूर्तियों के निर्णय अन्वधानता के कारण है और पूर्व निर्णय का गठन नहीं करते हैं ।

56. अब इस आक्षेपित आदेश पर इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों द्वारा सिद्ध ऊपर वर्णित विधिक और संवैधानिक पूर्वेक्षित के प्रकाश में विचार किया जाएगा ।

57. जैसा कि पूर्व में देखा गया है कि अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा तारीख 5 जुलाई, 2021 के आक्षेपित आदेश में यह अभिलिखित है कि याची उन विभिन्न व्यक्तियों की श्रेणी में नहीं आता है जो अपने पद और अपने द्वारा निर्वहन किए जाने वाले कर्तव्यों के आधार पर आयुध अनुज्ञप्ति का हकदार है । याची के जीवन और संपत्ति के संकट का आकलन पेशेवर पुलिस संस्था द्वारा किया गया था । पुलिस प्राधिकारियों के अनुसार, याची को अपने जीवन और संपत्ति का कोई भी संकट नहीं है । अनुज्ञापन प्राधिकारी ने याची को आयुध अनुज्ञप्ति देने से इनकार करने की पुलिस प्राधिकारियों की सिफारिश से सहमति जताई । इसके पश्चात् अनुज्ञापन प्राधिकारी ने इस विवाद्यक पर अपनी स्वतंत्र संतुष्टि अभिलिखित की । जांच की उक्त दिशा में अनुज्ञापन प्राधिकारी ने पाया कि याची को आयुध अनुज्ञप्ति की वास्तविक आवश्यकता नहीं थी ।

58. न्यायालय ने इन निष्कर्षों के परिणामस्वरूप अनुज्ञापन प्राधिकारी ने आयुध अनुज्ञप्ति प्रदान करने के आवेदन को अस्वीकार कर दिया ।

59. अनुज्ञापन प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत सामग्री विश्वसनीय प्रकृति की थी । अनुज्ञापन प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत सामग्री जिसमें पुलिस रिपोर्ट और राजस्व प्राधिकरण की रिपोर्ट सम्मिलित है, की विश्वसनीयता पर अधिक्षेप के लिए चुनौती अधिकथित नहीं है ।

आक्षेपित आदेश में सभी सुसंगत विचारों पर विवेक का उचित प्रयोग किया गया है ।

60. अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश सुविचारित है । जिस अनुज्ञप्ति का दावा किया गया था, उसे अभिप्राप्त करने के लिए कोई विशेष आवश्यकता है लेकिन ऐसे अभिवचनों या अभिलेखों से इसकी अपेक्षा की गई है । एक बिंदु है जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है । याची ने रिट याचिका में अभिवाक् किया है कि वह एक अनाज व्यापारी है और उसने अपना आवेदन पत्र संलग्न किया है । यद्यपि, उक्त आवेदन पत्र में व्यवसाय से संबंधित खंड रिक्त छोड़ दिया गया है । आक्षेपित आदेश पारित करते समय निष्कर्षों में विकृति या प्रक्रियात्मक अनौचित्य, अभिवचनों और अभिलेखों से प्रकट नहीं होता है । अनुज्ञापन प्राधिकारी द्वारा दिया गया निष्कर्ष युक्तियुक्त हैं । आक्षेपित आदेश अधिनियम के आदेश तारीख 8 नवंबर, 2018 के शासनादेश के नियम आवश्यकताओं के अनुरूप है । आक्षेपित आदेश इस न्याय की खंड न्यायपीठ द्वारा **जितेन्द्र सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि और **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** बनाम **महिपत सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में विद्वान् खंड न्यायपीठ के निर्णय के अनुरूप है ।

61. तारीख 5 जुलाई, 2021 के आक्षेपित आदेश में कोई भी त्रुटि नहीं है ।

62. रिट याचिका खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

अम./क.

सुरेश एस. (श्री)

बनाम

श्रीमती लक्ष्मी

(2017 की एम. एफ. ए. संख्या 9126)

तारीख 23 अगस्त, 2021

न्यायमूर्ति (श्रीमती) बी. वी. नागरत्ना और न्यायमूर्ति पी. कृष्णा भट्ट

कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 (1984 का 66) – धारा 19(1) [सपठित हिन्दू विवाह अधिनियम, 1956 की धारा 13ख(1)] – अपील – आपसी सहमति से विवाह-विच्छेद की अर्जी – विवाह असुधार्य स्तर पर पहुंच जाना – पक्षकारों के बीच सुलह की कोई सम्भावना नहीं – यदि हिन्दू विवाह के पक्षकारों का विवाह असुधार्य स्तर पर पहुंच गया हो और सुलह होने की कोई सम्भावना नहीं है और यदि विवाह के दोनों पक्षकारों द्वारा आपसी सहमति से विवाह-विच्छेद कराने की अर्जी दी जाती है तो उसे मंजूर किया जा सकता है ।

वर्तमान मामले में, इन अपीलों को हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13ख(1) (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) के अधीन पक्षकारों द्वारा फाइल अर्जी पर विचार करने के लिए सूचीबद्ध किया गया है, क्योंकि पक्षकारों ने उक्त अर्जी को अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन एक आवेदन के साथ पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा उनके विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए फाइल की गई थी । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – दोनों पक्षकारों ने अपनी स्वतंत्र अभिलाषा और इच्छा तथा स्वेच्छा से यह समझौता किया है । समझौता कराने के लिए किसी के भी द्वारा किसी प्रपीड़न या बल का उपयोग नहीं किया गया है । इस कारण से, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों प्रार्थना करते हैं कि यह माननीय न्यायालय, न्यायहित और साम्या में, उपरोक्त समझौता अर्जी के संदर्भ

में एस. एच. के. कल्याण मंडप, बेंगलुरु में अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच तारीख 11 मई, 2008 को अनुष्ठापित, उनके विवाह का विघटन करने की कृपा कर सकता है । उक्त अर्जी का परिशीलन करने पर यह उल्लिखित होता है कि प्रत्यर्थी/पत्नी को स्थायी निर्वाहिका और अप्राप्तवय पुत्र के भरणपोषण के संदाय के अतिरिक्त, यह सहमति हुई है कि अप्राप्तवय पुत्र प्रत्यर्थी/पत्नी की अभिरक्षा में रहेगा जो अप्राप्तवय पुत्र मास्टर जीवन की शिक्षा और पालन पोषण के लिए जिम्मेदार होगी । अपीलार्थी/पति के लिए कोई भी मिलने का अधिकार आरक्षित नहीं रखा गया है (जैसा कि पूर्व में ही उल्लेख किया गया है कि अपीलार्थी ने दोनों मांगदेय ड्राफ्ट के निबन्धनों में प्रत्यर्थी को 10,00,000/- रुपए (केवल दस लाख रुपए) संदत्त किया है । पक्षकारों ने अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन अनुध्यात छह माह की कानूनी अवधि में छूट की ईप्सा करते हुए, एक संयुक्त आवेदन भी फाइल किया है । उक्त आवेदन पक्षकारों के संयुक्त शपथपत्र के द्वारा समर्थित है । संबंधित पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि पक्षकारों का विवाह तारीख 11 मई, 2008 को हुआ था । यह कि उनके द्वारा अर्जियां वर्ष 2010 और 2014 में फाइल की गई थीं और उन अर्जियों को वर्ष 2017 में निपटाया गया था तथा वर्ष 2010 से पक्षकार अलग-अलग अर्थात् लगभग 11 वर्षों से अलग रह रहे हैं । यह कि पक्षकारों के मध्य मतभेदों के सुलह की कोई संभावना नहीं है और न ही पक्षकारों के मध्य सहवास की कोई भी संभावना है, अतएवं, अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन अनुध्यात छह माह की कानूनी अवधि में छूट की ईप्सा करने वाले पक्षकारों द्वारा फाइल आवेदन को मंजूर किया जा सकता है । न्यायालय ने आवेदन और उसके समर्थन में फाइल शपथपत्र का परिशीलन किया है और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि पक्षकार पिछले ग्यारह वर्षों से अलग-अलग रह रहे हैं और उनके बीच मतभेदों के सुलह की कोई भी संभावना नहीं है और न ही सहवास की भी संभावना है परिणामस्वरूप, अधिनियम की धारा 13ख(1) के अधीन पक्षकारों द्वारा फाइल अर्जी को मंजूर किया जाता है । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य तारीख 11 मई, 2008 को एस. एच. के कल्याण मंडप,

बेंगलुरु में अनुष्ठापित विवाह को पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विघटित कर दिया जाता है । इन परिस्थितियों में, द्वितीय अपर प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा 2014 की एस. सी. सं. 2444 से संबंधित 2010 की एम. सी. सं. 3794 में पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है । प्रत्यर्थी ने अप्राप्तवय पुत्र मास्टर जीवन के भरणपोषण के लिए संदाय की गई 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) की राशि को किसी भी डाकघर या राष्ट्रीयकृत बैंक में तब तक जमा रखेगी जब तक कि अप्राप्तवय पुत्र मास्टर जीवन वयस्क नहीं हो जाता है । तथापि, प्रत्यर्थी उक्त जमा पर सामयिक ब्याज प्राप्त करने और अप्राप्तवय पुत्र के कल्याण के लिए उस सामयिक ब्याज का उपयोग करने की हकदार होगी । (पैरा 7, 8, 9, 10, 11, 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2017]	(2017) 8 एस. सी. सी. 746 : **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर** ।	11

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2017 की एम. एफ. ए. संख्या 9126.

कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1950 की धारा 19(1) के अधीन अपील ।

अर्जीदार की ओर से श्री एम. एस. नागराज

प्रत्यर्थी की ओर से श्री ए. रामचंद्र

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति (श्रीमती) बी. वी नागरत्ना ने दिया ।

न्या. (श्रीमती) नागरत्ना – इन अपीलों को हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13ख(1) (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) के अधीन पक्षकारों द्वारा फाइल अर्जी पर विचार करने के लिए सूचीबद्ध किया गया है, क्योंकि पक्षकारों ने उक्त अर्जी को अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन एक आवेदन के साथ पारस्परिक सहमति से

विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा उनके विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए फाइल की गई थी ।

2. 2017 की एम. एफ. ए. सं. 9125 को 2010 की एम. सी. सं. 3794 में पारित सामान्य निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल किया गया है, जिसमें प्रत्यर्थी/पत्नी के पक्ष में दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री मंजूरी प्रदान करने को चुनौती दी गई थी, जबकि 2017 की एम. एफ. ए. सं. 9126 को 2014 की एम. सी. सं. 2444 में अपीलार्थी/पति द्वारा फाइल विवाह-विच्छेद की अर्जी को खारिज करने वाले निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल किया गया है । पूर्वोक्त अर्जियों में पारित सामान्य निर्णय और डिक्री द्वारा बेंगलुरु के विद्वान् द्वितीय अपर प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय ने तारीख 23 अक्तूबर, 2017 को अधिनियम की धारा 9 के अधीन प्रत्यर्थी/पत्नी द्वारा फाइल अर्जी को अधिनियम की धारा 13(1)(iक) के अधीन अपीलार्थी/पति द्वारा फाइल अर्जी को खारिज करते हुए अनुज्ञात किया है । इसलिए, पति ने उक्त निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर इन अपीलों को प्रस्तुत किया है ।

3. संबंधित पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि उक्त अपीलों के लंबित रहने के दौरान, पक्षकारों ने एक समझौते पर बातचीत की थी और उन्होंने कुछ नियमों और शर्तों पर पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा अपने विवाह के विघटन का विनिश्चय किया था । अर्जी, अधिनियम की धारा 13(ख)(1) के अधीन फाइल की गई है, जिसका समर्थन पक्षकारों के शपथपत्रों द्वारा किया गया है । उन्होंने अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन भी एक आवेदन दिया जिसमें उक्त उपबंधों के अधीन नियत 6 माह की कानूनी अवधि में छूट और पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की डिक्री को इस न्यायालय द्वारा मंजूर किए जाने की ईप्सा करते हुए फाइल किया था ।

4. संबंधित पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि इन अपीलों को पक्षकारों के बीच हुए समझौते के संदर्भ में निपटाया जा सकता है ।

5. पक्षकार, इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हैं । उनकी शनाख्त उनसे संबंधित काउंसेल द्‌वारा की गई है । जब उनसे पूछताछ की गई तो उन्होंने कथन किया कि उन्होंने वास्तव में, अधिनियम की धारा 13(ख)(1) के अधीन उसमें तय कतिपय नियमों और शर्तों पर एक संयुक्त अर्जी फाइल करके उनके मध्य विवादों को निपटाने का विनिश्चय किया है । उन्होंने यह भी कथन किया है कि वे किसी भी पक्ष के दबाव, अनुचित प्रभाव के बिना अपनी स्वतंत्र इच्छा के आधार पर समझौते पर पहुंचे हैं । उन्होंने यह भी कथन किया है कि इन अपीलों का निपटारा उनके मध्य हुए समझौते के अनुसार किया जा सकता है ।

6. अपीलार्थी/पति के विद्‌वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी, प्रत्यर्थी/पत्नी को उसकी स्थायी निर्वाहिका के पूर्ण और अंतिम निपटान के लिए 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) की राशि का संदाय करने के लिए सहमत हुआ है और अप्राप्तवय पुत्र के जीवन के भरणपोषण के लिए 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) संदत्त किया जाना है । उक्त राशि 2 मांगदेय ड्राफ्ट के माध्यम से दी जानी है । जैसा कि अधिनियम की धारा 13ख(1) के अधीन फाइल संयुक्त अर्जी के पैरा सं. 7 में विस्तृत विवरण है । अपीलार्थी के विद्‌वान् काउंसेल ने उक्त मांगदेय ड्राफ्ट को प्रत्यर्थी के विद्‌वान् काउंसेल को सौंप भी दिया है, जिन्होंने उसे प्रत्यर्थी/पत्नी को सौंप दिया है, जिसने इसकी प्राप्ति को अभिस्वीकार किया है ।

7. अधिनियम की धारा 13ख(1) के अधीन फाइल संयुक्त ज्ञापन को अभिलेख पर लिया गया है । यह उल्लिखित किया जाता है कि यह संबंधित पक्षकारों और उनके संबंधित काउंसेल द्‌वारा हस्ताक्षरित है । अर्जी, पक्षकारों द्‌वारा फाइल शपथपत्रों द्‌वारा समर्थित है किन्तु उनका सामान्य समरूप प्रभाव है । अर्जी इस प्रकार से है :–

"**हिन्दू विवाह अधिनियम, 1956 की धारा 13ख(1) के अधीन संयुक्त अर्जी**"

अपीलार्थी और प्रत्यर्थी सम्मानपूर्वक निम्नलिखित निवेदन करते हैं –

1. इसमें के अपीलार्थी ने यहां उपरोक्त अपीलें फाइल की हैं, जिसमें विद्वान् माननीय द्वितीय अपर प्रधान कुटुंब न्यायाधीश, बेंगलुरु द्वारा 2010 की एम. सी. सं. 3794 में पारित सामान्य निर्णय की वैधता तथा शुद्धता और 2014 की एम. सी. सं. 2444 में पारित तारीख 23 अक्तूबर, 2017 के निर्णय और डिक्री को चुनौती दी गई है, जिसमें अपीलार्थी/पति द्वारा क्रूरता और अभित्यजन के आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा करने वाली अर्जी को खारिज कर दिया गया था और प्रत्यर्थी/पत्नी द्वारा फाइल अर्जी को मंजूर कर लिया गया था ।

2. अपीलार्थी और प्रत्यर्थी पति और पत्नी है, उनका विवाह तारीख 11 मई, 2008 को एस. एच. के. कल्याण मंडप, बेंगलुरु में हुआ था । उनके विवाह से उन्हें एक जीवन नाम के पुत्र का जन्म हुआ था, जो वर्तमान में लगभग 12 वर्ष का है और प्रत्यर्थी की देखभाल और अभिरक्षा में है ।

3. यह निवेदन किया है कि इसमें के पक्षकारों के मध्य मतभेदों के कारण वे अलग हो गए और जुलाई, 2008 से अलग ही रह रहे हैं तथा उनके पुनर्मिलन की कोई भी संभावना नहीं है और पक्षकारों के बीच विवाह असुधार्य रूप से टूट गया है । इसलिए, पक्षकारों ने निम्नलिखित निबंधनों और शर्तों पर पारस्परिक सहमति से तारीख 11 अप्रैल, 2008 को अपने विवाह के विघटन का विनिश्चय किया है ।

4. उपरोक्त अपीलों में पक्षकारों के बीच विवाद और पक्षकारों के बीच लंबित अन्य सभी विवादों को मित्रों, शुभचिंतकों और दोनों पक्षकारों के कुटुंब सदस्यों के हस्तक्षेप से सौहार्दपूर्ण ढंग से निपटा लिया गया है । पक्षकार निम्नलिखित निबन्धनों पर समझौते पर पहुंचे हैं ।

5. अपीलार्थी और प्रत्यर्थी एतद्द्वारा एक दूसरे के विरुद्ध फाइल सभी मामलों को वापस लेने के लिए सहमत हैं, जो इस समझौते को ध्यान में रखते हुए विभिन्न न्यायालयों में लंबित हैं ।

6. अपीलार्थी, प्रत्यर्थी और उसके पुत्र को, प्रत्यर्थी और उसके पुत्र द्वारा फाइल उन सभी मामलों में जो विभिन्न न्यायालयों के समक्ष लंबित हैं, उनके संबंध में अपीलार्थी के विरुद्ध प्रत्यर्थी और उसके पुत्र के सभी दावों के पूर्ण और अंतिम निपटान के लिए अपीलार्थी, प्रत्यर्थी और उसके पुत्र को 10,00,000/- रुपए (केवल दस लाख रुपए) की राशि का संदाय करने के लिए सहमत हो गया है ।

7. तद्नुसार, अपीलार्थी ने इस न्यायालय के स्थायी निर्वाहिका के रूप में भारतीय स्टेट बैंक, मलागाला रोड, शाखा बेंगलुरु में लिखित मांगदेय ड्राफ्ट सं. 533217, तारीख 7 अगस्त, 2021 के माध्यम से प्रत्यर्थी को 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) की राशि का संदाय करने के लिए सहमत हो गया है तथा इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी ने इस न्यायालय के समक्ष भारतीय स्टेट बैंक, मलागाला रोड, शाखा बेंगलुरु में लिखित मांगदेय ड्राफ्ट सं. 533224, तारीख 12 अगस्त, 2021 के माध्यम से अप्राप्तवय पुत्र मास्टर जीवन को भरणपोषण के लिए प्रत्यर्थी को 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) का संदाय करने के लिए सहमत हो गया है, जिसे प्रत्यर्थी इसी समय भारतीय स्टेट बैंक, मलागला रोड शाखा, बेंगलुरु में अप्राप्तवय पुत्र के नाम पर सावधि जमा राशि में निक्षेप करेगी और प्रत्यर्थी को उक्त निक्षेप के संरक्षक के रूप में नियुक्त किया जाएगा जब तक अप्राप्तवय पुत्र वयस्कता की आयु को प्राप्त नहीं कर लेता है । प्रत्यर्थी वचन देती है कि वह अप्राप्तवय पुत्र के नाम पर जमा सावधि जमा की प्रतिभूति पर किसी भी ऋण की समाप्ति या उधार नहीं ले पाएगी, इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थी यह भी वचन देती है कि वह उक्त सावधि जमा राशि 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) पर प्रोद्भूत ब्याज नहीं निकालेगी लेकिन, प्रत्यर्थी अप्राप्तवय पुत्र की शिक्षा का उपबंध करेगी । अपीलार्थी द्वारा अपने अप्राप्तवय पुत्र के लिए संदाय की गई

उपरोक्त राशि जब तक कि वह वयस्क नहीं हो जाता तब तक अप्राप्तवय पुत्र की शिक्षा, भरणपोषण, चिकित्सा और अन्य व्ययों के लिए होगी । प्रत्यर्थी किसी भी समय उक्त राशि को निकालेगी नहीं और पुत्र अपनी इच्छा और अभिलाषा के अनुसार वयस्क होने के पश्चात् उक्त राशि का उपयोग करने के लिए स्वतंत्र है । प्रत्यर्थी उक्त सावधि जमा राशि का केवल संरक्षक और नामनिर्देशिती होगी । अपीलार्थी ने पूर्वोक्त मांगदेय ड्राफ्ट को इस माननीय न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी की अभिरक्षा में सौंप दिया है । पुत्र की अभिरक्षा अनन्य रूप से प्रत्यर्थी के पास रहेगी ।

8. दोनों पक्षकार इस बात पर सहमत हैं कि भविष्य में वे अप्राप्तवय पुत्र की ओर से तथा एकदूसरे के विरुद्ध कोई भी मामला फाइल नहीं करेंगे और प्रत्यर्थी को स्थायी निर्वाहिका के संदाय को ध्यान में रखते हुए पक्षकार उनके मध्य हुए विवाह के विघटन के लिए सहमत हुए हैं, जो तारीख 10 मई, 2008 को एस. एच. के. कल्याण मंडप, बेंगलुरु में अनुष्ठापित हुआ था । प्रत्यर्थी को द्वितीय अपर प्रधान कुटुम्ब न्यायालय न्यायाधीश, बेंगलुरु की फाइल पर 2014 की एम. सी. सं. 2444 में अपीलार्थी द्वारा फाइल विवाह-विच्छेद की अर्जी को मंजूर करने में कोई भी आपत्ति नहीं है और इसके अतिरिक्त उसे 2010 की एम. सी. सं. 3794 में तारीख 23 अक्तूबर, 2017 को विद्वान् द्वितीय अपर प्रधान कुटुंब न्यायालय न्यायाधीश, बेंगलुरु द्वारा पारित दाम्पत्य अधिकारों के पुनर्स्थापन के निर्णय और डिक्री को अपास्त करने में कोई भी आपत्ति नहीं है ।

9. अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) की राशि में संदाय की गई राशि प्रत्यर्थी के जीवनकाल के दौरान स्थायी निर्वाहिका है, जिसमें विद्वान् मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट ट्रैफिक न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा डी. वी. अधिनियम के अधीन 2012 की आपराधिक प्रकीर्ण सं.

250 में अतीत, वर्तमान और भविष्य के लिए दिए गए भरणपोषण सम्मिलित हैं और प्रत्यर्थी या उसका पुत्र अपने जीवनकाल के दौरान अपीलार्थी के विरुद्ध किसी भी रूप में भरणपोषण का दावा नहीं करेगा ।

10. अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों ने सहमति व्यक्त की है कि निपटान को ध्यान में रखते हुए, उनके मध्य सभी विवादों को बंद और समाप्त कर दिया जाएगा और उनके पास किसी भी तरह से एक दूसरे के विरुद्ध किसी भी प्रकार का दावा नहीं है ।

11. प्रत्यर्थी ने सिटी सिविल न्यायालय न्यायाधीश, बेंगलुरु की फाइल पर 2020 की ओ. एस. सं. 6457 में अपीलार्थी, उसकी मां और उसकी बहन के विरुद्ध अपने पुत्र के माध्यम से विभाजन के लिए एक वाद भी फाइल किया है, हालांकि वाद के अधीन संपत्तियां अपीलार्थी की मां और बहन की पूर्ण और अनन्य संपत्ति है । इसलिए, समझौते को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी ने इस समझौता अर्जी की प्रति को प्रस्तुत करके तुरन्त वाद को वापस लेने पर सहमति व्यक्त की है । किसी भी परिस्थिति की स्थिति में, यदि प्रत्यर्थी पूर्वोक्त वाद को वापस लेने में असफल रहती है तो अपीलार्थी समझौता अर्जी की प्रति को प्रस्तुत करके और उक्त समझौते के आधार पर संबंधित सिटी सिविल न्यायालय न्यायाधीश, बेंगलुरु के समक्ष वाद को खारिज कराने के लिए स्वतंत्र है और जिस पर प्रत्यर्थी को कोई आपत्ति नहीं है ।

12. दोनों पक्षकारों ने अपनी स्वतंत्र अभिलाषा और इच्छा तथा स्वेच्छा से यह समझौता किया है । समझौता कराने के लिए किसी के भी द्वारा किसी प्रपीड़न या बल का उपयोग नहीं किया गया है ।

इस कारण से, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों प्रार्थना करते हैं कि यह माननीय न्यायालय, न्यायहित और साम्या में,

उपरोक्त समझौता अर्जी के संदर्भ में एस. एच. के. कल्याण मंडप, बेंगलुरु में अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच तारीख 11 मई, 2008 को अनुष्ठापित, उनके विवाह का विघटन करने की कृपा कर सकता है ।

हस्ताक्षर/-	हस्ताक्षर/-
अपीलार्थी के अधिवक्ता	प्रत्यर्थी के अधिवक्ता
हस्ताक्षर/-	हस्ताक्षर/-
अपीलार्थी	प्रत्यर्थी

सत्यापन

हम, श्री एस. सुरेश, अपीलार्थी और श्रीमती लक्ष्मी, प्रत्यर्थी यहां एतद्द्वारा सत्यापित करते हैं और घोषणा करते हैं कि ऊपर उपरोक्त कथन हमारी बेहतर जानकारी, ज्ञान, विश्वास और सूचना के आधार पर सत्य और सही हैं ।

हस्ताक्षर /-

अपीलार्थी

हस्ताक्षर /-

प्रत्यर्थी

बेंगलुरु

तारीख 13 अगस्त, 2021

8. उक्त अर्जी का परिशीलन करने पर यह उल्लिखित होता है कि प्रत्यर्थी/पत्नी को स्थायी निर्वाहिका और अप्राप्तवय पुत्र के भरणपोषण के संदाय के अतिरिक्त, यह सहमति हुई है कि अप्राप्तवय पुत्र प्रत्यर्थी/पत्नी की अभिरक्षा में रहेगा जो अप्राप्तवय पुत्र मास्टर जीवन की शिक्षा और पालन पोषण के लिए जिम्मेदार होगी । अपीलार्थी/पति के लिए कोई भी मिलने का अधिकार आरक्षित नहीं रखा गया है (जैसा कि पूर्व में ही उल्लेख किया गया है कि अपीलार्थी ने दोनों मांगदेय ड्राफ्ट के निबन्धनों

में प्रत्यर्थी को 10,00,000/- रुपए (केवल दस लाख रुपए) संदत्त किया है ।

9. पक्षकारों ने अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन अनुध्यात छह माह की कानूनी अवधि में छूट की ईप्सा करते हुए, एक संयुक्त आवेदन भी फाइल किया है । उक्त आवेदन पक्षकारों के संयुक्त शपथपत्र के द्वारा समर्थित है ।

10. संबंधित पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि पक्षकारों का विवाह तारीख 11 मई, 2008 को हुआ था । यह कि उनके द्वारा अर्जियां वर्ष 2010 और 2014 में फाइल की गई थीं और उन अर्जियों को वर्ष 2017 में निपटाया गया था तथा वर्ष 2010 से पक्षकार अलग-अलग अर्थात् लगभग 11 वर्षों से अलग रह रहे हैं । यह कि पक्षकारों के मध्य मतभेदों के सुलह की कोई संभावना नहीं है और न ही पक्षकारों के मध्य सहवास की कोई भी संभावना है, अतएव, अधिनियम की धारा 13ख(2) के अधीन अनुध्यात छह माह की कानूनी अवधि में छूट की ईप्सा करने वाले पक्षकारों द्वारा फाइल आवेदन को मंजूर किया जा सकता है ।

11. हमने आवेदन और उसके समर्थन में फाइल शपथपत्र का परिशीलन किया है और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह निष्कर्ष है कि पक्षकार पिछले ग्यारह वर्षों से अलग-अलग रह रहे हैं और उनके बीच मतभेदों के सुलह की कोई भी संभावना नहीं है और न ही सहवास की भी संभावना है तथा **अमरदीप सिंह** बनाम **हरवीन कौर**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए, हम छह माह की कानूनी अवधि में छूट की ईप्सा करने वाले पक्षकारों द्वारा फाइल आवेदन को मंजूर करते हैं । हमने अधिनियम की धारा 13ख(1) के अधीन उनके द्वारा फाइल संयुक्त अर्जी द्वारा पक्षकारों के मध्य हुए समझौते की शर्तों का परिशीलन किया है । उसका परिशीलन करने के पश्चात् हमारा यह समाधान है कि समझौते के निबन्धन विधि के अनुसार हैं । तद्नुसार, हम इसे स्वीकार करते हैं । हमारा यह भी

---

[1] (2017) 8 एस. सी. सी. 746.

निष्कर्ष है कि समझौते के निबन्धन को स्वीकार करने में कोई भी विधिक बाधा नहीं है ।

12. परिणामस्वरूप, अधिनियम की धारा 13ख(1) के अधीन पक्षकारों द्वारा फाइल अर्जी को मंजूर किया जाता है । अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य तारीख 11 मई, 2008 को एस. एच. के कल्याण मंडप, बेंगलुरु में अनुष्ठापित विवाह को पारस्परिक सहमति से विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विघटित कर दिया जाता है । इन परिस्थितियों में, द्वितीय अपर प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बेंगलुरु द्वारा 2014 की एस. सी. सं. 2444 से संबंधित 2010 की एम. सी. सं. 3794 में पारित आक्षेपित निर्णय और डिक्री को अपास्त किया जाता है ।

13. प्रत्यर्थी ने अप्राप्तवय पुत्र मास्टर जीवन के भरणपोषण के लिए संदाय की गई 5,00,000/- रुपए (केवल पांच लाख रुपए) की राशि को किसी भी डाकघर या राष्ट्रीयकृत बैंक में तब तक जमा रखेगी जब तक कि अप्राप्तवय पुत्र मास्टर जीवन वयस्क नहीं हो जाता है । तथापि, प्रत्यर्थी उक्त जमा पर सामयिक ब्याज प्राप्त करने और अप्राप्तवय पुत्र के कल्याण के लिए उस सामयिक ब्याज का उपयोग करने की हकदार होगी ।

अपीलों को पूर्वोक्त निबन्धनों में निपटाया जाता है ।

पक्षकारों को अपने-अपने खर्चे वहन करने होंगे ।

पूर्वोक्त निबन्धनों में रजिस्ट्री डिक्री को तैयार करेगा ।

अपीलों के निपटारे को ध्यान में रखते हुए, दोनों अपीलों में फाइल 2021 की आईए सं. 1 को निपटाया जाता है ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

अम./क.

एच. के. लगर

बनाम

छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक और अन्य

(2012 की रिट याचिका सं. 5521)

तारीख 1 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति संजय कुमार अग्रवाल

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी और कर्मकारी सेवा विनियम, 2007 के खंड 381(ख)(फ) और विनियम 47] – बैंक कर्मचारी की विभागीय जांच के आधार पर पदच्युति – जांच के पश्चात् भी कर्मचारी को जांच रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराना – पदच्युति आदेश को चुनौती – यदि किसी कर्मचारी को विभागीय जांच के दौरान दोषी पाए जाने पर सेवा से पदच्युत किया जाता है तो यदि उस कर्मचारी को जांच की समाप्ति पर जांच रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराई जाती है और उसे सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर उपलब्ध नहीं कराया जाता है तो ऐसा पदच्युति आदेश मनमाना और नैसर्गिक नियमों के विरुद्ध माना जाएगा तथा अभिखंडित कर दिया जाएगा ।

वर्तमान मामले में, याची को तारीख 26 फरवरी, 1985 को प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक द्वारा अधिकारी स्केल 1 के रूप में नियुक्त किया गया था । तारीख 20 अगस्त, 2008 को कतिपय कदाचार का आरोप लगाते हुए, याची को एक आरोप पत्र दिया गया था जिसमें उसे 15 दिनों के भीतर प्रत्युत्तर फाइल करने का निदेश दिया गया था, लेकिन आरोप पत्र के साथ न तो साक्षियों की सूची और न ही दस्तावेजों की सूची उसे प्रदान की गई थी । याची ने अपना उत्तर (उपाबंध प्रदर्श/2) फाइल किया और अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों से इनकार किया । इसके बाद, तारीख 7 मार्च, 2012 (उपाबंध प्रदर्श/5) को जांच के निष्कर्ष पर, याची को पदच्युत करने का अस्थायी आदेश दिया गया और साथ ही, प्रस्तावित

दीर्घ दण्ड देने के लिए उसे तारीख 7 अप्रैल, 2012 (उपाबंध प्रदर्श/5) को कारण बताओ नोटिस भी जारी किया गया । याची का पक्षकथन यह है कि उसे जांच रिपोर्ट की प्रतिलिपि प्रदान नहीं की गई थी और अत: उसने जांच रिपोर्ट पाने के लिए, सूचना का अधिकार नियम, 2005 के अधीन तारीख 10 सितंबर, 2012 को एक आवेदन किया, जिसके उत्तर में, प्रत्यर्थियों ने उसे तारीख 17 सितंबर, 2012 को जांच रिपोर्ट की प्रतिलिपि प्रदान की । इसके बाद, याची ने कारण बताओ नोटिस के विरुद्ध अपना उत्तर (उपाबंध प्रदर्श/7) फाइल किया और अंतत: अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी और कर्मचारी सेवा विनियम, 2007 के खंड 38 (1)(बी)(वी) और छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी और कर्मचारी सेवा विनियम, 2010 के खंड 39 (1)(ख)(फ) के अनुसार तारीख 24 मई, 2012 को आदेश (उपाबंध प्रदर्श/8) के माध्यम से, याची का पदच्युत करने का आदेश पारित किया गया, जिसके विरुद्ध याची ने 2007 के विनियमों के नियम 47 के अधीन अपील की, लेकिन अपीली प्राधिकारी ने तारीख 3 सितंबर, 2012 (उपाबंध प्रदर्श/9) के आदेश के माध्यम से अपील में कोई गुणागुण नहीं होने के आधार पर खारिज किया । जिस पर याची द्वारा इस रिट याचिका में मुख्य रूप से इस आधार पर प्रश्न उद्भूत किया गया कि उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का उत्तर देने के लिए सुनवाई के उचित अवसर से वंचित कर दिया गया है, जांच अधिकारी और अनुशासत्मक प्राधिकारी द्वारा जिन दस्तावेजों का अवलंब लिया गया था और यहां तक कि साक्षियों की सूची भी उसे प्रदान नहीं की गई थी और कुल 59 प्रदर्श दस्तावेज फाइल किए गए थे जो साक्ष्य में स्वीकार्य थे जिनमें से 5 दस्तावेज अभिलेख पर भी नहीं रखे गए थे और उनमें से 9 दस्तावेजों पर अवलंब लेते हुए याची के विरुद्ध पदच्युत करने का आदेश पारित किया है । प्रत्यर्थियों द्वारा यह कहते हुए उत्तर फाइल किया गया कि प्रदर्शित दस्तावेजों का निरीक्षण करने की अनुमति याची को दी गई थी और साक्ष्य अभिलिखित करते समय साक्षियों को भी उससे मिलवाया गया था । यह भी अभिवाक् किया गया है कि जांच रिपोर्ट में प्रतिकूल निष्कर्षों को तारीख 7 अप्रैल, 2012 के कारण बताओ नोटिस (प्रदर्श पी/5) द्वारा याची को स्पष्टीकृत किया गया है, इस प्रकार,

अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा याची को सेवा से पदच्युत करने का आदेश कठोरतः विधि के अनुसरण में है । रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह स्वीकृत रूप से और निर्विवाद है कि, याची को तारीख 7 अप्रैल, 2012 के आदेश (उपाबंध प्रदर्श/5) द्वारा जारी कारण बताओ नोटिस के साथ जांच रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराई गई थी, जिसके द्वारा उसके विरुद्ध विनियम 2007 की धारा 38(1)(ख)(v) के अंतर्गत पदच्युति का अनंतिम आदेश पारित किया गया था । याची को जांच रिपोर्ट की प्रति नहीं दी गई है, जो पैरा 3.10 में प्रत्यर्थी द्वारा फाइल उत्तर से स्पष्ट है, जिसमें अभिकथित किया गया है कि तारीख 7 अप्रैल, 2012 का कारण बताओ नोटिस स्वयं प्रदर्शित करता है कि प्रस्तावित कारण बताओ नोटिस में जांच अधिकारी की रिपोर्ट का विस्तार से उल्लेख किया गया है । कारण बताओ नोटिस जारी किया गया है और याची को सुनवाई का पर्याप्त अवसर दिया गया है । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पदच्युति का विवादित आदेश पारित करने से पहले याची को जांच रिपोर्ट की प्रति नहीं दी गई है । वर्तमान मामले में, स्वीकृतः तथा निर्विवाद रूप से, याची को कोई जांच रिपोर्ट नहीं दी गई है तथा उसे तारीख 7 मई, 2012 का दूसरा कारण बताओ नोटिस (उपाबंध प्रदर्श/5) जारी किया गया था, जिसमें सेवा से पदच्युति का अस्थायी आदेश प्रस्तावित किया गया था । पूर्वोक्त कारण बताओ नोटिस का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक ने याची की सेवाओं को अस्थायी रूप से समाप्त करने का निर्णय पहले ही ले लिया था और इस प्रकार कारण बताओ नोटिस मात्र औपचारिकता थी । इस प्रकार, तारीख 7 अप्रैल, 2012 को याची को जारी किया गया नोटिस (उपाबंध प्रदर्श/5) एक औपचारिकता मात्र थी और प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक ने पहले ही निर्णय ले लिया था और सेवा से पदच्युति का आदेश दे दिया था और जब याची द्वारा उत्तर फाइल किया गया, तो प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक ने निष्कर्ष निकाला कि याची तारीख 07 अप्रैल, 2012 के पदच्युति के अंनतिम आदेश में सक्षम अधिकारी को हस्तक्षेप करने का समुचित कारण नहीं बताया । इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक, याची को अपना बचाव करने के लिए युक्तियुक्त अवसर प्रदान करने में विफल रहा

जिसके कारण उसे प्रतिकूलता का सामना करना पड़ा । अन्यथा भी, पदच्युति संबंधी विनिमय, 2007 के अंतर्गत अनंतिम विचाराधीन आदेश का सेवा न्यायशास्त्र में कोई अस्तित्व नहीं है । अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित तारीख 24 मई, 2012 के पूर्वोक्त आदेश को याची द्वारा अपील में चुनौती दी गई थी, जिसमें अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश को तारीख 30 अगस्त, 2012 को आयोजित निदेशक मंडल की बैठक में विचार किया गया था । श्री एच. के. लगर की अपील पर सदस्यों द्वारा सभी पहलुओं पर चर्चा करते हुए गहन विचार विर्मश किया गया । सदस्यों द्वारा सर्व सम्मति से अनुशासनिक अधिकारी द्वारा लिए गए निर्णय को यथावत् रखने का निर्णय लिया गया । विधि की सुस्थिर प्रतिपादना है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही में, अपीली प्राधिकारी अर्ध-न्यायिक क्षमता में कार्य करता है और पारित आदेश सकारण होना चाहिए और अपीलार्थी द्वारा उठाए गए प्रश्न पर विवेक लागू होना चाहिए और यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो अपीली आदेश दूषित हो जाता है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने विधि के इस सिद्धांत को दोहराते हुए यह मत व्यक्त किया कि कानूनी अपील का निर्णय करते समय अपीली प्राधिकारी को न केवल सरकारी कर्मचारी को सुनने की आवश्यकता होती है अपितु अपील में उद्भूत दलील पर विचार करते हुए सकारण आदेश पारित करना चाहिए । यद्यपि, अपीली आदेश में उस अनुशासनिक प्राधिकारी की सहमति होती है फिर भी यह सकारण आदेश नहीं हो सकता है, किन्तु इसे पारित करने वाले प्राधिकारी को यह दर्शित करना चाहिए कि उसने अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते समय विधि की अपेक्षानुसार अपने विवेक का प्रयोग किया है, विशेष रूप से जब नियमों में विभिन्न कारकों पर विचार करने की अपेक्षा होती है और विभिन्न दलीलें उद्भूत की गई हैं और वह कारण समनुदेशित करने के लिए बाध्य हैं ताकि न्यायालय यह सुनिश्चित करने के लिए अपने विनिश्चय का पुनर्विलोकन कर सके कि क्या उसने सुसंगत कारकों में अपना विवेक लागू किया है जिसे करना नियमों में अपेक्षित है । इसमें उपर्युक्त वर्णित विधिक प्रतिपादना के प्रकाश में, मामले के तथ्यों का उल्लेख करने से यह नितान्त स्पष्ट है कि अपीली प्राधिकारी ने यह

उपदर्शित करने के लिए कोई कारण नहीं बताया है कि उसने उद्धृत आधारों पर अपना विवेक लागू किया है और न ही यह कहने के लिए कोई संक्षिप्त कारण उपदर्शित किया है कि उसने विभागीय जांच करते समय विनियमों के अनुसार उचित प्रक्रिया का पालन किया है और यह भी कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी का निष्कर्ष अभिलेख पर आधारित है और अधिरोपित शास्ति न्यायोचित और समुचित है । इस प्रकार, अपीली प्राधिकारी द्वारा विधि के अनुसरण में अपील का विनिश्चय करने में असफल रहा है । पूर्वोक्त विधिक प्रतिपादना के परिणामस्वरूप, सेवा से याची की पदच्युति का तारीख 24 मई, 2012 का आदेश (उपाबंध प्रदर्श/8) और साथ ही तारीख 3 सितंबर, 2012 का अपीली आदेश (उपाबंध प्रदर्श/9) को तद्द्वारा अभिखण्डित किया जाता है । प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक को यह निर्देश दिया जाता है कि वह याची को सभी परिणामिक सेवा लाभों के साथ पुनः बहाल करें । (पैरा 20, 23, 24, 25, 28, 29, 30, 31, 32 और 33)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2010]	(2010) 11 एस. सी. सी. 278 : **इंदु भूषण दिवेदी** बनाम **झारखंड राज्य** ;	15
[2008]	(2008) 3 एस. सी. सी. 469 : **प्रभागीय वन अधिकारी, काठगोदाम और अन्य** बनाम **मधुसूदन राव** ;	29
[2006]	(2006) 12 एस. सी. सी. 33 : **सीमेंस लिमिटेड** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	24
[2006]	(2006) 4 एस. सी. सी. 713 : **नरिंदर मोहन आर्य** बनाम **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य** ;	31
[2001]	(2001) 5 एस. सी. सी. 340 : **देवकीनंदन शर्मा** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	30

[1991] (1991) एस. सी. सी. 588 :
भारत सरकार बनाम **मो. रमजान खान** ; 21

[1987] (1987) (सप्ली.) एस. सी. सी. 518 :
चंद्रमा तिवारी बनाम **भारत संघ द्वारा महाप्रबंधक, पूर्वी रेलवे** । 16

रिट (सिविल) अधिकारिता : 2012 की रिट याचिका सं. 5521.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री प्रफुल भरत, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ केशव देवगन

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री बी. डी. गुरू और अनुरूप पांडा,

न्यायमूर्ति संजय कुमार अग्रवाल – इस रिट याचिका के माध्यम से, याची ने तारीख 3 सितंबर, 2012 (उपाबंध प्रदर्श/9) के अपीली आदेश की वैधता, विधिमान्यता और सत्यता पर प्रश्न उद्भूत किया है, जिसके द्वारा अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पदच्युति का दंड अधिरोपित करते हुए, तारीख 24 मई, 2012 को पारित आदेश (उपाबंध प्रदर्श/8) को चुनौती देते हुए, याची द्वारा फाइल अपील को कोई गुणागुण नहीं होने के आधार पर खारिज कर दिया गया है ।

2. याची को तारीख 26 फरवरी, 1985 को प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक द्वारा अधिकारी स्केल 1 के रूप में नियुक्त किया गया था । तारीख 20 अगस्त, 2008 को कतिपय कदाचार का आरोप लगाते हुए, याची को एक आरोप पत्र दिया गया था जिसमें उसे 15 दिनों के भीतर प्रत्युत्तर फाइल करने का निदेश दिया गया था, लेकिन आरोप पत्र के साथ न तो साक्षियों की सूची और न ही दस्तावेजों की सूची उसे प्रदान की गई थी । याची ने अपना उत्तर (उपाबंध प्रदर्श/2) फाइल किया और अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों से इनकार किया । इसके बाद, तारीख 7 मार्च, 2012 (उपाबंध प्रदर्श/5) को जांच के निष्कर्ष पर, याची को पदच्युत करने का अस्थायी आदेश दिया गया और साथ ही, प्रस्तावित दीर्घ दण्ड देने के लिए उसे तारीख 7 अप्रैल, 2012 (उपाबंध प्रदर्श/5) को कारण बताओ नोटिस भी जारी किया गया ।

3. याची का पक्षकथन यह है कि उसे जांच रिपोर्ट की प्रतिलिपि प्रदान नहीं की गई थी और अत: उसने जांच रिपोर्ट पाने के लिए, सूचना का अधिकार नियम, 2005 के अधीन तारीख 10 सितंबर, 2012 को एक आवेदन किया, जिसके उत्तर में, प्रत्यर्थियों ने उसे तारीख 17 सितंबर, 2012 को जांच रिपोर्ट की प्रतिलिपि प्रदान की । इसके बाद, याची ने कारण बताओ नोटिस के विरुद्ध अपना उत्तर (उपाबंध प्रदर्श/7) फाइल किया और अंतत: अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी और कर्मचारी सेवा विनियम, 2007 के खंड 38 (1)(बी)(वी) और छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी और कर्मचारी सेवा विनियम, 2010 के खंड 39 (1)(ख)(फ) के अनुसार तारीख 24 मई, 2012 को आदेश (उपाबंध प्रदर्श/8) के माध्यम से, याची का पदच्युत करने का आदेश पारित किया गया, जिसके विरुद्ध याची ने 2007 के विनियमों के नियम 47 के अधीन अपील की, लेकिन अपीली प्राधिकारी ने तारीख 3 सितंबर, 2012 (उपाबंध प्रदर्श/9) के आदेश के माध्यम से अपील में कोई गुणागुण नहीं होने के आधार पर खारिज कर दिया । जिस पर याची द्वारा इस रिट याचिका में मुख्य रूप से इस आधार पर प्रश्न उद्भूत किया गया कि उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का उत्तर देने के लिए सुनवाई के उचित अवसर से वंचित कर दिया गया है, जांच अधिकारी और अनुशासत्मक प्राधिकारी द्वारा जिन दस्तावेजों का अवलंब लिया गया था और यहां तक कि साक्षियों की सूची भी उसे प्रदान नहीं की गई थी और कुल 59 प्रदर्श दस्तावेज फाइल किए गए थे जो साक्ष्य में स्वीकार्य थे जिनमें से 5 दस्तावेज अभिलेख पर भी नहीं रखे गए थे और उनमें से 9 दस्तावेजों पर अवलंब लेते हुए याची के विरुद्ध पदच्युत करने का आदेश पारित किया है ।

4. याची का यह भी पक्षकथन है कि जांच की समाप्ति के बाद भी उसे जांच रिपोर्ट नहीं दी गई थी और जब सेवा से पदच्युतगी के लिए अंतिम आदेश पारित किया गया था, तो केवल सूचना का अधिकार अधिनियम के अधीन याची द्वारा रिपोर्ट प्राप्त की गई थी । इस प्रकार, याची को पूरे दस्तावेजों की अनुपलब्धता में बहुत प्रतिकूलता का सामना करना पड़ा है और यहां तक कि लेखबद्ध किए गए निष्कर्ष भी अनुचित

हैं, जैसे कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित पदच्युति का आदेश के साथ ही अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश की पुष्टि करने वाले अपीली प्राधिकारी का आदेश दोनों ही अपास्त किए जाने के योग्य हैं ।

5. प्रत्यर्थियों द्वारा यह कहते हुए उत्तर फाइल किया गया कि प्रदर्शित दस्तावेजों का निरीक्षण करने की अनुमति याची को दी गई थी और साक्ष्य अभिलिखित करते समय साक्षियों को भी उससे मिलवाया गया था । यह भी अभिवाक् किया गया है कि जांच रिपोर्ट में प्रतिकूल निष्कर्षों को तारीख 7 अप्रैल, 2012 के कारण बताओ नोटिस (प्रदर्श पी/5) द्वारा याची को स्पष्टीकृत किया गया है, इस प्रकार, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा याची को सेवा से पदच्युत करने का आदेश कठोरतः विधि के अनुसरण में है ।

6. उत्तर में किए गए प्रकथनों का खंडन करते हुए, याची द्वारा प्रत्युत्तर फाइल किया गया है ।

7. याची की ओर से उपस्थित विद्वान ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री प्रफुल्ल ने निम्नलिखित निवेदन किया है :-

(i) यह कि विभागीय जांच के लिए बनाए गए आधार 59 प्रदर्शित दस्तावेजों सहित कोई भी दस्तावेज याची को नहीं दिया गया और आगे उनकी कोई सूची उसे नहीं दी गई थी जिन साक्षियों की परीक्षा की गई थी, जिसके द्वारा याची को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का उत्तर देने और अपना बचाव प्रस्तुत करने के उचित अवसर से वंचित कर दिया गया है जो वर्ष 2007 के विनियमों के नियम 38 का उल्लंघन है । उन्होंने यू. पी. **बनाम** सरोज कुमार सिन्हा (ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3131), बिलासपुर रायपुर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक और अन्य **बनाम** मदनलाल टंडन (2015) 9 एस. सी. सी. 461 और शोभा सिन्हा **बनाम** बिहार राज्य और अन्य (2013) 16 एस. सी. सी. 456 वाले मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया गया है ।

(ii) यह कि जांच रिपोर्ट की अनुपलब्धता ने याची के लिए गंभीर प्रतिकूलता पैदा कर दिया है क्योंकि वह अपना बचाव ठीक से नहीं कर सका और प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल, हैदराबाद और अन्य **बनाम** बी. करूणाकर और अन्य (1993) 4 एस. सी. सी. 727 वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा दिए गए निर्णय को ध्यान में रखते हुए, अपचारी कर्मचारी को जांच रिपोर्ट की प्रति देना अनिवार्य है । उन्होंने पंजाब नेशनल बैंक और अन्य **बनाम** के. के. वर्मा (2010) 13 एस. सी. सी. 494 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का भी अवलंब लिया है ।

(iii) यह कि 9 प्रदर्शित दस्तावेजों की प्रतिलिपि, अस्वीकार्य होने के कारण, याची के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को प्रमाणित करने के लिए अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अवलंब नहीं लिया जा सका था, विशेष कर जब मूल दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया था और इस तरह अनुशासत्मक प्राधिकारी द्वारा लेखबद्ध किया गया निष्कर्ष उक्त दस्तावेजों की प्रतिलिपि पर आधारित होने के कारण अनुचित हैं और अपास्त किए जाने योग्य हैं । उन्होंने माखन सिंह **बनाम** नारायणपुरा सहकारी कृषि सेवा सोसाइटी लिमिटेड और अन्य (1987) 3 एस. सी. सी. 571 और **एस. एस. तिवारी भारत संघ और अन्य** (2013) 6 एस. सी. सी. 602 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय का भी अवलंब लिया है ।

(iv) यह कि याची को तारीख 7 अप्रैल, 2012 को कारण बताओ नोटिस (उपाबंध प्रदर्श/5) जारी किया गया था, किन्तु, उसी समय नोटिस-सह-आदेश द्वारा अनुशासनात्मक प्राधिकारी ने याची को अस्थायी तौर पर सेवा से पदच्युत कर दिया जो अनुशासनात्मक प्राधिकारी का याची के प्रति प्रतिकूलता दर्शित करता है और यहां तक कि कारण बताओ नोटिस के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना और याची को जांच रिपोर्ट की प्रति प्रदान किए बिना ही उसे अस्थायी तौर पर पदच्युत कर दिया गया जबकि प्रचलित नियम या सेवा न्यायशास्त्र में अस्थायी पदच्युति का ऐसा कोई प्रावधान नहीं है

और यह अनुशासनात्मक प्राधिकारी के मन में जांच के दौरान याची के प्रति पक्षपात और प्रतिकूलता को दर्शाता है । अत: अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा याची को सेवा से पदच्युत करने के लिए पारित तारीख 24 मई, 2012 का आदेश (उपाबंध प्रदर्श/8) अपास्त किए जाने योग्य है ।

(v) यह कि याची द्वारा फाइल अपील में, निदेशक मंडल ने अपीली प्राधिकारी होने के नाते अपील पर विचार नहीं किया और गुण-दोष के आधार पर अपील पर निर्णय किए बिना अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश की अकस्मात् पुष्टि कर दी और अपीली प्राधिकारी अपने कर्तव्य का पालन करने में विफल रहे और इस प्रकार, अपीली प्राधिकारी द्वारा पारित तारीख 03 सितंबर, 2012 का आदेश (उपाबंध प्रदर्श/9) अपास्त किए जाने योग्य है ।

8. प्रत्यर्थियों के विद्वान् अधिवक्ता श्री बी. डी. गुरू और श्री अनुरूप पांडा ने भी निम्नलिखित निवेदन किए हैं :-

(i) यह कि प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक द्वारा जिन दस्तावेजों का अवलंब लिया गया था जांच कार्यवाही के दौरान याची को उनका निरीक्षण करने की अनुमति दी गई थी, इस प्रकार, याची को उक्त दस्तावेजों की आपूर्ति करने की आवश्यकता पूरी होती है ।

(ii) यद्यपि साक्षियों की सूची याची को नहीं दी गई थी, फिर भी अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान परीक्षा के समय पर साक्षियों को याची से मिलवाया गया था ।

(iii) यद्यपि जांच रिपोर्ट की प्रति याची को नहीं दी गई थी, लेकिन याची को जारी किए गए तारीख 7 अप्रैल, 2012 के नोटिस (उपाबंध प्रदर्श/5) में व्यापक रूप से जांच रिपोर्ट की अन्तर्वस्तुओं को उद्धृत किया गया था, अत: याची को जांच रिपोर्ट की प्रति प्रदान करने की कोई आवश्यकता नहीं थी ।

(iv) उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि इस न्यायालय के समक्ष यह कथन करते हुए अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा एक शपथपत्र फाइल किया गया है कि यद्यपि याची की सेवा से

पदच्युति की दीर्घ शास्ति का प्रस्ताव करते हुए, कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था, किन्तु यह याची को बोलोरम बोरदोलोई **बनाम** लखीमी गौलिया बैंक और अन्य (2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 65) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय के अनुसरण में दंड की मात्रा पर याची को अपना पक्ष रखने का अवसर देने का मुद्दा था । इस प्रकार, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के साथ-साथ अपीली प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश न्यायोचित है और वर्तमान रिट याचिका खारिज किए जाने के योग्य है ।

9. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना है, इसमें ऊपर दी गई दलीलों पर विचार किया है और अत्यंत सावधानी के साथ अभिलेख का परिशीलन किया ।

10. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने और अभिलेखों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने के बाद, इस रिट याचिका में न्यायनिर्णयन के लिए निम्नलिखित प्रश्न उद्भूत होते हैं :-

(क) क्या बैंक दस्तावेजों की अनुपलब्धता और साक्षियों की सूची की अनुपलब्धता के कारण, याची को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का उत्तर देने और जांच कार्यवाही में अपना बचाव करने के उचित अवसर से वंचित किया गया है ?

(ख) क्या जांच के निष्कर्ष पर जांच रिपोर्ट की प्रति की आपूर्ति याची को की जानी आवश्यक थी और क्या रिपोर्ट की अनुपलब्धता के परिणामस्वरूप याची के साथ गंभीर प्रतिकूलता कारित हुई है ?

(ग) क्या जांच रिपोर्ट के निष्कर्ष अनुमानों और कल्पनाओं पर आधारित है जिसमें 9 प्रदर्शित दस्तावेज की प्रतिलिपि प्रस्तुत करना और 5 दस्तावेजों को प्रस्तुत नहीं करना शामिल है, इस प्रकार, दंड का आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है ?

(घ) क्या तारीख 7 अप्रैल, 2012 के कारण बताओ नोटिस (उपाबंध प्रदर्श/5) के साथ पदच्युति का अस्थायी आदेश विधि के अनुसरण में है ?

(ङ) क्या अपीली प्राधिकारी ने वर्ष 2007 के विनियमों के विनियम 48(ii) के अनुसार, अपील का विनिश्चय किया है ?

11. पूर्वोक्त प्रश्नों का उत्तर देने के लिए, छतीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी और कर्मचारी सेवा विनियम, 2007 में निहित उपबंधों पर ध्यान देना समुचित होगा । वर्ष 2007 के विनियमों के अधीन, विनियम 38 (1) (बी) (iv) के अधीन आने वाली दीर्घ शास्ति में से एक याची पर लगाया गया है, जो निम्नलिखित कथित है :–

"38. पूर्व में अभिलिखित इस अध्याय के विनियमों के होते हुए भी, यदि एक अधिकारी या कर्मचारी जो इन विनियमों का उल्लंघन करता है या जो लापरवाही, अक्षमता या शिथिलता प्रदर्शित करता है या जो बैंक के हितों के लिए हानिकारक कार्य करता है या उसके निर्देशों के साथ टकराव करता है या जो अनुशासन का उल्लंघन करता है या जो कदाचार के किसी अन्य कृत्य का अपचारी है, वह किसी भी एक या अधिक दंड के लिए उत्तरदायी होगा जैसा कि इसमें इसके बाद विहित किया गया है ।

1. अधिकारी

(a) लघु शास्ति

XXXXXXX

(I) दीर्घ शास्ति से

(iii) XXX

(iv) सेवा से हटाना जो भविष्य में नियोजन के लिए निर्हरता होगी ।

स्पष्टीकरण – यह उपबंध किया कि ऊपर निर्दिष्ट किसी भी दीर्घ शास्ति को अधिरोपित करने वाला कोई भी आदेश सक्षम अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित लिखित आदेश के अतिरिक्त नहीं किया जाएगा और ऐसा कोई भी आदेश आरोप या आरोप को लिखित रूप में तैयार किए बिना और अधिकारी को दिए बिना पारित नहीं किया जाएगा और न ही जांच की जाएगी ताकि उसे आरोप या आरोपों

का प्रत्युत्तर देने और अपना बचाव करने का उचित अवसर मिले ।"

12. पूर्वोक्त विनियम का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने से यह दर्शित होता है कि सेवा से हटाना जो भविष्य में नियोजन के लिए निहर्रता होगी, एक दीर्घ शास्ति है । स्पष्टीकरण के साथ संलग्न परंतुक में यह उपंबध है कि किसी भी निर्दिष्ट दीर्घ दंड को अधिरोपित करने का कोई आदेश सक्षम प्राधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित लिखित आदेश के बिना पारित नहीं किया जाएगा और ऐसा कोई आदेश लिखित में बनाए गए आशय या आरोपों के बिना पारित नहीं किया जाएगा और प्राधिकारी को आरोप पत्र की प्रति दी जाएगी ताकि उसे दोनों आरोप या आरोपों का उत्तर देने और अपना बचाव करने का समुचित अवसर मिल सके, इस प्रकार, संबंधित अधिकारी को आरोपों का उत्तर देने और अपना बचाव करने का उचित अवसर दिया जाना चाहिए और इस पृष्ठभूमि में, ऊपर बनाए गए प्रश्नों का उत्तर दिया जाता है ।

प्रश्न 10 (क) का उत्तर :

13. अभिलेख पर यह स्वीकृत प्रास्थिति है कि प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक ने याची के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को प्रमाणित करने के लिए 59 दस्तावेजों को प्रदर्शित किया है, लेकिन याची का पक्षकथन यह है कि उसे कोई भी प्रदर्शित दस्तावेज प्रदान नहीं किए गए थे और इस तरह उसे अपना बचाव करने के अवसर से वंचित कर दिया गया है क्योंकि उसे उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का उत्तर देने के लिए सुनवाई का कोई उचित अवसर नहीं दिया गया था, जबकि प्रत्यर्थियों का पक्षकथन यह है कि यद्यपि दस्तावेज याची को प्रदान नहीं किए थे, लेकिन उक्त दस्तावेजों का विवरण उसे दिया गया था और प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत उत्तर में यह कथन किया गया है कि याची को दिए गए आरोप-पत्र का उत्तर फाइल करने के लिए दस्तावेजों की परीक्षा और निरीक्षण करने का पर्याप्त अवसर था ।

14. यह सत्य है कि वर्ष 2007 के विनियमों में दस्तावेजों की आपूर्ति के संबंध में स्पष्ट रूप से कोई उपबंध नहीं है, लेकिन यह

ऋजुतः स्पष्ट है कि याची को आरोपों का उत्तर देने और अपना बचाव करने का एक उचित अवसर दिया जाना चाहिए । लंबे समय से यह नैसर्गिक न्याय का नियम रहा है कि यदि सुसंगत साक्ष्यिक सामग्री का खुलासा नहीं होता है तो विनिश्चिय लेने की प्रक्रिया दूषित हो जाएगी ।

15. **इंदु भूषण दिवेदी** बनाम **झारखंड राज्य**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा 'उचित अवसर' का निर्वचन किया गया है और विचार व्यक्त किया गया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उचित अवसर में कर्मचारी के प्रतिकूल सामग्रियों को प्रकट करने का कर्तव्य शामिल है, भले ही इस प्रभाव का कोई कानूनी नियम नहीं हो ।

16. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **चंद्रमा तिवारी** बनाम **भारत संघ द्वारा महाप्रबंधक, पूर्वी रेलवे**[2] वाले मामले में, यह अभिनर्धारित किया है कि अपचारी कर्मचारी को दस्तावेजों का खुलासा न करना उचित अवसर से इनकार करने के बराबर होगा । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है कि :–

> "अब यह सुस्थिर है कि यदि प्रारंभिक अन्वेषण में या अन्वेषण के दौरान लेखबद्ध किए गए साक्षियों के कथन सहित सुसंगत और महत्वपूर्ण दस्तावेजों की प्रतियां अन्वेषण का सामना कर रहे अपचारी अधिकारी को नहीं दी जाती है और यदि ऐसे दस्तावेजों का अपचारी अधिकारी के विरुद्ध आरोप साबित करने के लिए अवलंब लिया जाता है तो नैसर्गिक न्याय के सिद्धातों के उल्लंघन के लिए अन्वेषण दूषित हो जाएगा । इसी प्रकार, यदि किसी दांडिक मामले की परीक्षा के दौरान या प्रारंभिक परीक्षा में लेखबद्ध किए गए साक्षियों के कथन अपचारी अधिकारी को नहीं दिए जाते हैं, तो यह प्रभावी प्रतिपरीक्षा के अवसर से इनकार करने के बराबर होगा । उन तथ्यों और परिस्थितियों को पूरी तरह से समझना मुश्किल है जो नैसर्गिक न्याय के सिद्धातों का उल्लंघन

---

[1] (2010) 11 एस. सी. सी. 278.

[2] (1987) (सप्ली.) एस. सी. सी. 518.

कर सकते हैं या बचाव के उचित अवसर से इनकार कर सकते हैं । इस प्रश्न का निर्धारण प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर किया जाना चाहिए ।

17. इसी प्रकार, **सरोज कुमार सिन्हा** (उपर्युक्त) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि आरोप पत्र का आधार बनाने वाले दस्तावेजों की प्रतियों का खुलासा न करना, जिससे जांच कार्यवाही में सरकारी कर्मचारी को नुकसान पहुंचने की संभावना है और स्पष्ट रूप से सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध जांच में लगाए गए आरोपों का समुचित और प्रभावी खण्डन प्रस्तुत करने के लिए समुचित अवसर देने से वंचित करना होगा । पैरा 29, 36 और 38 में निम्नानुसार कहा गया है :-

> “29. सुसंगत दस्तावेजों की प्रतिलिपि नहीं देने का प्रभाव, डी स्मिथ, वूल्फ और जोवेल की प्रशासनिक कार्रवाई की न्यायिक पुनर्विलोकन पांचवें संस्करण, पृष्ठ 442 में इस प्रकार कथित है –
>
> > “यदि सुसंगत साक्ष्य और दस्तावेज, अपचारी अधिकारी को नही दिया जाता तो यह प्रथमदृष्ट्या अनुचित है, भले ही विचाराधीन साक्ष्य और दस्तावेज सुनवाई से पहले, सुनवाई के दौरान या बाद में उत्पन्न हुई हों । इस प्रतिपादना को बड़े पैमाने पर आधुनिक मामलों जिनमें प्रशासनिक अधिकरणों और अन्य न्यायनिर्णयन निकायों द्वारा अप्रकट रिपोर्टों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है । यदि विनिश्चय करने वाला निकाय न्यायिक अधिकरण जैसा है या उसके पास न्यायिक अधिकरण जैसा ढांचा है और उसे एकपक्षीय साक्ष्य प्राप्त होता है या जो पूरी तरह से प्रकट नहीं किया गया है, तो निर्णय को खारिज करने की सम्भावना मजबूत हो जाती है यह कहावत सही है कि न्याय को होते हुए दिखाना बहुत आवश्यक है ।”
>
> 36. विभागीय जांच का सामना कर रहे सरकारी कर्मचारी को सभी सुसंगत कथन, दस्तावेज और अन्य तथ्य प्राप्त करने का

अधिकार है, ताकि उसे आरोपों के विरुद्ध विभागीय जांच में अपना बचाव करने का समुचित अवसर मिल सके – सुस्थिर विधि के सिद्धांत को पुनः दोहराने की आवश्यकता नहीं है । फिर भी, इस मामले के तथ्यों को देखते हुए हम इस पर जोर दे सकते हैं जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पंजाब राज्य **बनाम** भगत राम (1975) 1 एस. सी. सी. 155 = ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 2335 वाले मामले में अधिकथित किया गया है –

> "राज्य ने यह दलील दी कि प्रत्यर्थी कथनों की प्रतियां प्राप्त करने के हकदार नहीं हैं । राज्य ने यह कारण दिया कि प्रत्यर्थी को साक्षियों से प्रतिपरीक्षा करने का अवसर दिया गया था और प्रतिपरीक्षा के दौरान प्रत्यर्थी को कथनों के बारे में साक्षियों से सामना करने का अवसर मिलेगा । यह दलील दी गई कि सारांश, प्रत्यर्थी को साक्ष्य के सार से परिचित कराने के लिए पर्याप्त था । प्रस्तावित कार्रवाई के विरुद्ध, कारण बताने के समुचित अवसर का अभिप्राय यह है कि सरकारी कर्मचारी को उन आरोपों के विरुद्ध अपना बचाव करने का समुचित अवसर दिया जाना चाहिए, जिन पर जांच की गई है । सरकारी कर्मचारी को अपनी दोषिता से इनकार करने और अपनी निर्दोषिता साबित करने का अवसर दिया जाना चाहिए । वह ऐसा तभी कर सकता है जब उसे बताया जाए कि उसके विरुद्ध आरोप क्या हैं । कथन देने का उद्देश्य यह है कि सरकारी कर्मचारी अपने विरुद्ध जांच के लिए प्रस्तावित साक्षियों के पिछले कथनों का संदर्भ दे सकेगा । जब तक कथन सरकारी कर्मचारी को नहीं दिए जाते, तब तक वह प्रभावी और उपयोगी प्रतिपरीक्षा नहीं कर पाएगा । सरकारी कर्मचारी को जांच के दौरान परीक्षित साक्षियों के कथनों और सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों के समर्थन में जांच में पेश किए गए साक्षियों के बयानों की प्रतियां देने से इनकार करना अन्यायपूर्ण और अऋजु है । सारांश दे देना, सरकारी कर्मचारी को प्रस्तावित कार्रवाई के विरुद्ध कारण

बताने का युक्तियुक्त अवसर देने की आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता है ।

38. हमारी राय में, अपीलार्थी इस बात का कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण देने में बुरी तरह विफल रहे हैं कि प्रत्यर्थी को दस्तावेज क्यों नहीं दिए गए । अतः उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने समुचित तौर पर पदच्युति आदेश को अपास्त किया है ।"

18. इसके पश्चात्, माननीय न्यायाधीशों ने **बिलासपुर रायपुर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक** (उपर्युक्त) वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया कि यदि आरोप पत्र के साथ ऐसे दस्तावेजों को (जिनके आधार पर आरोप विरचित किए गए हैं और निष्कर्ष अभिलिखित किए गए हैं) अपचारी अधिकारी को नहीं दिए गए हैं तो दंड का आदेश कायम रखे जाने योग्य नहीं होगा ।

19. उपरोक्त कथित निर्णयों में, माननीय उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा अधिकथित विधि के सिद्धांत के प्रकाश में, वर्तमान मामले के तथ्यों का उल्लेख करते हुए, यह स्वीकृत है कि प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक द्वारा 59 दस्तावेज प्रदर्शित किए गए थे तथा उनमें से कोई भी याची को उपलब्ध नहीं कराया गया था । ऐसा कथन किया गया है कि याची द्वारा उक्त दस्तावेजों का निरीक्षण किया गया था जो कि केवल औपचारिकता प्रतीत होती है, क्योंकि इस न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है, जिससे यह उपदर्शित हो सके कि याची को उन दस्तावेजों का निरीक्षण करने की अनुमति दी गई थी, जबकि 59 दस्तावेज प्रदर्शित किए गए थे तथा उनमें से पांच दस्तावेज तो अभिलेख पर प्रस्तुत ही नहीं किए गए थे तथा 9 दस्तावेज मूल दस्तावेजों की प्रतिलिपि थे । इसी प्रकार, याची का पक्षकथन यह है कि साक्षियों की सूची भी उसे नहीं दी गई है, अतः वह अपना बचाव ठीक से नहीं कर सका, जबकि उत्तर के पैरा 5 में, प्रत्यर्थियों का यह रुख है कि यद्यपि साक्षियों की सूची याची को नहीं दी गई, फिर भी, जांच के दौरान साक्षियों को याची से मिलवाया गया था और उसे उक्त साक्षियों से बहस करने की अनुमति दी गई थी । इस प्रकार, याची को प्रदर्शित दस्तावेज नहीं दिए गए, जो उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का

आधार थे, यद्यपि बड़ी मात्रा में दस्तावेज प्रस्तुत किए गए थे और प्रदर्शित किए गए थे । बैंक कर्मचारी के लिए 59 दस्तावेजों का निरीक्षण करना और उनका नोट बनाना और बैंक के साक्षियों से बहस करना बेहद मुश्किल है । प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक द्वारा याची को उक्त दस्तावेज उपलब्ध न कराने का कोई कारण नहीं बताया गया है तथा उन 59 दस्तावेजों में से पांच दस्तावेज तो प्रस्तुत ही नहीं किए गए, लेकिन प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक ने उनका अवलंब लिया है तथा उनमें प्रस्तुत 9 दस्तावेज मूल दस्तावेजों की प्रतिलिपि थे, जो साक्ष्य में अग्राह्य होने के कारण सक्षम अधिकारी द्वारा विचारणीय नहीं थे । इसी प्रकार, याची को दी गई साक्षियों की सूची भी उपलब्ध नहीं कराई गई थी, जिसके कारण याची को आरोपों का उत्तर देने तथा अपना बचाव करने के लिए युक्तियुक्त अवसर से वंचित किया गया, जिससे उसके साथ गंभीर प्रतिकूलता कारित हुई है, जैसा कि ऊपर उल्लिखित माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों में अभिनिर्धारित किया गया है ।

प्रश्न 10 (ख), (ग) एवं (घ) का उत्तर :

20. यह स्वीकृत रूप से और निर्विवाद है कि, याची को तारीख 7 अप्रैल, 2012 के आदेश (उपाबंध प्रदर्श/5) द्वारा जारी कारण बताओ नोटिस के साथ जांच रिपोर्ट उपलब्ध नहीं कराई गई थी, जिसके द्वारा उसके विरुद्ध विनियम 2007 की धारा 38(1)(ख)(v) के अंतर्गत पदच्युति का अनंतिम आदेश पारित किया गया था । याची को जांच रिपोर्ट की प्रति नहीं दी गई है, जो पैरा 3.10 में प्रत्यर्थी द्वारा फाइल उत्तर से स्पष्ट है, जिसमें अभिकथित किया गया है कि तारीख 7 अप्रैल, 2012 का कारण बताओ नोटिस स्वयं प्रदर्शित करता है कि प्रस्तावित कारण बताओ नोटिस में जांच अधिकारी की रिपोर्ट का विस्तार से उल्लेख किया गया है । कारण बताओ नोटिस जारी किया गया है और याची को सुनवाई का पर्याप्त अवसर दिया गया है । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पदच्युति का विवादित आदेश पारित करने से पहले याची को जांच रिपोर्ट की प्रति नहीं दी गई है ।

21. उच्चतम न्यायालय ने **भारत सरकार** बनाम **मो. रमजान खान**[1]

---

[1] (1991) एस. सी. सी. 588.

वाले मामले में, यह अभिनिर्धारित किया है कि एक अपचारी कर्मचारी जांच रिपोर्ट की प्रति पाने का हकदार है और यदि वह चाहे तो इसके विरुद्ध अभ्यावेदन देने का भी हकदार होगा और रिपोर्ट न देना नैसर्गिक न्याय के नियमों का उल्लंघन होगा ।

22. **प्रबंध निदेशक, ईसीआईएल** (पूर्वोक्त) वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधानिक न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जब जांच अधिकारी, अनुशासनात्मक अधिकारी से अलग होता है, तो अपचारी कर्मचारी, जांच अधिकारी की रिपोर्ट की प्रति पाने का हकदार होता है, जो कि दंड का निर्णय पारित करने के पहले दिया जाना चाहिए । पैरा 26 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि :–

> "26 जांच अधिकारी की रिपोर्ट प्राप्त करने के अधिकार को प्रथम चरण में क्यों युक्तियुक्त अवसर का एक अनिवार्य हिस्सा और नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत माना जाता है, इसका उत्तर यह है कि जांच अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्ष अनुशासनात्मक प्राधिकारी के समक्ष एक महत्वपूर्ण तथ्य बनते हैं, जिसे साक्ष्य के साथ-साथ निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विचार में लिया जाता है । यह पहले से कहना मुश्किल होता है कि रिपोर्ट में सुझाए गए दंड सहित उक्त निष्कर्ष, यदि कोई हो, किस हद तक अनुशासनात्मक प्राधिकारी को अपने निष्कर्ष निकालते समय प्रभावित करेंगे । निष्कर्षों को अभिलेख पर उपस्थित सुसंगत साक्ष्य पर विचार किए बिना या गलत व्याख्या करके या उनके द्वारा समर्थित नहीं होने के बिना अभिलिखित किया जा सकता है । यदि ऐसा निष्कर्ष अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा विचार किए जाने वाले दस्तावेज में से एक है, तो नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार यह आवश्यक है कि कर्मचारी को अपचारी ठहराए जाने से पहले उसे तथ्य को समझने और उसका विरोध का करने का युक्तियुक्त अवसर दिया जाना चाहिए । यह न्याय के सिद्धांतों का अतिलंघन होगा यदि कर्मचारी को जांच अधिकारी जैसे तीसरे पक्ष द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों का उत्तर देने का अवसर नहीं दिया

जाता है और जो उस अधिकारी को एक युक्तियुक्त अवसर देने से वंचित करने के समान होगा । यद्यपि, यह सत्य है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी को जांच में अभिलिखित साक्ष्य के आधार पर अपने निष्कर्षों तक पहुंचना चाहिए, यह भी उतना ही सत्य है जितना कि अनुशासनात्मक जांच अधिकारी द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों में अभिलेख पर उपस्थित साक्ष्य को ध्यान में रखना होता है । इन परिस्थितियों में, जांच अधिकारी के निष्कर्ष, अनुशासनात्मक प्राधिकारी के समक्ष एक महत्वपूर्ण तथ्य का गठन करते हैं जो उसके निष्कर्षों को प्रभावित कर सकते हैं । यदि जांच अधिकारी केवल साक्ष्य अभिलखित करके उसे अनुशासनात्मक अधिकारी के पास भेज देता है, तो वह अनुशासनात्मक अधिकारी के समक्ष कोई अतिरिक्त तथ्य नहीं होगा, जिसके बारे में अपचारी कर्मचारी को कोई जानकारी नहीं होगी । यद्यपि, वह जांच अधिकारी आगे बढ़ता है और अपने निष्कर्षों को अभिलिखित करता है, जैसा कि ऊपर अधिकथित किया गया है, जो अभिलेख पर उपस्थित साक्ष्य पर आधारित हो सकते हैं या नहीं भी हो सकते हैं या उनके विपरीत हो सकते हैं, तो ऐसे निष्कर्ष कर्मचारी के लिए अज्ञात अतिरिक्त तथ्य हैं, लेकिन अनुशासनात्मक अधिकारी द्वारा अपने निष्कर्ष पर पहुंचते समय उन पर विचार किया जाता है । अतः युक्तियुक्त अवसर के साथ-साथ नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार, यह आवश्यक है कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा अपने निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले, अपचारी कर्मचारी को जांच अधिकारी के निष्कर्षों का उत्तर देने का अवसर दिया जाना चाहिए । इसके बाद अनुशासनात्मक प्राधिकारी को साक्ष्य, जांच अधिकारी की रिपोर्ट और कर्मचारी को उसके विरुद्ध दिए गए अभ्यावेदन पर विचार करना आवश्यक है ।”

23. वर्तमान मामले में, स्वीकृतः तथा निर्विवाद रूप से, याची को कोई जांच रिपोर्ट नहीं दी गई है तथा उसे तारीख 7 मई, 2012 का दूसरा कारण बताओ नोटिस (उपाबंध प्रदर्श/5) जारी किया गया था,

जिसमें सेवा से पदच्युति का अस्थायी आदेश प्रस्तावित किया गया था, जिसमें इस प्रकार अधिकथित किया गया था :-

पत्र क्रमांक/सतर्कता/2/2012-43 तारीख 7 अप्रैल, 2012

श्री एच. के. लगर

निलंबित अधिकारी

छतीसगढ़ ग्रामीण बैंक

शाखा सक्ती

जिला बिलासपुर (छ. ग.)

प्रिय महोदय

कारण बताओ नोटिस

आपको सुपुर्द किए गए आक्षेप सह आरोप पत्र क्रं. सतर्कता/0/2008-09, तारीख 20 अगस्त, 2008 पर सम्पन्न जांच कार्यवाही की संक्षेपिका का सूक्ष्म अध्यन करने तथा दस्तावेजी साक्ष्यों एवं साक्षियों के अभिवाकों का अवलोकन करने के उपरांत आपके ऊपर लगाए गए अधिकांश आरोपों को प्रमाणित पाते हुए अनुशासनिक अधिकारी द्वारा आपको सेवा की पदच्युति (Dismissal from service) करने के दण्ड से दण्डित करने का अन्तिम निर्णय लिया गया है । आपके निलंबन काल को बैंक की सेवा में न मानते हुए उक्त अवधि का वेतन भुगतान नहीं किया जाएगा । कृप्या इस पत्र की प्राप्ति के 5 दिनों के अंदर अवगत कराए कि क्यों न आपको प्रस्तावित दण्ड से दण्डित किया जाए ।

2. निर्धारित समयावधि में आपका उत्तर प्राप्त न होने पर यह मानकर कि आपको इस विषय में कुछ नहीं कहना है, अनुशासनिक अधिकारी द्वारा अगली कार्यवाही की जाएगी जो प्रतिकूलता से रहित मानी जाएगी ।

3. अनुशासनिक अधिकारी द्वारा पारित अन्तिम आदेश

तारीख 7 अप्रैल, 2012 संलग्न है । इस पत्र की द्वितीय प्राप्ति पर पावती तिथियुक्त हस्ताक्षर कर हमें प्रेषित करें ।

भवदीय,

सही/-

अध्यक्ष

संलग्र : उपरोक्तानुसार ।

24. पूर्वोक्त कारण बताओ नोटिस का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक ने याची की सेवाओं को अस्थायी रूप से समाप्त करने का निर्णय पहले ही ले लिया था और इस प्रकार कारण बताओ नोटिस मात्र औपचारिकता थी । **सीमेंस लिमिटेड** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि यदि कारण बताओ नोटिस जारी करते समय सक्षम प्राधिकारी ने पहले से ही मन बनाकर कारण बताओ नोटिस जारी किया है, तो कोई सार्थक परिणाम नहीं निकलेगा और पैरा 11 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :–

> "11. उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत आदेश और प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत प्रति-शपथपत्र में, हमारे समक्ष दिए गए साक्ष्य के अवलोकन से हम संतुष्ट हैं कि अधिकारी ने पहले ही अपना मन बना लिया था और अपीलार्थी की देयता के संबंध में एक राय बना ली है । यदि आदेश पारित करते समय प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी की देयता का निर्धारण कर लिया है और उसके विचार के लिए केवल एक ही प्रश्न शेष है कि देयता कितनी होगी, तो कारण बताओ नोटिस का कोई औचित्य नहीं है । हमारी राय में, रिट याचिका सुनवाई योग्य थी ।

25. इस प्रकार, तारीख 7 अप्रैल, 2012 को याची को जारी किया गया नोटिस (उपाबंध प्रदर्श/5) एक औपचारिकता मात्र थी और प्रत्यर्थी

---

[1] (2006) 12 एस. सी. सी. 33.

सं. 1 बैंक ने पहले ही निर्णय ले लिया था और सेवा से पदच्युति का आदेश दे दिया था और जब याची द्वारा उत्तर फाइल किया गया, तो प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक ने निष्कर्ष निकाला कि याची तारीख 7 अप्रैल, 2012 के पदच्युति के अंनतिम आदेश में सक्षम अधिकारी को हस्तक्षेप करने का समुचित कारण नहीं बताया । इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक, याची को अपना बचाव करने के लिए युक्तियुक्त अवसर प्रदान करने में विफल रहा जिसके कारण उसे प्रतिकूलता का सामना करना पड़ा । अन्यथा भी, पदच्युति संबंधी विनिमय, 2007 के अंतर्गत अनंतिम विचाराधीन आदेश का सेवा न्यायशास्त्र में कोई अस्तित्व नहीं है ।

प्रश्न 10 (ई) का उत्तर :

26. अपीली प्राधिकारी को विनियम, 2007 के विनिमय 48 (ii) के अनुसार, अपील पर निर्णय लेना अपेक्षित था, जिसमें निम्नलिखित अधिकथित है :-

"48. अपीली प्राधिकारी अपील निम्न प्रकार से की जा सकेगी –

(i) बोर्ड में जहां अध्यक्ष या समिति या निदेशक सक्षम अधिकारी हैं, उसके समक्ष

(ii) अध्यक्ष के समक्ष यहां कोई अधिकारी सक्षम अधिकारी है,"

27. याची को सेवा से हटाने का दंड अधिरोपित करते हुए, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित तारीख 24 मई, 2012 का आदेश निम्नलिखित है :-

छतीसगढ़ ग्रामीण बैंक

प्रधान कार्यालय, रायपुर

अंतिम आदेश

श्री एच. के. लगर (निलंबित अधिकारी), शाखा सक्ती को शाखा लिमतरा में शाखा प्रबंधक के पद पर कार्य करते हुए बरती

गई अनियमितताओं हेतु आक्षेप सह आरोप पत्र क्रं. सतर्कता 1 अगस्त, 2009 तारीख 20 अगस्त, 2008 दिया गया था । श्री लगर को बचाव का समुचित अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करते हुए जांच कार्यवाही सम्पन्न कराई गई । जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत जांच प्रतिवेदन एवं समस्त तथ्यों के सूक्ष्य अवलोकन के पश्चात् अनुशासनिक अधिकारी द्वारा श्री लगर (निलंबित अधिकारी) को छतीसगढ़ ग्रामीण बैंक अधिकारी एवं कर्मचारी सेवा विनियम 2007 की कंडिका 38(1)ख(V)/2010 की कंडिका 39(1)ख(V) के अंतर्गत सेवा से पदच्युति करने के दण्ड से दण्डित करने का अनन्तिम आदेश तारीख 7 अप्रैल, 2012 को पारित करते हुए, कारण बताओ नोटिस जारी किया गया ।

श्री लगर द्वारा दिया गया कारण बताओ नोटिस का उत्तर तारीख 19 मई, 2012 को प्राप्त हुआ है । श्री लगर ने अपने उत्तर/बचाव में ऐसा नया तथ्य प्रस्तुत नहीं किया है जिसके कारण अनन्तिम आदेश में परिवर्तन संभाव्य हो । अत: अनन्तिम आदेश को यथावत् रखते हुए श्री लगर को सेवा से पदच्युति करने के दण्ड अंतिम आदेश पारित करता हूं । मेरा यह आदेश मेरे पूर्व के अनन्तिम आदेश तारीख 7 अप्रैल, 2012 के तारतम्य में पढ़ा जाए । यह आदेश तत्काल प्रभाव से प्रभावशील है ।

(शेखर श्रीवास्तव) स्थान - रायपुर

अनुशासनिक अधिकारी तारीख- 24 अप्रैल, 2012

छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक

प्रधान कार्यालय, रायपुर

28. अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित तारीख 24 मई 2012 के पूर्वोक्त आदेश को याची द्वारा अपील में चुनौती दी गई थी, जिसमें अनुशासनात्मक प्राधिकारी के आदेश को तारीख 30 अगस्त, 2012 को

आयोजित निदेशक मंडल की बैठक में विचार किया गया था । तारीख 30 अगस्त, 2012 के आदेश में निम्नलिखित अधिकथित किया गया है :-

छत्तीसगढ़ ग्रामीण बैंक

प्रधान कार्यालय, रायपुर (छ. ग.)

निदेशक मंडल की बैठक तारीख 30 अगस्त, 2012

प्रस्ताव क्रंमांक (28)

अनुशासनिक कार्यवाही के अंतर्गत जारी दण्डादेश के विरुद्ध अपील श्री एच. के. लगर

अपील पर विचार विमर्श करने से पूर्व अध्यक्ष श्री सर्वेश्वर लेंका बैठक से उठकर बाहर चले गए, उनकी अनुपस्थिति में श्री जे. सी. मंहत को अध्यक्ष मनोनीत किया गया तथा निम्न सदस्य बैठक में उपस्थित रहे :-

1. श्री जे. सी. मंहत
2. श्री आनंद उपाध्याय
3. श्री प्रभात गोयल
4. श्री नारायण
5. श्री बसंत यादव

श्री एच. के. लगर की अपील पर सदस्यों द्वारा सभी पहलुओं पर चर्चा करते हुए गहन विचार विर्मश किया गया । सदस्यों द्वारा सर्व सम्मति से अनुशासनिक अधिकारी द्वारा लिए गए निर्णय को यथावत् रखने का निर्णय लिया गया ।

29. विधि की सुस्थिर प्रतिपादना है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही में, अपीली प्राधिकारी अर्ध-न्यायिक क्षमता में कार्य करता है और पारित आदेश सकारण होना चाहिए और अपीलार्थी द्वारा उठाए गए प्रश्न पर विवेक लागू होना चाहिए और यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो अपीली

आदेश दूषित हो जाता है । (देखिए : **प्रभागीय वन अधिकारी, काठगोदाम और अन्य** बनाम **मधुसूदन राव**[1]) ।

30. माननीय उच्चतम न्यायालय ने विधि के इस सिद्धांत को दोहराते हुए यह मत व्यक्त किया कि कानूनी अपील का निर्णय करते समय अपीली प्राधिकारी को न केवल सरकारी कर्मचारी को सुनने की आवश्यकता होती है अपितु अपील में उद्भूत दलील पर विचार करते हुए सकारण आदेश पारित करना चाहिए । (देखिए : **देवकीनंदन शर्मा** बनाम **भारत संघ और अन्य**[2]) ।

31. यद्यपि, अपीली आदेश में उस अनुशासनिक प्राधिकारी की सहमति होती है फिर भी यह सकारण आदेश नहीं हो सकता है, किन्तु इसे पारित करने वाले प्राधिकारी को यह दर्शित करना चाहिए कि उसने अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते समय विधि की अपेक्षानुसार अपने विवेक का प्रयोग किया है, विशेष रूप से जब नियमों में विभिन्न कारकों पर विचार करने की अपेक्षा होती है और विभिन्न दलीलें उद्भूत की गई हैं और वह कारण समनुदेशित करने के लिए बाध्य हैं ताकि न्यायालय यह सुनिश्चित करने के लिए अपने विनिश्चय का पुनर्विलोकन कर सके कि क्या उसने सुसंगत कारकों में अपना विवेक लागू किया है जिसे करना नियमों में अपेक्षित है । (देखिए : **नरिंदर मोहन आर्य** बनाम **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य**[3]) ।

32. इसमें उपर्युक्त वर्णित विधिक प्रतिपादना के प्रकाश में, मामले के तथ्यों का उल्लेख करने से यह नितान्त स्पष्ट है कि अपीली प्राधिकारी ने यह उपदर्शित करने के लिए कोई कारण नहीं बताया है कि उसने उद्भूत आधारों पर अपना विवेक लागू किया है और न ही यह कहने के लिए कोई संक्षिप्त कारण उपदर्शित किया है कि उसने विभागीय जांच करते समय विनियमों के अनुसार उचित प्रक्रिया का पालन किया है और

---

[1] (2008) 3 एस. सी. सी. 469.

[2] (2001) 5 एस. सी. सी. 340.

[3] (2006) 4 एस. सी. सी. 713.

यह भी कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी का निष्कर्ष अभिलेख पर आधारित है और अधिरोपित शास्ति न्यायोचित और समुचित है । इस प्रकार, अपीली प्राधिकारी द्वारा विधि के अनुसरण में अपील का विनिश्चय करने में असफल रहा है ।

33. पूर्वोक्त विधिक प्रतिपादना के परिणामस्वरूप, सेवा से याची की पदच्युति का तारीख 24 मई, 2012 का आदेश (उपाबंध प्रदर्श/8) और साथ ही तारीख 3 सितंबर, 2012 का अपीली आदेश (उपाबंध प्रदर्श/9) को तद्द्वारा अभिखण्डित किया जाता है । प्रत्यर्थी सं. 1 बैंक को यह निर्देश दिया जाता है कि वह याची को सभी परिणामिक सेवा लाभों के साथ पुनः बहाल करें ।

34. तदनुसार, यह रिट याचिका, उपर्युक्त उपदर्शित सीमा तक मंजूर की जाती है । खर्चे के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

रिट याचिका मंजूर की गई ।

मही./क.

मुरलीधर (मृत) के विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से

बनाम

रामलाल और अन्य

(2010 की द्वितीय अपील सं. 9)

तारीख 12 अप्रैल, 2021

न्यायमूर्ति संजय के. अग्रवाल

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 [सपठित संपत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क] – द्वितीय अपील – अचल संपत्ति की विक्रय संविदा – विक्रय विलेख निष्पादित होना – भागिक पालन – संविदा के एक पक्षकार द्वारा संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं होना – दूसरे पक्षकार द्वारा इस आधार पर संविदा भंग कराना – यदि किसी अचल संपत्ति का विक्रय करने के लिए दोनों पक्षकारों के बीच विक्रय करार निष्पादित किया जाता है तो यदि उनमें से एक पक्षकार, संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामंद नहीं है तो दूसरा पक्षकार इस आधार पर संविदा अपने हक में भंग कराने का हकदार होगा ।

वर्तमान मामले में, एकमात्र वादी – मुरलीधर ने प्रारंभ में प्रतिवादियों को वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'क' में दर्शित वाद संपत्ति में उसके कब्जे में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करने के लिए स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया था । इसके पश्चात्, वाद के लंबित रहने के दौरान वादपत्र में संशोधन के माध्यम से, उन्होंने वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति के संबंध में कब्जे की पुन: बहाली के अनुतोष को भी कर लिया था । अभिलेख पर यह स्वीकृत स्थिति है कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 से 3, सभी एक ही पूर्वज के वंशज हैं और वादी तथा प्रतिवादियों के पूर्वजों के मध्य वाद संपत्ति का विभाजन पहले ही हो चुका था । वाद की संपत्ति, प्रतिवादी सं. 1 से 3 के आवेदन पर दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 145 के अधीन कार्यवाही के अध्यधीन थी और अंतत: अपर सत्र न्यायाधीश, रायगढ़

द्वारा अंतिम आदेश पारित किया गया था । वादी का पक्षकथन यह है कि वह वादपत्र की अनुसूची 'क' में दर्शित की गई 6.418 हेक्टेयर माप वाली भूमि पर स्थित वाद संपत्ति का स्वामी और हक-धारक है, जिसमें प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने अवैध हस्तक्षेप करना प्रारंभ कर दिया है, इसलिए, वादी के पक्ष में स्थायी व्यादेश का अनुतोष प्रदान किया जाए तथा वह वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई वाद संपत्ति पर कब्जे की पुन: बहाली के अनुतोष का भी हकदार है, जिसका माप 1.781 हेक्टेयर है । प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने अपने लिखित कथन फाइल किए और यह विनिर्दिष्ट आधार लिया कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 के बीच तारीख 1 जुलाई, 2000 को विक्रय करार (प्रदर्श घ/1) किया गया है, जिसके द्वारा वादी ने प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में वाद अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति को अन्यसंक्रांत करने पर सहमति व्यक्त की थी, इस प्रकार, वादी वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति पर कब्जे की डिक्री का हकदार नहीं है और उसका वाद खारिज किए जाने के योग्य है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों का मूल्यांकन करने के पश्चात्, यह अभिनिर्धारित किया है यद्यपि वादी वादपत्र की अनुसूची 'क' में दर्शित की गई वाद संपत्ति का स्वामी एवं हक-धारक है, किन्तु वह वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई वाद संपत्ति पर कब्जे की डिक्री का हकदार नहीं है, क्योंकि वह पूर्व में ही तारीख 1 जुलाई, 2000 के विक्रय करार (प्रदर्श घ/1) के आधार पर प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में उक्त वाद संपत्ति को अन्यसंक्रांत करने के लिए सहमत हो चुका है और तद्नुसार, वाद को तारीख 28 फरवरी, 2007 के निर्णय एवं डिक्री के माध्यम से खारिज कर दिया था, जिसके विरुद्ध अपीलार्थी/वादी ने अपील प्रस्तुत की है, किन्तु विद्वान् प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी विचारण न्यायालय के तारीख 28 फरवरी, 2007 के निर्णय एवं डिक्री की पुष्टि कर दी और अपील को तारीख 7 अक्तूबर, 2009 के आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री के द्वारा खारिज कर दिया था । अपीलार्थी/वादी (अब उसके विधिक प्रतिनिधि) ने व्यथित होकर, वर्तमान अपील को प्रस्तुत किया है, जिसे विधि के दो सारवान् प्रश्नों को विरचित करके स्वीकार किया गया है, जिसे निर्णय के प्रारंभिक पैरा में विरचित किया गया है । द्वितीय अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – पूर्वोक्त विधिक प्रास्थिति के आलोक में, मामले के तथ्यों का उल्लेख करते हुए, यह ध्यान रखना समुचित होगा कि वर्तमान मामले में यह विवाद में नहीं है कि अंतरिती/प्रतिवादी सं. 1 ने संविदा के भागिक पालन में वाद संपत्ति पर कब्जा लिया है, लेकिन लिखित कथन का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि इसके लिए कोई अभिवाक् नहीं किया है कि वह संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द है । प्रतिवादी सं. 1 का यह कर्तव्य था कि वह संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 55(1)(घ) के अधीन वादी के समक्ष विक्रय विलेख का समुचित प्रारूप प्रस्तावित करके विक्रय विलेख को पूरा करना सुनिश्चित करता । प्रतिवादियों का भी यह कर्तव्य था कि वे भारतीय स्टाम्प अधिनियम की धारा 29 (ग) के अधीन विक्रय विलेख के व्यय को वहन करे और विक्रय विलेख को निष्पादित करते । प्रतिवादी, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-क के अधीन संविदा के अपने भाग का पालन करने को तैयार और रजामंद थे, यह दर्शित करने में असफल रहे हैं । उन्हें वादी का विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए लिखित सूचना भेजनी चाहिए थी । इस तरह की सूचना भेजने में उनकी असफलता यह दर्शित करती है कि वे संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द नहीं थे और तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि प्रतिवादी, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-क के अधीन वाद की संपत्ति पर कब्जा पाने के हकदार नहीं हैं । इस प्रकार, दोनों निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में विधिक त्रुटि की है कि प्रतिवादी, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-क के आधार पर वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित वाद संपत्ति पर अपने कब्जे का संरक्षण पाने के हकदार हैं, विशिष्ट रूप से इस कारण से कि प्रतिवादियों ने यह अभिवाक् नहीं किया कि वे संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द थे । विनिर्दिष्ट रूप से, यह उनके लिए था कि वे लिखित कथन में ऐसा करें और मुख्य साक्ष्य प्रस्तुत करके उसे सिद्ध करें, लेकिन उनके द्वारा ऐसा कोई अभिवाक् नहीं किया गया है और यह स्पष्ट है कि वे संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द नहीं थे । तद्नुसार, सारवान् विधि के प्रश्न सं. 1 का उत्तर

प्रतिवादियों के पक्ष में और वादी के विरुद्ध दिया जाता है । प्रारंभ में वादी ने शाश्वत व्यादेश के लिए वाद फाइल किया था, बाद में, तारीख 26 अगस्त, 2003 के आदेश द्वारा वादपत्र में संशोधन किया गया और वादपत्र में संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित वाद संपत्ति के सम्बन्ध में कब्जे की बरामदगी के अनुतोष को सम्मिलित किया गया, जिसकी माप का क्षेत्रफल 1.781 हेक्टेयर है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने वाद को इस आधार पर खारिज कर दिया था कि शाश्वत व्यादेश के अनुतोष के साथ-साथ वादी ने कब्जा दिलाने के लिए भी दावा किया है, किन्तु उसके वाद का तद्नुसार मूल्यांकन नहीं किया गया था, जिसकी पुष्टि प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा भी की गई है । ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों निचले न्यायालयों ने सी.पी.सी. के आदेश 7, नियम 11 (ख) के अधीन अन्तर्विष्ट उपबंधों की अनदेखी की है, जिसमें यह उपबंध है कि जहां दावाकृत अनुतोष कम मूल्यांकित होता है, और वादी, न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर न्यायालय द्वारा अपेक्षित मूल्यांकन को ठीक करने में असफल रहता है, तो उसके बाद वादपत्र नामंजूर कर दिया जाएगा । इस प्रकार, यदि विचारण न्यायालय के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि दावाकृत अनुतोष कम मूल्यांकित है, तो उन्हें मूल्यांकन को ठीक करने के लिए वादी को समय देना चाहिए । (पैरा 24, 25, 26 और 27)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 12201 : **दीपक सिंगला** बनाम **कांता नागपाल** ;	7
[2017]	(2017) 4 एस. सी. सी. 723 : **वासंथी** बनाम **वेणुगोपाल (मृत) मार्फत विधिक प्रतिनिधिगण** ;	7, 17
[2017]	ए. आई. आर. 2017 उड़ीसा 128 : **जगन्नाथ मलिक** बनाम **सुरेन्द्र गर्तिया** ;	7
[2014]	(2014) 4 एस. सी. सी. 163 : **मनोहरन** बनाम **शिवराजन** ;	29

[2009]	(2009) 10 एस. सी. सी. 223 : **एफ. जी. पी. लिमिटेड** बनाम **सालेह हुसैनी डाक्टर और अन्य** ;	8, 18
[2007]	(2007) 14 एस. सी. सी. 87 : **ए. लुईस और एक अन्य** बनाम **एम. टी. राममूर्ति और अन्य** ;	19
[2004]	(2004) 8 एस. सी. सी. 614 : **रामभाऊ नामदेव गजरे** बनाम **नारायण बापूजी धोत्रा (मृत) मार्फत इसके विधिक प्रतिनिधिगण** ;	14
[2002]	(2002) 3 एस. सी. सी. 676 : **श्रीमंत शामराव सूर्यवंशी और अन्य** बनाम **प्रहलाद भैरोवा सूर्यवंशी (मृत) मार्फत इसके विधिक प्रतिनिधिगण और अन्य** ;	15
[1988]	(1988) 3 एस. सी. सी. 423 : **वाणिज्यिक विमानन एण्ड यात्रा कंपनी और अन्य** बनाम **विमला पन्नालाल** ;	28
[1983]	ए. आई. आर. 1983 उड़ीसा 107 : **बरूना गिरी** बनाम **राजकिशोर गिरी** ।	23

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2010 की द्वितीय अपील संख्या 9.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री आर. एन. पुस्ती, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री बी.एन. नंदे, अधिवक्ता

राज्य की ओर से श्री रवि भगत, उप शासकीय अधिवक्ता

न्यायमूर्ति संजय के. अग्रवाल – अपीलार्थी/वादी (अब उनके विधिक प्रतिनिधि) द्वारा प्रस्तुत इस द्वितीय अपील को निम्नलिखित विधि के दो सारवान् प्रश्नों पर तारीख 26 अगस्त 2020 को सुनवाई के लिए स्वीकार किया गया था :–

"1. क्या दोनों निचले न्यायालयों द्वारा प्रतिवादियों के पक्ष में वादी द्वारा अभिकथित रूप से निष्पादित प्रदर्श डी/1 के आधार पर वादी के पक्ष में कब्जे की पुन: बहाली के अनुतोष से इनकार करना न्यायोचित है, वह भी एक ऐसे निष्कर्ष को अभिलिखित करके जो अभिलेख से अनुचित और प्रतिकूल है ?

2. क्या दोनों निचले न्यायालयों द्वारा न्यायालय फीस के अभाव में वाद को खारिज किया जाना न्यायोचित है ?"

[इसमें इसके पश्चात् पक्षकारों को उनकी दी गई स्थिति और विचारण न्यायालय के समक्ष दर्शित क्रम के अनुसार निर्दिष्ट किया जाएगा ।]

2. एकमात्र वादी – मुरलीधर ने प्रारंभ में प्रतिवादियों को वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'क' में दर्शित वाद संपत्ति में उसके कब्जे में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करने के लिए स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया था । इसके पश्चात्, वाद के लंबित रहने के दौरान वादपत्र में संशोधन के माध्यम से, उन्होंने वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति के संबंध में कब्जे की पुन: बहाली के अनुतोष को भी कर लिया था ।

3. अभिलेख पर यह स्वीकृत स्थिति है कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 से 3, सभी एक ही पूर्वज के वंशज हैं और वादी तथा प्रतिवादियों के पूर्वजों के मध्य वाद संपत्ति का विभाजन पहले ही हो चुका था । वाद की संपत्ति, प्रतिवादी सं. 1 से 3 के आवेदन पर दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 145 के अधीन कार्यवाही के अध्यधीन थी और अंतत: अपर सत्र न्यायाधीश, रायगढ़ द्वारा अंतिम आदेश पारित किया गया था ।

4. वादी का पक्षकथन यह है कि वह वादपत्र की अनुसूची 'क' में दर्शित की गई 6.418 हेक्टेयर माप वाली भूमि पर स्थित वाद संपत्ति का स्वामी और हक-धारक है, जिसमें प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने अवैध हस्तक्षेप करना प्रारंभ कर दिया है, इसलिए, वादी के पक्ष में स्थायी व्यादेश का अनुतोष प्रदान किया जाए तथा वह वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई वाद संपत्ति पर कब्जे की पुन: बहाली के अनुतोष का भी हकदार है, जिसका माप 1.781 हेक्टेयर है ।

5. प्रतिवादी सं. 1 से 3 ने अपने लिखित कथन फाइल किए और यह विनिर्दिष्ट आधार लिया कि वादी और प्रतिवादी सं. 1 के बीच तारीख 1 जुलाई, 2000 को विक्रय करार (प्रदर्श घ/1) किया गया है, जिसके द्वारा वादी ने प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में वाद अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति को अन्यसंक्रांत करने पर सहमति व्यक्त की थी, इस प्रकार, वादी वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति पर कब्जे की डिक्री का हकदार नहीं है और उसका वाद खारिज किए जाने के योग्य है ।

6. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों का मूल्यांकन करने के पश्चात्, यह अभिनिर्धारित किया है यद्यपि वादी वादपत्र की अनुसूची 'क' में दर्शित की गई वाद संपत्ति का स्वामी एवं हक-धारक है, किन्तु वह वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई वाद संपत्ति पर कब्जे की डिक्री का हकदार नहीं है, क्योंकि वह पूर्व में ही तारीख 1 जुलाई, 2000 के विक्रय करार (प्रदर्श घ/1) के आधार पर प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में उक्त वाद संपत्ति को अन्यसंक्रांत करने के लिए सहमत हो चुका है और तद्नुसार, वाद को तारीख 28 फरवरी, 2007 के निर्णय एवं डिक्री के माध्यम से खारिज कर दिया था, जिसके विरुद्ध अपीलार्थी/वादी ने अपील प्रस्तुत की है, किन्तु विद्वान् प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी विचारण न्यायालय के तारीख 28 फरवरी, 2007 के निर्णय एवं डिक्री की पुष्टि कर दी और अपील को तारीख 7 अक्तूबर, 2009 के आक्षेपित निर्णय एंव डिक्री के द्वारा खारिज कर दिया था । अपीलार्थी/वादी (अब उसके विधिक प्रतिनिधि) ने व्यथित होकर, वर्तमान अपील को प्रस्तुत किया है, जिसे विधि के दो सारवान् प्रश्नों को विरचित करके स्वीकार किया गया है, जिसे निर्णय के प्रारंभिक पैरा में विरचित किया गया है ।

7. अपीलार्थी/वादी के विद्वान् काउंसेल श्री आर. एन. पुस्ती ने निवेदन किया है कि दोनों निचले न्यायालयों ने संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53 'क' का अवलंब लेकर समान रूप से त्रुटि की है और यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिवादी सं. 1 वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति पर कब्जा बनाए रखने का

हकदार है, क्योंकि इसमें धारा 53 'क' का आवश्यक अवयव पूर्ण रूप से लुप्त है । अपीलार्थी/वादी के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि प्रतिवादी सं. 1 की ओर से किसी भी तैयार और रजामन्द होने का अभिवचन नहीं किया गया है और उन्होंने विक्रय विलेख (प्रदर्श घ/1) को रजिस्ट्रीकृत कराने के लिए कभी भी नोटिस जारी नहीं किया है और उन्होंने अपने निवेदन के समर्थन में **वासंथी** बनाम **वेणुगोपाल (मृत) मार्फत विधिक प्रतिनिधिगण**[1] वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय के साथ-साथ **दीपक सिंगला** बनाम **कांता नागपाल**[2] वाले मामले में, दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय तथा एक अन्य **जगन्नाथ मलिक** बनाम **सुरेन्द्र गर्तिया**[3] वाले मामले में, उड़ीसा उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया है ।

8. प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों सं. 1 से 3 के विद्वान् काउंसेल श्री बी. एन. नंदे ने निवेदन किया है कि दोनों निचले न्यायालयों ने समवर्ती और सही रूप से वाद खारिज करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है वादी पहले से ही वादपत्र की अनुसूची 'ख' दर्शित संपत्ति को विक्रय करार (प्रदर्श घ/1) द्वारा प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष अन्यसंक्रामण करने के लिए सहमत हो गया था । उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि चूंकि संपूर्ण प्रतिफल का संदाय कर दिया गया है, इसलिए, प्रतिवादी सं. 1 द्वारा कुछ भी किया जाना शेष नहीं है । उन्होंने अपने निवेदन के समर्थन में, उच्चतम न्यायालय द्वारा **एफ. जी. पी. लिमिटेड** बनाम **सालेह हुसैनी डाक्टर और अन्य**[4] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया है ।

9. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना, इसमें उपर्युक्त दिए गए विरोधी निवेदनों पर विचार किया और अभिलेखों का अत्यंत सावधानी से अवलोकन किया है ।

विधि के सारवान् प्रश्न सं. 1 का उत्तर :

---

[1] (2017) 4 एस. सी. सी 723.

[2] 2018 एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 12201.

[3] ए. आई. आर. 2017 उड़ीसा 128.

[4] (2009) 10 एस. सी. सी. 223.

10. मूल वादी मुरलीधर द्वारा वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'क' में दर्शित वाद संपत्ति के संबंध में शाश्वत व्यादेश के लिए फाइल वाद में मूल वादी ने तारीख 26 अगस्त, 2003 के संशोधन द्वारा कब्जे के अनुतोष के लिए भी यह दावा किया है कि वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दी गई माप 1.781 हेक्टेयर वाली वाद संपत्ति के संबंध में भी उसे कब्जे के लिए डिक्री प्रदान की जाए । यद्यपि विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि वादी वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'क' में दर्शित संपत्ति का स्वामी और हक-धारक है, लेकिन जहां तक वादपत्र की अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई संपत्ति का संबंध है, चूंकि वादी ने प्रतिवादी सं. 1 के पक्ष में पूर्व में ही तारीख 1 जुलाई, 2000 (प्रदर्श डी/1) को विक्रय करार निष्पादित कर दिया है, जिसके बदले में प्रतिवादी सं. 1 के द्वारा वादी के पुत्र के उपचार का चिकित्सा व्यय का संदाय किया गया है, इसलिए, वादी वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित संपत्ति के संबंध में कब्जे की डिक्री पाने का हकदार नहीं है, जिसकी अभिपुष्टि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वादी द्वारा प्रतिवादी के पक्ष में विक्रय करार (प्रदर्श डी/1) निष्पादित किया गया था तथा वादी ने संविदा के अपने भाग का पालन नहीं किया और जब एक बार वादी संविदा के अपने भाग का पालन करने में असफल हो जाता है, तो प्रतिवादी सं. 1 से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि वह प्रदर्श डी/1 के अनुसार कार्य करेगा और वादी द्वारा प्रस्तुत अपील को खारिज कर दिया गया था ।

11. अपीलार्थी/वादी के विद्वान् काउंसेल का निवेदन यह है कि प्रतिवादी, विक्रय करार (प्रदर्श डी/1) के अनुसार, अपने भाग का पालन करने में असफल रहे हैं और प्रतिवादियों ने न तो यह अभिवाक् किया है और न ही यह साबित किया है कि वे अपने दायित्व का पालन करने के लिए तैयार और रजामन्द थे तथा विक्रय विलेख को अपने पक्ष में रजिस्ट्रीकृत कराने की दिशा में कोई भी प्रभावी कदम उठाए बिना वे संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53 'क' के अनुसार वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित की गई वाद संपत्ति पर अपने कब्जे के संरक्षण के हकदार नहीं हैं ।

12. इस प्रक्रम पर, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क का उल्लेख करना समुचित होगा :-

"53-क. **भागिक पालन** – जहां कि कोई व्यक्ति किसी स्थावर संपत्ति को प्रतिफलार्थ अन्तरित करने के लिए अपने द्वारा या अपनी ओर से हस्ताक्षरित लेखबद्ध ऐसी संविदा करता है जिसमें उस अंतरण को गठित करने के लिए आवश्यक निबन्धन युक्तियुक्त निश्चय के साथ अभिनिश्चित किए जा सकते हैं,

और अन्तरिती ने संविदा के भागिक पालन में उस संपत्ति या उसके किसी भाग का कब्जा ले लिया है, अन्तरिती, जिसका कब्जा पहले से ही है, संविदा के भागिक पालन में अपना कब्जा चालू रखता है और उस संविदा को अग्रसर करने के लिए कोई कार्य कर चुका है,

और अन्तरिती संविदा के अपने भाग का पालन कर चुका है, या पालन करने के लिए रजामन्द है,

वहां इस बात के होते हुए भी कि जहां कि अन्तरण की कोई लिखत है,

वहां पर अन्तरण किसी तत्समय-प्रवृत्त-विधि द्वारा उसके लिए विहित रीति से पूरा नहीं किया है, अन्तरक या उससे व्युत्पन्न अधिकार के अधीन दावा करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध उस संपत्ति के विषय में, जिन पर अन्तरिती ने कब्जा ले लिया है या चालू रखा है, कोई भी ऐसा अधिकार, जो संविदा के निबन्धनों द्वारा अभिव्यक्त रूप से उपबन्धित अधिकार से भिन्न है, प्रवर्तित कराने से विवर्जित होगा :

परन्तु इस धारा की कोई भी बात ऐसे सप्रतिफल अन्तरिती के अधिकारों पर प्रभाव नहीं डालेगी जिसे उस संविदा या उसके भागिक पालन की कोई सूचना न हो"

13. संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क द्वारा निम्निलिखित शर्तों को अनुध्यात किया गया है :-

(1) किसी भी स्थावर संपत्ति के अंतरण हेतु संविदा होनी चाहिए;

(2) संविदा लिखित रूप में होनी चाहिए; संविदा, अंतरणकर्ता द्वारा या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित होनी चाहिए;

(3) लिखित में ऐसे शब्द होने चाहिए जिसके अंतरण की व्याख्या करने वाली आवश्यक शर्तों को अभिनिश्चित किया जा सके;

(4) अंतरिती को संविदा के भागिक पालन में संपत्ति या उसके किसी भाग पर कब्जा लेना चाहिए;

(5) अंतरिती द्वारा संविदा के अनुसरण में, कोई कार्य किया जाना चाहिए; और

(6) अंतरिती को संविदा के अपने भाग का पालन किया जाना चाहिए या अपने भाग का पालन करने के लिए रजामन्द होना चाहिए ।

14. प्रस्तावित अंतरिती को संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क के अधीन प्रदान किया गया संरक्षण केवल अंतरणकर्ता के विरुद्ध एक कवच है । यह अंतरणकर्ता को प्रस्तावित अंतरिती के ऐसे कब्जे में बाधा डालने से वंचित करता है, जिसे इस प्रकार के करार के अनुसरण में कब्जा दिया गया है । इसका प्रस्तावित अंतरणकर्ता के स्वामित्व से कोई भी संबंध नहीं है, जो तब तक संपत्ति का पूर्ण स्वामी बना रहता है, जब तक कि इसे अंतरिती के पक्ष में रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख निष्पादित करके विधिक रूप से अंतरित नहीं कर दिया जाता है । प्रस्तावित विक्रेता के विरुद्ध कब्जे का संरक्षण, एक ऐसा अधिकार है, जिसे तीसरे पक्षकार के विरुद्ध उपयोग नहीं किया जा सकता है । (देखें : **रामभाऊ नामदेव गजरे** बनाम **नारायण बापूजी धोत्रा (मृत) मार्फत इसके विधिक प्रतिनिधिगण**[1])

15. **श्रीमंत शामराव सूर्यवंशी और अन्य** बनाम **प्रहलाद भैरोबा**

[1] (2004) 8 एस. सी. सी. 614.

सूर्यवंशी (मृत) मार्फत इसके विधिक प्रतिनिधिगण और अन्य[1] वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि विक्रय विलेख के करार के भागिक पालन में सम्पत्ति पर कब्जा प्राप्त करने वाला व्यक्ति अंतरणकर्ता या सम्पत्ति के पश्चात्वर्ती अंतरणकर्ता के अधीन दावा करने वाला व्यक्ति कब्जे की बरामदगी के लिए वाद में अपनी प्रतिरक्षा कर सकता है, भले ही विक्रय विलेख के करार के विनिर्दिष्ट पालन का वाद परिसीमा अवधि से वर्जित हो गया हो और पैरा 16 और 17 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है :–

> "16. किन्तु कुछ शर्तें हैं जिन्हें पूर्ण किया जाना अपेक्षित है यदि कोई अंतरिती अधिनियम की धारा 53-क के अधीन अपने कब्जे में था, बचाव या प्रतिरक्षा करना चाहता है । आवश्यक शर्तें यह हैं –
>
> (1) किसी भी स्थावर संपत्ति की प्रतिफलार्थ अंतरण करने हेतु संविदा होनी चाहिए;
>
> (2) संविदा, लिखित रूप में होनी चाहिए; संविदा को अंतरणकर्ता द्वारा या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित होनी चाहिए;
>
> (3) लिखित में ऐसे शब्द होने चाहिए जिससे अंतरण की व्याख्या करने वाली आवश्यक शर्तों को अभिनिश्चित किया जा सके;
>
> (4) अंतरिती को संविदा के भागिक पालन में संपत्ति या उसके किसी भाग पर कब्जा लेना चाहिए;
>
> (5) अंतरिती द्वारा संविदा के अनुसरण में, कोई कार्य किया जाना चाहिए; और
>
> (6) अंतरिती को संविदा के अपने भाग का पालन करना चाहिए या पालन करने के लिए रजामन्द होना चाहिए ।

[1] (2002) 3 एस. सी. सी. 676.

> 17. इसलिए, हमारी राय है कि यदि उपर्युक्त उल्लिखित शर्तों का अनुपालन किया जाता है, तो प्रतिवादी द्वारा वाद संपत्ति पर अपने कब्जे के संरक्षण के लिए अधिनियम की धारा 53-क के अधीन लिए गए अभिवाक् के रास्ते में परिसीमा विधि के उपबंध नहीं आएंगे, भले ही संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का वाद परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित हों ।"

16. माननीय न्यायाधीशों ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिवादी द्वारा प्रतिरक्षा में किए गए अभिवाक् पर परिसीमा विधि लागू नहीं होती है । भले ही वह प्रतिरक्षा उसके द्वारा किया गया दावा, वह परिसीमा द्वारा वर्जित होने के कारण न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं हो और पैरा 18, 19 और 20 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया :-

> "18. मामले की परीक्षा दूसरे दृष्टिकोण से की जा सकती है । परिसीमा का नियम यह है कि परिसीमा की विधि, प्रतिरक्षा में किए गए अभिवाक् पर तब तक लागू नहीं होती है, जब तक कि कानून में स्पष्ट रूप से इसका उपबंध न किया गया हो । परिसीमा की विधि, वादों और आवेदनों पर लागू होती है । परिसीमा अधिनियम के विभिन्न अनुच्छेदों से प्रदर्शित होता है कि यह प्रतिवादी द्वारा वाद में ली गई प्रतिरक्षा पर लागू नहीं होता है । इस प्रकार, परिसीमा की विधि केवल न्यायालय में कार्रवाई करने से वर्जित करती है । वास्तव में, परिसीमा अधिनियम वादी से न्यायालय में कार्रवाई द्वारा उसके अधिकारों को लागू कराने के अधिकार को छीन लेता है, लेकिन यह प्रतिवादी की किसी भी प्रतिरक्षा पर कोई निबन्धन नहीं लगाता है, यद्यपि प्रतिवादी द्वारा किया गया दावा, परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित हो सकता है और वे न्यायालय में प्रवर्तनीय भी नहीं हो सकते हैं । उक्त सिद्धांत के आधार पर प्रतिवादी किसी वाद में कोई भी प्रतिरक्षा कर सकता है, यद्यपि ऐसी प्रतिरक्षा परिसीमा अवधि द्वारा वर्जित होने के कारण न्यायालय में प्रवर्तनीय नहीं हो सकती है ।
>
> 19. एम. के. वेंकटचारी **बनाम** एल. ए. आर. अरुणाचल पिल्लई, ए. आई. आर. 1967 मद्रास 410 वाले मामले में इस प्रकार से अभिनिर्धारित किया है –

"कि परिसीमा अवधि की प्रतिरक्षा निश्चयात्मक विधि का सृजन है और इसलिए, इसे उन मामलों तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है जो वास्तव में अधिनियम के अधीन नहीं आते हैं । परिसीमा विधि के सृजन का यह एक सुस्थिर सिद्धांत है कि सादृश्यता या तर्कसंगतता द्वारा परिसीमा के कानूनी उपबंधों के दायरे को विस्तारित नहीं किया जाना चाहिए" ।

20. इसलिए, यह प्रकट है कि परिसीमा अधिनियम, प्रतिरक्षा को समाप्त नहीं करता है, बल्कि वह केवल उपचार का वर्जन करता है । चूंकि, परिसीमा की अवधि संविदा के विनिर्दिष्ट पालन से वाद का वर्जन करता है, लेकिन यदि वाद परिसीमा अवधि के पश्चात् लाया जाता है, तो अंतरणकर्ता द्वारा कब्जे की बरामदगी के लिए लाए गए वाद में प्रतिवादी के लिए यह खुला होगा कि वह अपने कब्जे के संरक्षण के लिए संविदा के भागिक पालन की प्रतिरक्षा के लिए अभिवाक करें, यद्यपि भले ही वह वाद या कार्रवाई के माध्यम से उस अधिकार को लागू कराने में सक्षम न हो ।"

17. **श्रीमंत** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि के सिद्धांत का पालन **वासंथी** बनाम **वेणुगोपाल (मृत) मार्फत इसके विधिक प्रतिनिधिगण**[1] वाले मामले में, अनुमोदन के साथ किया गया है, जिसमें उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायमूर्तियों ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि भागिक पालन के वाद में मात्र परिसीमा अवधि की समाप्ति, संविदा के भागिक पालन में किसी अचल संपत्ति पर किसी प्रतिफल द्वारा अंतरण पर कब्जा रखने वाले व्यक्ति के लिए संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-क के कवच का दावा करने से कोई वर्जन नहीं है, फिर भी, यह आवश्यक है कि इस प्रकार के संरक्षण का लाभ उठाने के लिए इसके सभी आवश्यक शर्तों का अनिवार्य रूप से अनुपालन किया जाना चाहिए ।

18. **एफ. जी. पी. लिमिटेड** (उपर्युक्त) वाले मामले में, उच्चतम

---

[1] (2017) 4 एस. सी. सी. 723.

न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की प्रतिपादना भी ऐसी ही है, जिसका अवलंब प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के विद्वान् काउंसेल ने लिया है ।

19. **ए. लुईस और एक अन्य** बनाम **एम. टी. राममूर्ति और अन्य**[1] वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायधीशों द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53-क के अधीन उच्चतम न्यायालय में संरक्षण का दावा करने का अधिकार उपलब्ध नहीं होगा, यदि अंतरिती प्रभावी कदम उठाए बिना और संविदा के अपने भाग का पालन किए बिना तथा अपनी रजामन्दी की संसूचना दिए बिना ही चुप और निष्क्रिय रहे । **ए. लुईस** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि के सिद्धांत का पालन **वासंथी** (उपर्युक्त) वाले मामले में अनुमोदन के साथ अनुसरण किया गया है ।

20. माननीय न्यायाधीशों ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 की धारा 16 के अधीन संविदा का विनिर्दिष्ट पालन ऐसे व्यक्ति के पक्ष में लागू नहीं किया जा सकता है जो अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रकथन करने और साबित करने में असफल रहता है कि उसने संविदा की आवश्यक शर्तों का पालन किया है या हमेशा से ही पालन करने के लिए तैयार और रजामन्द रहा है, जिसका उसके द्वारा तब तक पालन किया जाना है जब तक कि दूसरे पक्षकार द्वारा अवरुद्ध या त्यजन नहीं किया जाता है ।

21. इस प्रक्रम पर, संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 55(1)(घ) पर ध्यान देना समुचित होगा, जिसमें निम्नलिखित कथन किया गया है :-

> "55. **क्रेता और विक्रेता के अधिकार और दायित्व** – तत्प्रतिकूल संविदा न हो तो स्थावर सम्पत्ति का क्रेता और विक्रेता क्रमशः उन दायित्वों के अध्यधीन और उन अधिकारों से युक्त होंगे जो कि ठीक नीचे लिखे नियमों में, जो उनमें से बेची गई संपत्ति को लागू हों, वर्णित हैं –

[1] (2007) 14 एस. सी. सी. 87.

(1) विक्रेता आबद्ध है कि वह –

(क) **********************

(ख) **********************

(ग) **********************

(घ) कीमत की बाबत शोध्य रकम के संदाय या निविदा पर सम्पत्ति का उचित हस्तांतरण-पत्र निष्पादित करे जबकि क्रेता उसे उचित समय और स्थान पर निष्पादन के लिए विक्रेता को निविदत्त करे;”

22. इसी प्रकार, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 की धारा 29(ग) पर भी ध्यान देना समुचित होगा जिसमें निम्नलिखित कथन किया गया है :–

“29. **शुल्क किसके द्वारा देय है –** किसी प्रतिकूल करार के अभाव में, उचित स्टाम्प की व्यवस्था करने के खर्चे निम्नलिखित व्यक्तियों द्वारा वहन किए जाएंगे –

(क) **********************

(ख) **********************

(ग) किसी हस्तांतरण की (जिसके अन्तर्गत बंधक संपत्ति का पुन: हस्तांतरण है) दशा में – प्राप्तिकर्ता द्वारा किसी पट्टे या के करार की दशा में – पट्टेदार या आशयित पट्टेदार द्वारा;”

23. **बरूना गिरी** बनाम **राजकिशोर गिरी**[1] वाले मामले में, उड़ीसा उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ ने पैरा 14 में निम्निलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

“14. इसमें कोई संदेह नहीं है कि सम्पूर्ण प्रतिफल का संदाय कर दिया गया था लेकिन संविदा के पालन में अगला कदम विक्रय विलेख का निष्पादन था । प्रतिवादियों का यह कर्तव्य था, कि वे

[1] ए. आई. आर. 1983 उड़ीसा 107.

विक्रय विलेख का समुचित प्रारूप प्रस्तावित करते और इसे वादी के समक्ष प्रस्तुत करते जैसा कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 55(1)(घ) के अधीन अनुध्यात है । स्टाम्प अधिनियम की धारा 29 के उपबंधों के अधीन विक्रय विलेख का व्यय क्रेता द्वारा वहन किया जाना था । जब तक प्रतिवादियों ने स्टाम्प शुल्क के माध्यम से पैसे का संदाय नहीं किया जाता, तब तक विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया जा सकता था । धारा 55(1)(घ), संपत्ति अंतरण अधिनियम और धारा 29(ग) स्टाम्प अधिनियम के संयुक्त प्रभाव के कारण प्रतिवादियों का यह कर्तव्य था कि वे विक्रय विलेख का प्रारूप प्रस्तावित करते और मुद्रा का संदाय करने के लिए अपनी तत्परता और रजामन्दी व्यक्त करते और वादी को विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए कहते । (देखें : आई. एल. आर. (1975) कट 993, पृष्ठ 998, भीमसेन महापात्र **बनाम** भबानी महापत्राणी) लिखित कथन के पैरा 14 में इस प्रकार कथन किया गया है –

> .... किन्तु क्योंकि विक्रय करार के निष्पादनकर्ता सिंहभूम जिले में निवास करते थे और साथ ही वे सभी एक समय पर उपलब्ध नहीं थे, इसलिए उनके द्वारा रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया जा सका था और क्योंकि भूमि चंद्रमोहन और उनके कुटुम्ब सदस्यों के कब्जे में कायम रही और चंद्रमोहन के कुटुम्ब सदस्यों ने रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख प्राप्त करने के लिए अपेक्षित कदम नहीं उठाया था .... ।”

इससे यह दर्शित होता है कि संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 55(1)(घ) और स्टाम्प अधिनियम की धारा 29(ग) की अपेक्षाओं का पालन करने के बजाय प्रतिवादियों ने भूमि का कब्जा बनाए रखा । यदि वास्तव में यह तथ्य सच है कि प्रतिवादी संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तैयार और रजामन्द थे, तो इतने लंबे समय तक वे चुप बैठने के बजाय उन्होंने वादियों को विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए लिखित सूचना भेजी होती । ऐसी सूचना न भेजना, यह दर्शित करता है कि वे संविदा के अपने

भाग को पालन करने के लिए तैयार और रजामन्द नहीं थे । तदनुसार, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि प्रतिवादी धारा 53-क संपत्ति अंतरण अधिनियम का लाभ पाने के हकदार नहीं है ।"

24. पूर्वोक्त विधिक प्रास्थिति के आलोक में, मामले के तथ्यों का उल्लेख करते हुए, यह ध्यान रखना समुचित होगा कि वर्तमान मामले में यह विवाद में नहीं है कि अंतरिती/प्रतिवादी सं. 1 ने संविदा के भागिक पालन में वाद संपत्ति पर कब्जा लिया है, लेकिन लिखित कथन का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि इसके लिए कोई अभिवाक् नहीं किया है कि वह संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द हैं । प्रतिवादी सं. 1 का यह कर्तव्य था कि वह संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 55(1)(घ) के अधीन वादी के समक्ष विक्रय विलेख का समुचित प्रारूप प्रस्तावित करके विक्रय विलेख को पूरा करना सुनिश्चित करता । प्रतिवादियों का भी यह कर्तव्य था कि वे भारतीय स्टाम्प अधिनियम की धारा 29(ग) के अधीन विक्रय विलेख के व्यय को वहन करे और विक्रय विलेख को निष्पादित करते । प्रतिवादी, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-क के अधीन संविदा के अपने भाग का पालन करने को तैयार और रजामंद थे, यह दर्शित करने में असफल रहे हैं । उन्हें वादी का विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए लिखित सूचना भेजनी चाहिए थी । इस तरह की सूचना भेजने में उनकी असफलता यह दर्शित करती है कि वे संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द नहीं थे और तदनुसार, यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि प्रतिवादी, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-क के अधीन वाद की संपत्ति पर कब्जा पाने के हकदार नहीं हैं ।

25. इस प्रकार, दोनों निचले न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करने में विधिक त्रुटि की है कि प्रतिवादी, संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 53-क के आधार पर वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित वाद संपत्ति पर अपने कब्जे का संरक्षण पाने के हकदार हैं, विशिष्ट रूप से इस कारण से कि प्रतिवादियों ने यह अभिवाक् नहीं किया कि वे संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द थे ।

विनिर्दिष्ट रूप से, यह उनके लिए था कि वे लिखित कथन में ऐसा करें और मुख्य साक्ष्य प्रस्तुत करके उसे सिद्ध करें, लेकिन उनके द्वारा ऐसा कोई अभिवाक् नहीं किया गया है और यह स्पष्ट है कि वे संविदा के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार और रजामन्द नहीं थे । तद्नुसार, सारवान् विधि के प्रश्न सं. 1 का उत्तर प्रतिवादियों के पक्ष में और वादी के विरुद्ध दिया जाता है ।

सारवान् विधि के प्रश्न सं. 2 का उत्तर :

26. प्रारंभ में वादी ने शाश्वत व्यादेश के लिए वाद में फाइल किया था, बाद में, तारीख 26 अगस्त, 2003 के आदेश द्वारा वादपत्र में संशोधन किया गया और वादपत्र में संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित वाद संपत्ति के सम्बन्ध में कब्जे की बरामदगी के अनुतोष को सम्मिलित किया गया, जिसकी माप का क्षेत्रफल 1.781 हेक्टेयर है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने वाद को इस आधार पर खारिज कर दिया था कि शाश्वत व्यादेश के अनुतोष के साथ-साथ वादी ने कब्जा दिलाने के लिए भी दावा किया है, किन्तु उसके वाद का तद्नुसार मूल्यांकन नहीं किया गया था, जिसकी पुष्टि प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा भी की गई है ।

27. ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों निचले न्यायालयों ने सी.पी.सी. के आदेश 7, नियम 11(ख) के अधीन अन्तर्विष्ट उपबंधों की अनदेखी की है, जिसमें यह उपबंध है कि जहां दावाकृत अनुतोष कम मूल्यांकित होता है, और वादी, न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर न्यायालय द्वारा अपेक्षित मूल्यांकन को ठीक करने में असफल रहता है, तो उसके बाद वादपत्र नामंजूर कर दिया जाएगा । इस प्रकार, यदि विचारण न्यायालय के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि दावाकृत अनुतोष कम मूल्यांकित है, तो उन्हें मूल्यांकन को ठीक करने के लिए वादी को समय देना चाहिए ।

28. **वाणिज्यिक विमानन और यात्रा कंपनी और अन्य** बनाम **विमला पन्नालाल**[1] वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

---

[1] (1988) 3 एस. सी. सी. 423.

"9. इस संबंध में, हम सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII, नियम 11(ख) के उपबंध का उल्लेख कर सकते हैं, जो अन्य बातों के साथ-साथ यह भी उपबंध करता है कि वादपत्र को तब खारिज कर दिया जाएगा जब दावाकृत अनुतोष का मूल्यांकन कम किया गया हो, और वादी, न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर अपेक्षित मूल्यांकन को ठीक करने में असफल रहता है । आदेश VII, नियम 11(ख) के उपबंध से स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुंचना होगा कि दावाकृत अनुतोष का मूल्यांकन कम किया गया है, जिसका अनिवार्य रूप से यह अर्थ है कि न्यायालय अनुतोष का समुचित और ठीक मूल्यांकन का ठीक विनिश्चय करने और निर्दिष्ट करने में सक्षम है और अनुतोष के ठीक मूल्य के निर्धारण के पश्चात्, वादी को न्यायालय द्वारा निर्धारित समय के भीतर अपने मूल्यांकन को ठीक करने की आवश्यकता होती है । यदि वादी निर्धारित समय के भीतर ठीक मूल्यांकन नहीं करता है, तो वाद खारिज किया जा सकता है । प्रश्न यह है कि क्या लेखा सरलीकरण के वाद में, न्यायालय अंतिम निर्धारण होने तक अनुतोष के समुचित और ठीक मूल्य के बारे में निष्कर्ष पर पहुंच सकता है । हमारी राय में, आमतौर पर न्यायालय के लिए लेखा सरलीकरण के वाद में, अनुतोष के मूल्य का निर्धारण प्रारंभिक चरण में करना संभव नहीं है । यदि न्यायालय स्वयं यह बताने में असमर्थ है कि अनुतोष का ठीक मूल्यांकन क्या है, तो वह वादी से उसके द्वारा किए गए मूल्यांकन को सही करने की अपेक्षा नहीं कर सकता है । वास्तव में, लेखा वाद में न्यायालय के लिए अनुतोष के अनुमानित ठीक मूल्यांकन के बारे में निष्कर्ष पर पहुंचना मुश्किल है । ऐसे मामलों में, न्यायालय के पास वादी के मूल्यांकन को अस्थायी रूप से स्वीकार करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है ।"

29. इसी प्रकार, **मनोहरन** बनाम **शिवराजन**[1] वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि

[1] (2014) 4 एस. सी. सी. 163.

सी.पी.सी. की धारा 149 एक विवेकाधीन शक्ति विहित करती है जो न्यायालय को वादपत्र, अपीलों, आवेदन, निर्णय के पुनर्विलोकन आदि पर किसी पक्षकार को शुल्क संदाय करने की अनुज्ञा प्रदान करने में समर्थ बनाती है और निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया है :–

> "7. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 149 में विवेकीय शक्ति विहित है, जो न्यायालय को पक्षकार के वादपत्र, अपील, आवेदन, निर्णय के पुनर्विलोकन आदि पर संदाय किए जाने वाले न्यायालय शुल्क की कमी को पूरा करने की अनुज्ञा प्रदान करती है । यह धारा, न्यायालय को स्टाम्प शुल्क की अपर्याप्तता आदि को भूतलक्षी रूप से मान्य करने में भी समर्थ बनाती है । यह भी एक सामान्य रीति है कि न्यायालय पक्षकार को निर्धारित समय के भीतर न्यायालय शुल्क का संदाय करने का अवसर प्रदान करता है, जिसके न होने पर न्यायालय अपील को खारिज कर देता है । वर्तमान मामले में, अपीलार्थी ने शेष न्यायालय शुल्क में छूट प्रदान करने के लिए समय बढ़ाने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया था, जिसे विद्वान् उप न्यायाधीश ने खारिज कर दिया था । अपीलार्थी का दावा है कि वह वित्तीय कठिनाइयों के कारण न्यायालय शुल्क की अपेक्षित राशि का संदाय करने में असमर्थ था । न्यायालय की यह सामान्य रीति है, कि वह विवेकाधिकार का उपयोग वाद लड़ने वाले पक्षकारों के पक्ष में करता है, जब तक कि दुर्भावना का आधार प्रकट न हो । न्यायालय को न्यायालय शुल्क के संदाय के लिए समय सीमा बढ़ाते या छूट देते समय ऐसी विवेकाधिकार शक्ति की सद्भावनापूर्वक सुनिश्चित करनी चाहिए । न्यायालय शुल्क के संदाय की तिथि बढ़ाने के लिए आवेदन फाइल करते समय तात्विक तथ्य को छिपाना, खारिज किए जाने का आधार हो सकता है । यद्यपि, वर्तमान मामले में, विद्वान् उप न्यायाधीश द्वारा अपीलार्थी को न्यायालय शुल्क का संदाय करने का कोई अवसर नहीं दिया गया, जिसे वह वित्तीय बाधाओं के कारण संदाय करने में असमर्थ था । इसलिए, विद्वान् उप न्यायाधीश का विनिश्चय गलत है और यह अपास्त किए जाने योग्य है और तदनुसार अपास्त किया जाता है ।"

30. वर्तमान मामले में, विद्वान् विचारण न्यायालय ने कब्जे की बरामदगी के लिए अनुतोष अभिनिर्धारित करने के पश्चात् वाद का समुचित मूल्यांकन नहीं किया है और इसके लिए कोई न्यायालय शुल्क भी संदत्त नहीं किया है, इसलिए, वह वादी को कुछ समय देकर मूल्यांकन सही करने का अवसर दे सकता था, किन्तु ऐसा नहीं किया और मामला खारिज कर दिया, जिसकी पुष्टि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी कर दी थी ।

31. इस प्रकार, कब्जे से अनुतोष को मूल्यांकन न होने के आधार पर वादी के वाद को खारिज करने वाले दोनों निचले न्यायालयों द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष अपास्त किए जाते हैं और वादी को न्यायालय शुल्क का अपेक्षित संदाय करके मूल्यांकन को ठीक करने के लिए 30 दिनों की अतिरिक्त अवधि मंजूर की जाती है ।

32. पूर्वोक्त विधिक चर्चा के परिणामस्वरूप, दोनों निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और डिक्री को अपास्त किए जाते हैं । वादी के वाद को डिक्री किया जाता है और यह निर्देश दिया जाता है कि वादी, वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' में दर्शित माप 1.781 हेक्टेयर वाली संपत्ति पर कब्जा, मूल्यांकन को ठीक करने और न्यायालय शुल्क का संदाय करने की तिथि से 60 दिनों के भीतर वापस पाने का हकदार होगा ।

33. अपील, इसमें उपर्युक्त उपदर्शित सीमा तक स्वीकार की जाती है । खर्चे के सम्बन्ध में कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

34. तद्नुसार डिक्री तैयार की जाए और वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची 'ख' को डिक्री का भाग बनाया जाए ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

अम./क.

अच्छेलाल जायसवाल और अन्य

बनाम

श्रीमती रानी बाई दीक्षित और अन्य

(2012 की प्रथम अपील सं. 38)

तारीख 14 फरवरी, 2022

न्यायमूर्ति नरेन्द्र कुमार व्यास

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 96 [छत्तीसगढ़ आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 की धारा 12(1)(क)(ख)(ग) और (ढ)] – अपील – भू-स्वामी द्वारा किराएदार की बेदखली के लिए वाद – भू-स्वामी की सद्भाविक आवश्यकता – अन्य भूमि सह-स्वामी को सम्मिलित नहीं किया जाना – भू-स्वामी के लिए अन्यत्र परिसर उपलब्ध होना – यदि अभिलेख पर यह साबित कर दिया जाता है कि भू-स्वामी को किराएदारी भूमि की सद्भाविक आवश्यकता है तो किराएदार के विरुद्ध किराया संदाय एवं बेदखली का वाद सफल होगा भले ही प्रश्नगत भूमि के अन्य सह-स्वामियों को सम्मिलित नहीं किया है और भू-स्वामी के पास अन्यत्र परिसर भी उपलब्ध है ।

वर्तमान मामले में, वादियों ने सिविल वाद फाइल किया है, यह दलील देते हुए कि वादी, वाद भूमि पटवारी हल्का सं. 106 राजस्व सर्किल, रायपुर तहसील और जिला रायपुर खसरा सं. 229/1, रकबा 1.291 हेक्टेयर एवं खसरा सं. 472 रकबा 0.182 हेक्टेयर में से 0.23 हेक्टेयर रकबा के संयुक्त स्वामी हैं । प्रतिवादी सं. 1 ने माप 12809 वर्गफीट क्षेत्रफल में से एक भाग कुल 1.473 हेक्टेयर ले लिया है जिसका उल्लेख वादपत्र के साथ संलग्न मानचित्र में किया गया है, जिसे बाद में किराए की भूमि के रूप में संबोधित किया जाना है । प्रतिवादी सं. 1 ने उक्त भूमि का उपयोग अपनी सामग्री के भंडारण के लिए किया है, इस प्रकार से उसने वादियों की संयुक्त स्वामित्व वाली संपत्ति को किराए पर ले लिया है । किराए की भूमि पर मासिक किराएदारी है जो अंग्रेजी महीने के पहले दिन से उस महीने के अंतिम दिन तक देय है ।

वर्तमान में, किराए की भूमि का किराया 5,000/- रुपए प्रतिमाह है । प्रतिवादी सं. 1 ने मुख्तारनामा धारक उमेश कुमार दीक्षित को वर्ष 2004 तक का किराया दिया है तथा उसके पश्चात् किराया नहीं दिया है । इस प्रकार, जनवरी, 2005 से किराया वादियों को देय है । इसलिए, वादियों ने अपने काउंसेल के माध्यम से प्रतिवादी सं. 1 को पंजीकृत डाक पावती के माध्यम से तारीख 2 मई, 2005 को नोटिस भेजा जिसमें जनवरी, 2005 से अप्रैल, 2005 का किराया 20,000/- रुपए मांगा गया । हालांकि, प्रतिवादी को नोटिस प्राप्त हो गया है परन्तु उसने किराया नहीं दिया । वादी सं. 1 ने निवेदन किया है कि वे किराए पर दी गई भूमि पर मकान बनाना चाहते हैं और मकान निर्माण के लिए नक्शा भी तैयार कर रहे हैं और उनके पास पर्याप्त धनराशि भी उपलब्ध है । विचारण न्यायालय ने 12 विवाद्यकों को विरचित किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और अभिलेख पर सामग्रियों का मूल्यांकन करने के पश्चात् अपने तारीख 23 फरवरी, 2012 के निर्णय और डिक्री के द्वारा वाद प्रश्न सं. 1 कि क्या प्रतिवादी सं. 1, 5,000/- रुपए की दर से वाद भूमि 12809 वर्ग फीट का किराएदार है, का विनिश्चय करते हुए इस विवाद्यक पर प्रतिवादी के विरुद्ध सकारात्मक रूप से उत्तर दिया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और अभिलेख पर सामग्रियों पर विचार करते हुए, हरि प्रसाद और प्रतिवादी सं. 1 के बीच निष्पादित किराएदारी करार प्रदर्श पी-4 का अवलंब लिया और साथ ही किराएदारी के संबंध में मुख्तारनामा धारक उमेश दीक्षित द्वारा निष्पादित करार पर यह निष्कर्ष दिया गया है कि प्रतिवादी सं. 1, मुख्तारनामा उमेश दीक्षित को किराया दे रहा था और यह भी अभिलिखित किया कि वह वाद भूमि पर किराएदार था जो 5,000/- रुपए प्रतिमाह की दर से अंग्रेजी माह के प्रथम दिन से प्रारम्भ होकर माह के अंतिम दिन तक है । विवाद्यक सं. 2 का विनिश्चय प्रतिवादी के विरुद्ध किया गया है कि उसने जनवरी, 2005 से किराया नहीं दिया है । जहां तक विवाद्यक प्रश्न सं. 3 का प्रश्न है कि क्या प्रतिवादी सं. 1 के पास वाद भूमि का कब्जा, वाद भूमि के स्वामी के रूप में है । इसका उत्तर नकारात्मक दिया गया है क्योंकि इस साक्षी की प्रतिपरीक्षा की गई है और उसका कथन है कि वह उमेश दीक्षित के माध्यम से किराया दे रहा था । न्यायालय ने यह निष्कर्ष

निकाला है कि चूंकि कोई रसीद प्रस्तुत नहीं की गई, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि वह किराया नहीं दे रहा था । विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 4 का विनिश्चय वादियों के पक्ष में निर्णीत किया कि उनकी अनुज्ञा के बिना ही प्रतिवादी सं. 1 ने भूमि को उप-किराएदारी पर दे दिया था जो अधिनियम के अंतर्गत अनुज्ञेय नहीं है । वादी के साक्षी के कथन का अवलंब लेते हुए जिसने यह स्वीकार किया है कि वादी, वाद भूमि पर घर के निर्माण का आशय रखते हैं तथा विचारण न्यायालय ने साक्ष्य एवं तथ्य की स्पष्ट रूप से परीक्षा की है और विचार व्यक्त किया है कि घर के निर्माण के लिए वादियों के पास पर्याप्त राशि है तथा योजना भी तैयार कर ली गई है । वादी के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है । इस वाद का विनिश्चय करते हुए, विचारण न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि वादियों ने अधिनियम की धारा 12(1)(क), (ख), (ग) और (ढ) के अधीन प्रतिवादियों को बेदखल करने का मामला बनाया है क्योंकि उसने भूमि स्वामी की अनुमति के बिना किराएदारी भूमि को दूसरे व्यक्ति को किराए पर दिया है । इसलिए, विचारण न्यायालय ने प्रतिवादियों के विरुद्ध वादियों के पक्ष में इस विवाद्यक का विनिश्चय किया है । इस निर्णय और डिक्री के विरुद्ध प्रतिवादियों ने इस न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील प्रस्तुत की है । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह आधार कि अन्य सह-स्वामी वाद में सम्मिलित नहीं हुए हैं, स्वीकार्य नहीं है और इसे खारिज किए जाने योग्य है । प्रतिवादियों ने वादियों के किराएदारी से इनकार किया है और असंगत प्रतिरक्षा की है कि अन्य सह-स्वामी वाद में सम्मिलित नहीं हुए हैं । केवल इसी आधार पर, विचारण न्यायालय द्वारा वाद खारिज कर दिया जाना चाहिए था, प्रतिवादियों द्वारा वाद भूमि पर स्वामित्व का भी दावा किया गया है, जिसे विद्वान् विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 3 पर विनिश्चय करते समय नकार दिया है । इससे यह सिद्ध होता है कि प्रतिवादियों द्वारा वादियों के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने का आशय था, इस प्रकार, यह अधिनियम की धारा 12(1)(ग) के अनुसार बेदखली का मामला बनता है । अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि प्रत्यर्थियों द्वारा यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कोई

सामग्री प्रस्तुत नहीं की है कि भूमि प्रत्यर्थियों के उपयोग के लिए सद्भाविक आवश्यकता थी । इसलिए, किराए की भूमि से किराएदारों को बेदखल करने के लिए अधिनियम की धारा 12(1)(च) के उपबंधों को लागू करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं है । दूसरी ओर प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदन पर जोरदार विरोध किया और निवेदन किया है कि उन्होंने गृह निर्माण के संबंध में नक्शा प्रस्तुत किया है और अपने साक्ष्य में कथन किया कि उनके पास लगभग 5,00,000/- रुपए हैं जो गृह निर्माण के लिए पर्याप्त है, इसलिए, विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किया गया यह निष्कर्ष कि भूमि की सद्भाविक आवश्यकता है, इसे अनुचित अभिलेख के प्रतिकूल नहीं कहा जा सकता है, इसलिए अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा किया गया यह निवेदन कि भूमि की कोई सद्भाविक आवश्यकता नहीं है, यह स्वीकार्य नहीं है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि वादी पहले से ही गृह निर्माण के लिए योजना तैयार कर चुके हैं और उनके पास गृह निर्माण के लिए पर्याप्त धन है और उसके पश्चात् अधिनियम की धारा 12(1)(च) के अधीन निर्णय और डिक्री पारित की गई है । विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि आवासीय उद्देश्य के लिए सद्भाविक आवश्यकता थी । इस प्रकार, प्रत्यर्थी भूमि का खाली कब्जा पाने के हकदार हैं । यह सुस्थापित स्थिति है कि सद्भाविक आवश्यकता को किराएदार वादी को नहीं बता सकते है किराएदारी भूमि की सद्भाविक आवश्यकता है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्यों और सामग्रियों की मूल्यांकन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि वादियों ने स्पष्ट रूप से साबित कर दिया है कि उनके पास घर के निर्माण के लिए पर्याप्त राशि है और उन्होंने नक्शा भी प्रस्तुत किया है, इसलिए, प्रतिवादियों ने धारा 12(1)(ढ) के अधीन बेदखली के लिए मामला बनाया है । इस निष्कर्ष को, अभिलेखों के विपरीत या माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस संबंध में अधिकथित विधि के विरुद्ध नहीं कहा जा सकता है । विचारण न्यायालय द्वारा धारा 12(1)(ढ) के अधीन बेदखली के लिए पारित निर्णय सही ही पारित किया गया है जिससे इस न्यायालय द्वारा किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

उपर्युक्त विधिक स्थिति और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों पर विचार करते हुए, मेरा यह निष्कर्ष है कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 12(1)(क), (ख), (ग) और (ढ) के अधीन प्रतिवादियों को बेदखल करने वाले पारित निर्णय और डिक्री में कोई अनुचितता या अवैधता नहीं है । तद्नुसार, अपील खारिज किए जाने योग्य है और खारिज की जाती है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को निर्देश दिया कि वाद भूमि को वे तुरंत खाली करे और तारीख 23 फरवरी, 2012 तक वादियों को वाद भूमि का कब्जा तुरन्त सौंप दें, बहरहाल, चाहे जैसी भी दशा हो, भू-स्वामियों ने कब्जा हासिल नहीं किया है जो भी हो, न्यायालय अपीलार्थियों को परिसर का खाली कब्जा सौंपने के लिए तारीख 20 अगस्त, 2022 तक का समय दे सकता है । यदि अपीलार्थियों द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष कोई किराया जमा किया गया है तो उसे प्रत्यर्थियों द्वारा वापस ले लिया जाएगा । (पैरा 29, 30, 31, 32, 34, 35 और 36)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	(2020) 2 एस. सी. सी. 524 : **के. लुबना और अन्य** बनाम **बीबी और अन्य** ;	16
[2019]	(2019) 20 एस. सी. सी. 182 : **विनय एकनाथ लाड** बनाम **चिऊ माओ चेन ;**	17
[2016]	(2016) 3 एस. सी. सी. 296 : **कस्तूरी राधाकृष्णन् और अन्य** बनाम **एम. चिन्नियन और अन्य** ;	16, 28
[2002]	(2002) 7 एस. सी. सी. 614 : **रीता लाल** बनाम **राज कुमार सिंह ;**	16
[2002]	[2002] (सप्ली.) 4 एस. सी. आर. 406 : **प्रतिभा सिंह और अन्य** बनाम **शांति देवी प्रसाद और अन्य** ;	17

[2002]	(2002) 6 एस. सी. सी. 16 : **धन्नालाल** बनाम **कलावतीबाई और अन्य** ;	27, 28
[1996]	(1996) 5 एस. सी. सी. 353 : **प्रतिभा देवी (श्रीमती)** बनाम **टी. वी. कृष्णन ;**	32
[1976]	(1976) 4 एस. सी. सी. 184 : **श्रीराम पसरीचा** बनाम **जगन्नाथ और अन्य ।**	26

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2012 की प्रथम अपील संख्या 38.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री हिमांशु पाण्डेय के साथ श्री बी. पी. शर्मा, सुश्री अनमोल शर्मा और सुश्री अनुजा शर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री रवीन्द्र अग्रवाल, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति नरेन्द्र कुमार व्यास – यह प्रतिवादियों की प्रथम अपील है जो वादियों द्वारा फाइल सिविल वाद सं. 39-क/11 में विद्वान् चतुर्थ अपर जिला न्यायाधीश, रायपुर (सी. जी.) द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से उत्पन्न हुई है, जिसमें डिक्री करते हुए प्रतिवादियों को वाद संपत्ति को खाली करने और खाली कब्जे को तुरंत सौंपने का निदेश दिया गया है । विचारण न्यायालय ने इसके अतिरिक्त वाद भूमि को खाली करने तक 35,000/- रुपए के रूप में और 5,000/- रुपए प्रतिमाह जुर्माना देने का भी निदेश दिया है प्रतिवादी सं. 1 द्वारा जो राशि विचारण न्यायालय के समक्ष जमा की गई है, उसे उसके द्वारा दिए गए अंतिम निर्णय और डिक्री के समय समायोजित किया जाएगा ।

2. सुविधा के लिए वादियों और प्रतिवादियों को विचारण न्यायालय के समक्ष जो अस्तित्व है, वही कहा जाएगा ।

3. वादियों ने सिविल वाद फाइल किया है, यह दलील देते हुए कि वादी, वाद भूमि पटवारी हल्का सं. 106 राजस्व सर्किल, रायपुर तहसील और जिला रायपुर खसरा सं. 229/1, रकबा 1.291 हेक्टेयर एवं खसरा सं. 472 रकबा 0.182 हेक्टेयर में से 0.23 हेक्टेयर रकबा के संयुक्त स्वामी हैं । प्रतिवादी सं. 1 ने माप 12809 वर्गफीट क्षेत्रफल में से एक

भाग कुल 1.473 हेक्टेयर ले लिया है जिसका उल्लेख वादपत्र के साथ संलग्न मानचित्र में किया गया है, जिसे बाद में किराए की भूमि के रूप में संबोधित किया जाना है । प्रतिवादी सं. 1 ने उक्त भूमि का उपयोग अपनी सामग्री के भंडारण के लिए किया है, इस प्रकार से उसने वादियों की संयुक्त स्वामित्व वाली संपत्ति को किराए पर ले लिया है । किराए की भूमि पर मासिक किराएदारी है जो अंग्रेजी महीने के पहले दिन से उस महीने के अंतिम दिन तक देय है । वर्तमान में, किराए की भूमि का किराया 5,000/- रुपए प्रतिमाह है । प्रतिवादी सं. 1 ने मुख्तारनामा धारक उमेश कुमार दीक्षित को वर्ष 2004 तक का किराया दिया है तथा उसके पश्चात् किराया नहीं दिया है । इस प्रकार, जनवरी, 2005 से किराया वादियों को देय है । इसलिए, वादियों ने अपने काउंसेल के माध्यम से प्रतिवादी सं. 1 को पंजीकृत डाक पावती के माध्यम से तारीख 2 मई, 2005 को नोटिस भेजा जिसमें जनवरी, 2005 से अप्रैल, 2005 का किराया 20,000/- रुपए मांगा गया । हालांकि, प्रतिवादी को नोटिस प्राप्त हो गया है परन्तु उसने किराया नहीं दिया । वादी सं. 1 ने निवेदन किया है कि वे किराए पर दी गई भूमि पर मकान बनाना चाहते हैं और मकान निर्माण के लिए नक्शा भी तैयार कर रहे हैं और उनके पास पर्याप्त धनराशि भी उपलब्ध है ।

4. यह भी दलील दी गई है कि चूंकि वादी महिलाएं हैं और वे सार्वजनिक स्थानों पर बहुत कम जाती हैं, इसलिए, उन्होंने उमा शंकर दीक्षित को अपनी संपत्तियों की देखभाल के लिए मुख्तारनामा धारक नियुक्त किया है । इस प्रकार, वादी, प्रतिवादियों के संपर्क में नहीं है । प्रतिवादी, मुख्तारनामा धारक को ही किराया देते थे । मकान बनाने के लिए उन्हें भूमि की आवश्यकता थी, इसलिए, उन्होंने भूमि खाली कराने के लिए मुख्तारनामा धारक के माध्यम से भूमि की मांग की । इसलिए, प्रतिवादी सं. 1 ने दबाव बनाने के लिए मुख्तारनामा धारक के विरुद्ध थाना मौदहापारा में झूठी रिपोर्ट दर्ज कराई है । यह भी दलील दी गई है कि प्रतिवादी सं. 1 ने वादियों की अनुमति के बिना किराए की भूमि का हिस्सा प्रतिवादी सं. 2 रामपलट जायसवाल को 2,000/- रुपए प्रतिमाह की दर से उप-किराएदार के रूप में दे दिया है तथा प्रतिवादी सं. 2 ने भी इसे उप-पट्टे पर मैसर्स पावर ट्रेडर्स को उनकी सामग्री को रखने के लिए

दिया जो कि अवैध है । वादी और प्रतिवादी सं. 1 के बीच निष्पादित किराया समझौता के विरुद्ध है । वादी ने अपने काउंसेल के माध्यम से तारीख 2 मई, 2005 को नोटिस भेजा और प्रतिवादी सं.1 की किराएदारी को तारीख 31 जुलाई, 2005 से समाप्त कर दिया और वाद भूमि पर खाली कब्जे की मांग की । नोटिस प्राप्त होने के पश्चात् भी प्रतिवादी सं. 1 ने नोटिस का कोई जवाब नहीं दिया । यह भी दलील दी गई है कि प्रतिवादियों ने तारीख 20 जुलाई, 2005 को अपने काउंसेल के माध्यम से नोटिस का जवाब भेजा जिसमें उन्होंने वादी के स्वामित्व और किराएदारी से इनकार किया है और दावा किया है कि प्रतिवादी वर्ष 1977 से बिना किसी बाधा के वाद भूमि पर 28 वर्षों से अधिक समय से कब्जे में है और भू-स्वामी हैं, इसलिए, वादियों के लिए सिविल वाद फाइल करने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

5. वादियों ने अपने काउंसेल के माध्यम से सिविल वाद फाइल किया जिसमें मुख्य रूप से यह दलील दी गई कि प्रतिवादी को छत्तीसगढ़ आवास नियंत्रण अधिनियम (एतद्पश्चात् 'अधिनियम') की धारा 12(1)(क), (ख), (ग) एवं (ढ) के उपबंधों के अनुसार, वाद भूमि से बेदखल किया जाए और साथ ही वे तारीख 31 जुलाई, 2005 तक बकाया किराया राशि 35,000/- रुपए की वसूली के भी हकदार हैं और साथ ही वे वादियों के पक्ष में उक्त तारीख से भूमि से वास्तविक कब्जे के खाली होने तक 5,000/- रुपए प्रतिमाह की शास्ति पाने के भी हकदार हैं । यह मामला सिविल वाद सं. 39-क/11 के रूप में पंजीकृत किया गया था ।

6. प्रतिवादियों ने वादपत्र में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए सिविल वाद में अपना जवाब फाइल किया जिसमें मुख्य रूप से यह दलील दी गई कि उमेश कुमार दीक्षित मुख्तारनामा धारक नहीं है और उसे सिविल वाद फाइल करने का कोई अधिकार नहीं है और केवल इसी आधार पर मामला खारिज किए जाने योग्य है । इस बात से भी इनकार किया गया है कि वादी, वादपत्र में वर्णित संपत्ति के संयुक्त स्वामी हैं । वादियों द्वारा प्रस्तुत राजस्व अभिलेखों में 12 व्यक्तियों के नाम दर्शाए गए हैं और वादी किराए की भूमि के स्वामी नहीं थे । आवश्यक पक्षकारों के संयोजन न होने के कारण वाद खारिज किए जाने योग्य है क्योंकि

किराए की भूमि के सभी स्वामियों द्वारा वाद फाइल नहीं किया गया है । इस बात से भी इनकार किया गया है कि वादियों और प्रतिवादी सं. 1 के बीच भूमि-स्वामी और किराएदार का संबंध है । वस्तुतः प्रतिवादी सं. 1 किसी व्यक्ति के किसी बाधा के बिना निरन्तर 28 वर्षों से किराए की संपत्ति के कब्जे में है । प्रतिवादी सं. 1 ने निर्माण कार्य भी पूर्ण कर लिया है और बाउंड्री का निर्माण पहले ही हो चुका है जिसमें वह अपना व्यवसाय कर रहा है । इस बात से भी इनकार किया गया है कि भूमि का किराया 5,000/- रुपए प्रतिमाह है और उमेश कुमार दीक्षित को कोई किराया संदत्त किया जाना है । इससे भी इनकार किया गया है कि तारीख 2 मई, 2005 के नोटिस द्वारा किराएदारी को तारीख 31 जुलाई, 2005 से समाप्त कर दिया गया था । प्रतिवादियों ने अपने उत्तर के माध्यम से वादपत्र के तथ्यात्मक सार को पूर्व में ही स्पष्ट कर दिया है कि क्योंकि वादी, वाद भूमि के मालिक नहीं हैं, इसलिए, उन्हें वाद फाइल करने का अधिकार नहीं है और उक्त वाद खारिज होने योग्य है । यह भी दलील दी गई कि अधिनियम की धारा 12(1), (क), (ख), (ग), (ढ) के अनुसार, बेदखली का कोई आधार नहीं बनता है । यह भी दलील दी गई है कि वाद का मूल्यांकन ठीक से नहीं किया गया है । बाजार मूल्य के अनुसार, वाद का मूल्य लगभग एक करोड़ बीस लाख रुपए है और तद्नुसार मूल्यानुसार न्यायालय शुल्क संलग्न की जानी चाहिए थी । समुचित न्यायालय शुल्क के अभाव में वाद खारिज होने योग्य है ।

7. विचारण न्यायालय ने 12 विवाद्यकों को विरचित किया । वादियों ने अपने साक्षियों उमा दीक्षित (अभि. सा. 1), उमेश दीक्षित (अभि. सा. 2), मनजीत सिंह (अभि. सा. 3), आर. के. सिवाने (अभि. सा. 4) और रमाकांत साहू, (अभि. सा. 5) की परीक्षा कराई है और पी/1 से पी/20 तक के प्रदर्शित किए । प्रदर्श पी/1 प्रस्तावित योजना, प्रदर्श पी/2 ऋण पुस्तिका, प्रदर्श पी/3 विभाजन विलेख तारीख 23 जनवरी, 1992, प्रदर्श पी/4 करार तारीख 18 अगस्त, 1982, प्रदर्श पी/5 अनुबंध तारीख 8 नवम्बर, 1995, प्रदर्श पी/6 नोटिस तारीख 5 अगस्त, 1993, प्रदर्श पी/7 नोटिस की कॉर्बन प्रति तारीख 2 मई, 2005, प्रदर्श पी/8 और पी/9 डाक रसीदें, प्रदर्श पी/10 पावती, प्रदर्श पी/11 नोटिस का उत्तर तारीख 29 जुलाई, 2005, प्रदर्श पी/12 मुख्तारनामा, प्रदर्श पी/13

नक्शा, प्रदर्श पी/14 वर्ष 2008-09 के लिए पंचसाला की सत्य प्रतिलिपि, प्रदर्श पी/15 बी-1 की सत्य प्रतिलिपि, प्रदर्श पी/16 स्थायी अनुज्ञप्ति की प्रतिलिपि, प्रदर्श पी/17 किराए की रसीदें, प्रदर्श पी/18 प्रमाण पत्र तारीख 18 सितम्बर, 2002 प्रदर्श पी/19 आवेदन पत्र और प्रदर्श पी/20 सहपत्र है ।

8. वादियों ने मुख्य परीक्षा में स्पष्ट रूप से कथन किया है कि उनके स्वामित्व वाली किराए की भूमि पर वे मकान बनाना चाहते हैं और इसके लिए योजना और अनुमानित लागत पहले ही तैयार कर चुके हैं जिसे वादपत्र के साथ फाइल किया गया है और उनके पास निर्माण के लिए पर्याप्त राशि है । वादियों द्वारा मुख्य परीक्षा में यह भी कथन किया गया है कि प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी सं. 2 को भूमि का कुछ भाग उप-किराएदार के रूप में 2,000/- रुपए प्रतिमाह किराए पर दिया है । वादी के साक्षी ने तारीख 2 मई, 2005 को नोटिस जारी करने के तथ्य के बारे में भी कथन किया है जिसके द्वारा उन्होंने किराए की भूमि को कब्जा खाली करने की मांग की है और स्वीकार किया है कि प्रतिवादी सं. 1 ने उक्त नोटिस का अपना उत्तर दिया है जिसमें उसने दर्शित किया था वह उनके बीच हक और किराएदारी से इनकार किया था और कथन किया था कि वह बिना किसी बाधा के 28 वर्षों से वाद भूमि पर कब्जा में है ।

9. वादी साक्षी अभि. सं. 1 उमा दीक्षित का प्रतिवादियों द्वारा प्रतिपरीक्षा की गई है । पैरा 57 में उसने स्वीकार किया है कि उसके पिता और प्रतिवादी सं. 1 के बीच वर्ष 1982 में करार हुआ था और कथन किया है कि प्रतिवादी सं. 1 लाल प्रसाद दीक्षित को किराया दिया करता था और तत्पश्चात् उमेश कुमार दीक्षित को किराया दिया करता था । साक्षी ने कथन किया कि प्रतिवादी सं. 2 ने 800 वर्ग फीट भूमि पर कब्जा कर लिया है । साक्षी अभि. सा. 2 उमेश कुमार दीक्षित मुख्तारनामा धारक है । विचारण न्यायालय के समक्ष उसकी परीक्षा की गई जिसमें उसने तथ्यात्मक सार का वर्णन किया है जिसे पहले ही वादपत्र में कथित किया जा चुका है । प्रतिपरीक्षा में उसने स्वीकार किया है कि प्रदर्श पी-14 और 15 में जो भी क्षेत्र उल्लिखित है, वह उनके स्वामित्व में है । साक्षी ने यह भी कथन किया है कि प्रदर्श पी-14 तथा

15 वादी के पति के नाम पर अभिलिखित हैं तथा भाइयों के नाम, हरि प्रसाद दीक्षित एवं अन्य भाइयों के बच्चों के नाम भी अभिलिखित हैं और वादियों के नाम राजस्व अभिलेखों में सम्मिलित नहीं है । अन्य साक्षी मंजीत सिंह, अभि. सा. 3 ने विचारण न्यायालय के समक्ष कथन किया है कि प्रतिवादी सं. 1 ने प्रतिवादी सं. 1 तथा रानी बाई दीक्षित के मध्य हुए करार के पश्चात् भूमि ली है जिसमें प्रतिवादी ने अपने हस्ताक्षर भी किए हैं । उसने स्पष्ट रूप से कथन किया कि प्रतिवादी सं. 1 रानी बाई दीक्षित का किराएदार है । इसी साक्षी ने प्रतिपरीक्षा में कथन किया है कि यह भूखंड रानी दीक्षित तथा उनकी पुत्री को दिया गया है और उमेश दीक्षित मुख्तारनामा धारक है । अभि. सा. 4 आर. के. सिवाने ने स्वीकार किया है कि प्रदर्श पी-16 तथा पी-19 में स्वामियों के नाम अभिलिखित नहीं है, जो पंजीकरण प्रमाणपत्रों से संबंधित दस्तावेज हैं जिसमें मैसर्स पवन ट्रेडर्स का नाम अभिलिखित है । वाणिज्यिक कर अधिनियम के अधीन जारी प्रमाणपत्र में स्वामी का नाम दस्तावेजों में अंकित नहीं है । अभि. सा. 5 ने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि प्रतिवादी सं. 2, प्रतिवादी सं. 1 के किराए के मकान में अपना व्यवसाय चला रहा है । वह प्रतिवादी सं. 1 की अनुमति से काम कर रहा है और वह उससे किराया ले रहा है । साक्षी ने इसके अतिरिक्त यह कथन दिया है कि रानीबाई इस परिसर में मकान का निर्माण करना चाहती है । साक्षी ने यह भी स्वीकार किया है कि प्रतिवादी सं. 2 प्रतिवादी सं. 1 को किराया देता था और दोनों निकट के नातेदार हैं ।

10. प्रतिवादियों ने अच्छेलाल जायसवाल की परीक्षा प्रति. सा. 5 के रूप में की है तथा दस्तावेज प्रस्तुत किए तथा प्रदर्श घ-1 दस्तावेज नोटिस तारीख 20 जुलाई, 2005, प्रदर्श घ-2 डाक रसीद, प्रदर्श घ-3 पावती, प्रदर्श घ-4 टेलीफोन कनेक्शन से संबंधित दस्तावेज हैं । प्रदर्श घ-5 टेलीफोन बिल । प्रतिवादी सं. 1 का विचारण न्यायालय में परीक्षा की गई जिसमें उसने लिखित कथन में किए गए अभिवचनों को दोहराया है और वादियों के काउंसेल द्वारा उसकी प्रतिपरीक्षा की गई है जिसमें उसने स्वीकार किया है कि उसे भूमि के विवरण के विषय में जानकारी नहीं है और उसके पास भूमि के स्वामित्व के विषय में कोई भी दस्तावेजी साक्ष्य नहीं है, लेकिन साक्षी ने कथन किया है कि किसी ने

भी स्वामित्व के विषय को आक्षेपित नहीं किया है और न ही किसी ने किराए की मांग की है । साक्षी ने प्रदर्श पी-4, पी-5 और पी-6 पत्र तारीख 26 फरवरी, 1998, वकालतनामा प्रदर्श पी-17 पर हस्ताक्षर करने से इनकार किया है । उसने स्वीकार किया है कि प्रतिवादी सं. 2 उसकी आंटी का पुत्र है । उसने अलग कारबार किया है जिस भूमि पर वह कार्य कर रहा है उस पर उसका कब्जा है ।

11. विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और अभिलेख पर सामग्रियों का मूल्यांकन करने के पश्चात् अपने तारीख 23 फरवरी, 2012 के निर्णय और डिक्री के द्वारा वाद प्रश्न सं. 1 कि क्या प्रतिवादी सं. 1, 5,000/- रुपए की दर से वाद भूमि 12809 वर्ग फीट का किराएदार है, का विनिश्चय करते हुए इस विवाद्यक पर प्रतिवादी के विरुद्ध सकारात्मक रूप से उत्तर दिया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य और अभिलेख पर सामग्रियों पर विचार करते हुए, हरि प्रसाद और प्रतिवादी सं. 1 के बीच निष्पादित किराएदारी करार प्रदर्श पी-4 का अवलंब लिया और साथ ही किराएदारी के संबंध में मुख्तारनामा धारक उमेश दीक्षित द्वारा निष्पादित करार पर यह निष्कर्ष दिया गया है कि प्रतिवादी सं. 1, मुख्तारनामा उमेश दीक्षित को किराया दे रहा था और यह भी अभिलिखित किया कि वह वाद भूमि पर किराएदार था जो 5,000/- रुपए प्रतिमाह की दर से अंग्रेजी माह के प्रथम दिन से प्रारम्भ होकर माह के अंतिम दिन तक है ।

12. विवाद्यक सं. 2 का विनिश्चय प्रतिवादी के विरुद्ध किया गया है कि उसने जनवरी, 2005 से किराया नहीं दिया है । जहां तक विवाद्यक प्रश्न सं. 3 का प्रश्न है कि क्या प्रतिवादी सं. 1 के पास वाद भूमि का कब्जा, वाद भूमि के स्वामी के रूप में है । इसका उत्तर नकारात्मक दिया गया है क्योंकि इस साक्षी की प्रतिपरीक्षा की गई है और उसका कथन है कि वह उमेश दीक्षित के माध्यम से किराया दे रहा था । न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला है कि चूंकि कोई रसीद प्रस्तुत नहीं की गई, इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि वह किराया नहीं दे रहा था ।

13. विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 4 का विनिश्चय वादियों के पक्ष में निर्णीत किया कि उनकी अनुज्ञा के बिना ही प्रतिवादी सं. 1

ने भूमि को उप-किराएदारी पर दे दिया था जो अधिनियम के अंतर्गत अनुज्ञेय नहीं है । वादी के साक्षी के कथन का अवलंब लेते हुए जिसने यह स्वीकार किया है कि वादी, वाद भूमि पर घर के निर्माण का आशय रखते हैं तथा विचारण न्यायालय ने साक्ष्य एवं तथ्य की स्पष्ट रूप से परीक्षा की है और विचार व्यक्त किया है कि घर के निर्माण के लिए वादियों के पास पर्याप्त राशि है तथा योजना भी तैयार कर ली गई है । वादी के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है । इस वाद का विनिश्चय करते हुए, विचारण न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि वादियों ने अधिनियम की धारा 12(1)(क), (ख), (ग) और (ढ) के अधीन प्रतिवादियों को बेदखल करने का मामला बनाया है क्योंकि उसने भूमि स्वामी की अनुमति के बिना किराएदारी भूमि को दूसरे व्यक्ति को किराए पर दिया है । इसलिए, विचारण न्यायालय ने प्रतिवादियों के विरुद्ध वादियों के पक्ष में इस विवाद्यक का विनिश्चय किया है । इस निर्णय और डिक्री के विरुद्ध प्रतिवादियों ने इस न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील प्रस्तुत की है ।

14. इस न्यायालय ने अपील को स्वीकार करते हुए, अधिनियम की धारा 13(1) के अधीन सुनवाई की अगली तारीख तक डिक्री के कब्जे वाले भाग पर रोक लगा दी है ।

15. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री की कड़ी आलोचना करते हुए दलील दी है कि वादी यह साबित करने में असफल रहे हैं कि वे वाद भूमि के स्वामी हैं, इसलिए, अधिनियम की धारा 12(1) के अधीन डिक्री संधारणीय नहीं है । यह भी दलील दी गई है कि अधिनियम की धारा 12(1)(ग) के अधीन डिक्री इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अनुज्ञेय नहीं है इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि भूमि की शनाख्त और वादी के स्वामित्व के संबंध में विवाद तब हुआ जब विभाजन विलेख में अन्य भूमि को विधि के अनुसार सामान्य रूप में दर्शित नहीं किया गया । यह भी दलील दी गई है कि अधिनियम की धारा 12(1)(क) के अधीन बेदखली का कोई आधार नहीं बनता है, इसलिए, निर्णय और डिक्री इस न्यायालय द्वारा अपास्त किए जाने योग्य है ।

16. प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि अपीलार्थियों द्वारा किया गया आक्षेप कि भूमि के कुछ स्वामियों ने वाद फाइल नहीं किया है, पोषणीय नहीं है और यह सुस्थापित विधिक स्थिति के विपरीत है क्योंकि अन्य स्वामियों ने प्रतिवादियों किराएदारों को बेदखल करने के लिए वाद फाइल करने के संबंध में आक्षेप नहीं किया है । इसलिए, वाद पूरी तरह से पोषणीय है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों के पक्ष में विवादित आदेश पारित करके ठीक ही किया है । उन्होंने **के. लुबना और अन्य** बनाम **बीबी और अन्य**[1] और **कस्तूरी राधाकृष्णन् और अन्य** बनाम **एम. चिन्नियन और अन्य**[2] वाले मामलों में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का अवलंब लिया है । उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि पूर्ववर्ती कार्यवाही में स्पष्ट स्वीकृति के अभाव में साक्ष्य अधिनियम की धारा 116 के अनुसार प्रत्यर्थियों के हक से इनकार करने से अपीलार्थियों को रोक दिया गया है और उन्होंने यह निवेदन किया है कि अपीलार्थियों ने पूर्ववर्ती कार्यवाहियों में विशेष रूप से भू-स्वामी अभिधृति के संबंध को स्वीकार किया है इसलिए, उन्हें ऐसे अभिवाक् उद्भूत करने से रोक दिया गया है । उन्होंने **रीता लाल** बनाम **राज कुमार सिंह**[3] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री का अवलंब लिया है और अपील को खारिज करने की प्रार्थना की है ।

17. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया चूंकि प्रतिवादियों ने भूमि स्वामी के रूप में वादी के हक को चुनौती दी है, इसलिए, प्रत्यर्थियों के लिए यह आवश्यक है कि वे वाद संपत्ति की विषयवस्तु के संबंध में हक साबित करें और इसके लिए उन्होंने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **विनय एकनाथ लाड** बनाम **चिऊ माओ चेन**[4] वाले मामले में पारित निर्णय को निर्दिष्ट किया है और यह भी निवेदन किया है कि प्रत्यर्थी स्थावर संपत्ति का ठीक, विनिर्दिष्ट और यथावत् विवरण दे । वर्तमान वाद में, स्थावर संपत्ति का कोई भी विनिर्दिष्ट

---

[1] (2020) 2 एस. सी. सी. 524.

[2] (2016) 3 एस. सी. सी. 296.

[3] (2002) 7 एस. सी. सी. 614.

[4] (2019) 20 एस. सी. सी. 182.

विवरण नहीं दिया गया है, इसलिए, वाद पोषणीय नहीं है, इसलिए, यह न्यायालय अपील मंजूर कर सकता है तथा वादी द्वारा फाइल सिविल वाद को खारिज कर सकता है । इस निवेदन की पुष्टि करने के लिए उन्होंने **प्रतिभा सिंह और अन्य** बनाम **शांति देवी प्रसाद और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का अवलंब लिया है ।

18. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना है तथा निचले न्यायालय के अभिलेख को पूर्ण संतुष्टि के साथ देखा है ।

19. अपीलार्थियों और प्रत्यर्थियों द्वारा किए गए विधिक निवेदनों पर विचार करने से पहले, इस न्यायालय के लिए सुसंगत उपबंधों को उद्धृत करना समीचीन होगा जो अपील में उठाए गए वर्तमान विवाद पर विनिश्चय करने पर लागू होते हैं ।

अधिनियम में 'जमींदार' की परिभाषा इस प्रकार दी गई है :-

> "**भू-स्वामी** – से अभिप्रेत है कि कोई ऐसा व्यक्ति जो किसी स्थान का भाड़ा चाहे अपने स्वयं के लेखे या किसी अन्य व्यक्ति के लेखे या उसकी ओर से या उसके फायदे के लिए या किसी अन्य व्यक्ति के न्यासी संरक्षक या रिसीवर की हैसियत से तत्समय प्राप्त कर रहा है या प्राप्त करने का हकदार है या जो किसी अभिधारी को वह स्थान भाड़े पर दिए जाने की दशा में, भाड़ा इस प्रकार प्राप्त करेगा या प्राप्त करने का हकदार होगा और उसके अंतर्गत प्रत्येक ऐसा व्यक्ति आता है जो, अभिधारी न होते हुए, समय-समय पर किसी भू-स्वामी के अधीन हक प्राप्त करें :"

20. अधिनियम की धारा 12(1)(क), (ख), (ग) और (ढ) में निम्नानुसार उपबंध है :-

> "12. **अभिधारियों की बेदखली पर निर्बन्धन** – (1) किसी अन्य विधि या संविदा में अन्तर्विष्ट किसी प्रतिकूल बात के होते हुए भी, किसी अभिधारी के विरुद्ध किसी स्थान से उसकी बेदखली के लिए सिविल न्यायालय में कोई वाद निम्नलिखित आधारों में से किसी

[1] [2002] (सप्ली.) 4 एस. सी. आर. 406.

एक या अधिक आधारों पर ही फाइल किया जाएगा अन्यथा नहीं, अर्थात् –

(क) यह कि अभिधारी ने, उससे वैध रूप से वसूली योग्य भाड़े संपूर्ण बकाया का उस तारीख के, जिसको कि भाड़े के बकाया के लिए मांग की सूचना भू-स्वामी द्वारा उस पर विहित रीति में तामील की गई हो, दो मास के भीतर न तो संदाय किया है और न निविदत्त ही किया है ;

(ख) यह कि अभिधारी ने, चाहे इस अधिनियम के प्रारंभ होने के पूर्व या पश्चात् संपूर्ण स्थान या उसके किसी भाग को प्रतिफलार्थ या अन्यथा विधि विरुद्धतया उपभाड़े पर दे दिया है, समनुदेशित कर दिया है या अन्यथा उसका कब्जा छोड़ दिया है ;

(ग) यह कि अभिधारी या उसके साथ निवास करने वाले किसी व्यक्ति ने कोई न्यूसेन्स पैदा कर दी है या कोई ऐसा कार्य किया है जो उस प्रयोजन से असंगत है जिसके लिए उसे वह स्थान अभिधृति पर दिया गया था या जिससे भू-स्वामी के उसमें के हित पर प्रतिकूल तथा सारत: प्रभाव पड़ना संभाव्य है ;

(ढ) यह कि, किसी ऐसे स्थान की दशा में, जो कि खुली भूमि है, भू-स्वामी को उस पर मकान बनाने की दृष्टि से उसकी आवश्यकता है ।"

21. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि अधिनियम की धारा 12(1)(क) के अधीन कोई भी आधार नहीं बनता है प्रतिवादी, वादियों के किराएदार नहीं हैं । वादियों के साक्षी उमेश दीक्षित ने स्पष्ट रूप से अभिसाक्ष्य दिया है कि प्रतिवादी सं. 1 ने दिसंबर, 2004 के बाद किराया नहीं दिया है । यह कथन, प्रतिपरीक्षा में अखंडित बना रहा है । यहां तक कि अपीलार्थी सं. 1 ने सिविल वाद सं. 1ए/95 की अन्य कार्यवाही में अपने साक्ष्य में स्वीकार किया है जिसे विचारण न्यायालय के समक्ष प्रदर्श पी/18 के रूप में प्रदर्शित किया गया था जिसमें उसने स्वीकार किया है कि वह उमेश दीक्षित को किराया दे रहा है जो

अपीलार्थियों का मुख्तारनामा धारक है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस साक्ष्य का मूल्यांकन करते हुए विनिर्दिष्ट निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि प्रतिवादी सं. 1 ने दिसंबर, 2004 के बाद किराया नहीं दिया है, इसलिए अधिनियम की धारा 12(1)(क) के अनुसार बेदखली का मामला बनता है । इस प्रकार यह निष्कर्ष न तो अनुचित है और न ही अभिलेखों के प्रतिकूल है, इसलिए, इस न्यायालय ने पाया है कि वादियों ने अधिनियम की धारा 12(1)(क) के अनुसार प्रतिवादियों को बेदखली करने का मामला बनाया है ।

22. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि चूंकि संपत्ति के कुछ स्वामियों ने किराएदार की बेदखल के लिए वाद फाइल नहीं किया है, इसलिए, वाद को विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया जाना चाहिए था ।

23. प्रत्यर्थियों ने बेदखली के लिए अन्य आधार लिए हैं क्योंकि अपीलार्थी सं. 1 ने अपीलार्थी सं. 2 को उप-किराएदारी दी है, जो अधिनियम की धारा 12(1)(ख) का अतिक्रमण है । प्रत्यर्थियों द्वारा परीक्षित साक्षियों ने इस आशय के स्पष्ट रूप से साक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी सं. 1 ने भूमि का एक भाग अपीलार्थी सं. 2 को 2,000/- रुपए प्रतिमाह की दर से किराए पर दिया है । यह साक्ष्य अक्षुण्ण रहा, इस प्रकार, अपीलार्थी सं. 1 ने अधिनियम की धारा 12(1)(ख) के अंतर्गत शर्त का अतिक्रमण किया है । इस प्रकार, प्रत्यर्थियों ने अधिनियम के अधीन वाद भूमि से बेदखली का मामला बनाया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्यों और सामग्रियों का मूल्यांकन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि अपीलार्थियों ने भू-स्वामी द्वारा बेदखली नोटिस जारी करने के पश्चात् किराए की जमीन खाली नहीं की है । इस प्रकार, उन्होंने प्रत्यर्थी-भू-स्वामियों के हितों के विरुद्ध कार्य किया है । इस प्रकार, अधिनियम की धारा 12(1)(ख) का अतिक्रमण किया है ।

24. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **के. लुंबना** (उपर्युक्त) वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"15. हमारे मत में, पूर्वोक्त निर्णय में सभी पहलुओं पर विधिक सिद्धांत सम्मिलित है । उक्त अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (4) के उप पैरा (i) के मूल परिशीलन से इस बात में कोई संदेह नहीं रह जाता कि कारण तब उद्भूत होता जब किराएदार पट्टे के अधीन अपने अधिकारों को अंतरित करता है और पूरे भवन 'या उसके किसी भाग' को उप किराए पर देता है, यदि पट्टा उसे ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं देता है । यद्यपि, परन्तुक यह अपेक्षा करता है कि भू-स्वामी, पट्टे की उक्त शर्तें के उल्लंघन की सूचना देते हुए किराएदार, को पंजीकृत नोटिस भेजनी चाहिए थी और किराएदार द्वारा नोटिस प्राप्त होने के 30 दिनों के भीतर अंतरण या उप-पट्टे, जैसी भी दशा हो, को समाप्त करने में असफल रहने पर, भू-स्वामी द्वारा बेदखली के लिए आवेदन किया जा सकता है । इस प्रकार, किराएदार द्वारा परिसर के किसी भी हिस्से को उप-किराए पर देने से पूरे परिसर से बेदखली का अधिकार मिल जाता है । हमारी राय में, कानून का इसी प्रकार से परिशीलन किया जाना चाहिए तथा यह भी कि उसका युक्तियुक्त निर्वचन भी यही है कि यदि एक किराएदारी सृजित की जाती है तो उसके केवल एक हिस्से के संबंध में ही बेदखली आदेश पारित करना समुचित नहीं होगा और न कि पूरे के लिए । उपबंध का स्पष्ट परिशीलन है और पूर्वोक्त न्यायिक घोषणाओं के अवलोकन से इस सिद्धांत के विषय के बारे में कोई संदेह नहीं है । यह सद्भावना की आवश्यकता का मामला नहीं है । इस मामले के तथ्यों के निष्कर्षों की बारीकी से जांच करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि आवश्यकता तथ्य जिनका निचले न्यायालय द्वारा विश्लेषण किया गया है, वह स्पष्ट रूप से एक ही किराएदारी के अस्तित्व को दर्शाते हैं । एक ही नोटिस जारी करना और एक ही बेदखली याचिका फाइल करना, यद्यपि, परिसर के विभिन्न हिस्सों के लिए अलग-अलग आधार उठाए गए हों, एक निर्विवादित तथ्य है । इस प्रकार, अपीलार्थी से पूरे परिसर को उप-किराए पर देने के अभिकथन की अपेक्षा नहीं की जाती है यदि उप-किराए को परिसर के केवल एक हिस्से को दिया गया है । इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थियों ने विनिर्दिष्ट रूप से यह दावा नहीं किया है कि किसी हिस्से को

किराए पर देने से पूरा परिसर खाली किया जाएगा किन्तु उसके बाद यही विधिक परिणाम है जैसा कि विधिक प्रास्थिति के आविर्भाव हो रहा है ।"

25. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल के इस निवेदन पर प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने जोरदार आक्षेप किया है । उनका निवेदन है कि श्री हरि प्रसाद दीक्षित और अपीलार्थी सं. 1 के बीच कृष्ण कुमार रोड मौहदापारा में स्थित खुली भूमि जिसके उत्तर में किराएदार जिकरभाई, दक्षिण में किराएदार अब्दुल सलीम, पूर्व में किचन गार्डन और पश्चिमी में किराएदार जगजीवनभाई और सत्तारभाई है तारीख 1 फरवरी, 1982 से तारीख 31 दिसंबर, 1982 तक की अवधि के लिए किराएदारी करार प्रदर्श पी-4 तारीख 18 अगस्त, 1982 को हुआ था । एक अन्य करार प्रदर्श पी-5 तारीख 8 नवम्बर, 1995, अपीलार्थी सं. 1 तथा उमेश कुमार दीक्षित, रानीबाई दीक्षित की ओर से मुख्तारनामा धारक, नलिनी कुमारी विजया, कुमारी क्षमा दीक्षित और कुमारी उमा दीक्षित जो कि स्वर्गीय हरि प्रसाद दीक्षित के सभी विधिक उत्तराधिकारी के बीच तारीख 8 नवम्बर, 1995 से 7 अक्तूबर, 1996 तक के लिए एक वर्ष के लिए निष्पादित हुआ था । चूंकि, अपीलार्थी सं. 1 तथा मुख्तारनामा धारक के मध्य करार को निष्पादित किया गया है, इसलिए, अपीलार्थियों द्वारा अपीलार्थियों तथा प्रत्यर्थियों के मध्य किराएदारी के संबंध में आक्षेप नहीं किया जा सकता है ।

26. अन्यथा भी, यह सुस्थिर विधिक स्थिति है कि सह-स्वामियों में से कोई एक अकेले अपने अधिकारों के आधार पर किराएदार को बेदखल करने के लिए वाद फाइल कर सकता है और किराएदारों के लिए यह कोई प्रतिरक्षा नहीं है कि वे बेदखली के वाद की पोषणीयता पर प्रश्न उठाएं क्योंकि अन्य सह-स्वामियों को पक्षकार के रूप में नहीं दर्शाया गया है । **श्री राम पसरीचा** बनाम **जगन्नाथ और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्न प्रकार से अभिनिर्धारित किया :–

"27. विधिशास्त्रीय दृष्टि से यह कहना सही नहीं है कि किसी संपत्ति का सह-स्वामी, उसका स्वामी नहीं है । वह अन्य लोगों के साथ संयुक्त संपत्ति के प्रत्येक भाग का स्वामी है और यह नहीं

[1] (1976) 4 एस. सी. सी. 184.

कहा जा सकता है कि वह संपत्ति का केवल भागतः स्वामी या आंशिक स्वामी है । स्थिति केवल तब बदलेगी, जब विभाजन होगा । इसलिए, यह निवेदन स्वीकार करना संभव नहीं है कि वादी जो कि वास्तव में परिसर का भू-स्वामी और सह-स्वामी है, वह धारा 13(1)(च) के अर्थान्तर्गत परिसर का स्वामी नहीं है । यह सिद्ध करना आवश्यक नहीं है कि वादी धारा 13(1)(च) के उद्देश्य के लिए संपत्ति का एकमात्र स्वामी है जब तक कि वह संपत्ति का सह-स्वामी है और साथ ही प्रतिवादियों का स्वीकृत भू-स्वामी भी है ।

28. श्री तारकुंडे ने यह भी निवेदन किया है कि चूंकि कलकत्ता उच्च न्यायालय ने योगमाया पाखीरा **बनाम** शांति सुभा बोस वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि धारा 13(1)(च) के अर्थान्तर्गत स्थायी पट्टेदार मालिक नहीं है इसलिए, सह-स्वामी बेहतर स्थिति में नहीं होगा । हमारी राय यह है कि सह-स्वामी पूरी संपत्ति का उतना ही मालिक होता है, जितना की किसी संपत्ति का कोई एकमात्र मालिक होता है । हालांकि, हम स्थायी पट्टेदार के मामले के विषय में कोई राय व्यक्त नहीं करते हैं, क्योंकि यह मुद्दा, इस अपील में उद्भूत नहीं हुआ है ।"

27. **धन्नालाल** बनाम **कलावतीबाई और अन्य**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"16. इस न्यायालय के कम से कम तीन विनिश्चयों में यह सुस्थिर है जैसाकि श्री राम पसरीचा **बनाम** जगन्नाथ और अन्य, (1976) 4 एस. सी. सी. 184, कांता गोयल **बनाम** बी. पी. पठान और अन्य, (1977) 2 एस. सी. सी. 814 और पाल सिंह **बनाम** सुन्दर सिंह (मृत) के विधिक प्रतिनिधि और अन्य के माध्यम से (1989) 1 एस. सी. सी. 444 वाले मामलों में कहा गया है कि सह-स्वामियों में से कोई एक अकेले और अपने अधिकार में किराएदार को बेदखल करने के लिए वाद फाइल कर सकता है और

[1] (2002) 6 एस. सी. सी. 16.

किराएदार के लिए इस आधार पर मामले की पोषणीयता पर प्रश्न करने की कोई प्रतिरक्षा नहीं है कि अन्य सह-स्वामियों को वाद में पक्षकार के रूप में सम्मिलित नहीं किया गया है । जब बेदखली कार्यवाही की विषयवस्तु वाली संपत्ति कई स्वामियों के स्वामित्व में होती है तो प्रत्येक सह-स्वामी, संयुक्त संपत्ति के प्रत्येक भाग और प्रत्येक अंश का स्वामी होता है और यह नहीं कहा जा सकता है कि वह संपत्ति केवल एक भाग स्वामी या आंशिक स्वामी है जब तक कि संपत्ति का विभाजन नहीं होता है । वह अकेले ही अन्य सह-स्वामियों के साथ सम्मिलित हुए बिना किराएदार को बेदखल करने का वाद फाइल कर सकता है, यदि ऐसे अन्य सह-स्वामी आक्षेप नहीं करते हैं । **श्री राम पसरीचा** (उपर्युक्त) वाले मामले में, किराएदार ने अंग्रेजी नियम का अवलंब लिया था कि यदि दो या अधिक भू-स्वामी इस आधार पर कब्जे के लिए वाद फाइल करते हैं कि उनमें से किसी एक के लिए आवास गृह की आवश्यकता है तो मामला असफल हो जाएगा । आवश्यकता सभी भू-स्वामियों को होनी चाहिए । न्यायालय ने पाया कि कलकत्ता और गुजरात के उच्च न्यायालयों द्वारा अंग्रेजी नियम का पालन नहीं किया गया था, इन उच्च न्यायालयों ने अंग्रेजी विधि के नियम से सम्मानपूर्वक असहमति जताई है । इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वादी के पक्ष में डिक्री पारित की जा सकती है, भले ही वह परिसर का पूर्ण और सम्पूर्ण स्वामी न हो क्योंकि उसे अपने उपयोग के लिए परिसर की आवश्यकता थी और "यदि वह स्वामी" की आवश्यकता को भी पूर्ण करता है जो कि पश्चिम बंगाल परिसर किराएदारी अधिनियम, 1956 की धारा 13(1)(च) द्वारा नियोजित अभिव्यक्ति है ।"

28. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **धन्नालाल** (उपर्युक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय का अवलंब लेते हुए बाद के निर्णय में उसी विधिक स्थिति को दोहराया तथा **कस्तूरी**

राधाकृष्णन् और अन्य बनाम **एम. चिन्नियन और अन्य**[1] वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है :–

"25. इस निवेदन को विस्तार से बताते हुए, विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि जहां तक पहले आधार का संबंध है, यह धन्नालाल **बनाम** कलावतीबाई और अन्य, (2002) 6 एस. सी. सी. 16 वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के आलोक में कायम रखे जाने योग्य नहीं है जिसमें यह अधिकथित किया गया है कि बेदखली याचिका में वाद परिसर के सभी सह-स्वामियों को पक्षकार बनाना आवश्यक नहीं है और यद्यपि कुछ सह-स्वामियों ने बेदखली याचिका फाइल की हो, यह विधि में पोषणीय है । विद्वान् काउंसेल के अनुसार, चूंकि यह निष्कर्ष उच्च न्यायालय द्वारा धन्नालाल वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि पर विचार किए बिना अभिलिखित किया गया था, इसलिए, इसे अपास्त किया जाना चाहिए ।"

29. इसलिए, यह आधार कि अन्य सह-स्वामी वाद में सम्मिलित नहीं हुए हैं, स्वीकार्य नहीं है और इसे खारिज किए जाने योग्य है । प्रतिवादियों ने वादियों के किराएदारी से इनकार किया है और असंगत प्रतिरक्षा की है कि अन्य सह-स्वामी वाद में सम्मिलित नहीं हुए हैं । केवल इसी आधार पर, विचारण न्यायालय द्वारा वाद खारिज कर दिया जाना चाहिए था, प्रतिवादियों द्वारा वाद भूमि पर स्वामित्व का भी दावा किया गया है, जिसे विद्वान् विचारण न्यायालय ने विवाद्यक सं. 3 पर विनिश्चय करते समय नकार दिया है । इससे यह सिद्ध होता है कि प्रतिवादियों द्वारा वादियों के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने का आशय था, इस प्रकार, यह अधिनियम की धारा 12(1)(ग) के अनुसार बेदखली का मामला बनता है ।

30. अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया है कि प्रत्यर्थियों द्वारा यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की है कि भूमि प्रत्यर्थियों के उपयोग के लिए सद्भाविक आवश्यकता थी । इसलिए, किराए की भूमि से किराएदारों को बेदखल

[1] (2016) 3 एस. सी. सी. 296.

करने के लिए अधिनियम की धारा 12(1)(च) के उपबंधों को लागू करने के लिए अभिलेख पर कोई सामग्री नहीं है ।

31. दूसरी ओर प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदन पर जोरदार विरोध किया और निवेदन किया है कि उन्होंने गृह निर्माण के संबंध में नक्शा प्रस्तुत किया है और अपने साक्ष्य में कथन किया कि उनके पास लगभग 5,00,000/- रुपए हैं जो गृह निर्माण के लिए पर्याप्त हैं, इसलिए, विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किया गया यह निष्कर्ष कि भूमि की सद्भाविक आवश्यकता है, इसे अनुचित अभिलेख के प्रतिकूल नहीं कहा जा सकता है, इसलिए अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा किया गया यह निवेदन कि भूमि की कोई सद्भाविक आवश्यकता नहीं है, यह स्वीकार्य नहीं है ।

32. विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि वादी पहले से ही गृह निर्माण के लिए योजना तैयार कर चुके हैं और उनके पास गृह निर्माण के लिए पर्याप्त धन है और उसके पश्चात् अधिनियम की धारा 12(1)(च) के अधीन निर्णय और डिक्री पारित की गई है । विचारण न्यायालय ने निष्कर्ष अभिलिखित किया है कि आवासीय उद्देश्य के लिए सद्भाविक आवश्यकता थी । इस प्रकार, प्रत्यर्थी भूमि का खाली कब्जा पाने के हकदार हैं । यह सुस्थापित स्थिति है कि सद्भाविक आवश्यकता को किराएदार वादी को नहीं बता सकते हैं किराएदारी भूमि की सद्भाविक आवश्यकता है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **प्रतिभा देवी (श्रीमती)** बनाम **टी. वी. कृष्णन**[1] वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "2. सिद्ध तथ्य यह है कि अपीलार्थी एक विधवा है, अपने पति स्वर्गीय शिव नाथ मुखर्जी के निधन के पश्चात् से वह श्री एन. सी. चटर्जी के साथ बी-4/20, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली में एक अतिथि के रूप में रह रही है, जो उसके स्वर्गीय पति के कुटुंब के मित्र थे । ऐसा दर्शित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि उसे श्री चटर्जी के घर में रहने का किसी भी प्रकार

[1] (1996) 5 एस. सी. सी. 353.

का अधिकार है । दूसरी ओर, वह केवल विवशता के कारण वहां रह रही है । उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया कारण कि अपीलार्थी लगभग 70 वर्ष की एक वृद्ध महिला है और उसकी देखभाल करने वाला कोई नहीं है और इसलिए, उसे चटर्जी के साथ रहना जारी रखना चाहिए, मुश्किल से ही हस्तक्षेप के लिए पर्याप्त आधार था । भू-स्वामी ही अपनी आवासीय आवश्यकता का सबसे अच्छा न्यायाधीश है । उसे इस मामले में पूरी स्वतंत्रता है । भू-स्वामी को यह आज्ञा देना न्यायालयों का कार्य नहीं है कि उसे कैसे और किस प्रकार से रहना चाहिए या उसका अपना स्वयं का आवासीय मानक विहित करें । उच्च न्यायालय अपीलार्थी की उम्र के विषय में अधिक तत्परता से चिंतित है और उच्च न्यायालय सोचता है कि उसकी उम्र के कारण उसकी देखभाल की जानी चाहिए । अब यह अपीलार्थी का मत है न कि उच्च न्यायालय का । हम उच्च न्यायालय द्वारा ऐसी अनावश्यक सलाह देने की सराहना नहीं कर सकते जो अनावश्यक थी । ऐसी कोई विधि नहीं है जो भू-स्वामी को उसकी संपत्ति के लाभकारी फायदों से वंचित करता हो । हम तद्नुसार उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्ष को उलटते हैं और किराया नियंत्रक के उस निष्कर्ष को बहाल करते हैं कि अपीलार्थी ने अपने निजी उपयोग और कब्जे के लिए किराए पर दिए गए परिसर की अपनी वास्तविक आवश्यकता सिद्ध की थी, जो निष्कर्ष आस-पास की परिस्थितियों के आलोक में साक्ष्य की उचित मूल्यांकन पर आधारित था ।

3. तथापि, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने एकल न्यायाधीश (न्या. टी. पी. एस. चावला) द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियों का अवलंब लिया है जो इस न्यायालय द्वारा फिरोज बामनजी देसाई **बनाम** चन्द्रकांत एन. पटेल (1974) 1 एस. सी. सी. 661 = [1974] 3 एस. सी. आर. 267 वाले मामले में दिए गए विनिश्चयों पर आधारित हैं, जिसके अनुसार –

> "मुझे लगता है कि सत्य परीक्षा यह है कि क्या समग्र और युक्तियुक्त मत से यह कहा जा सकता है कि भू-स्वामी

> के पास अपने उपयोग के लिए उपयुक्त आवास है । इस प्रश्न का विनिश्चय करते समय निश्चित रूप से इस तथ्य पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि भू-स्वामी का किसी अन्य आवास पर कोई विधिक अधिकार नहीं है लेकिन यह केवल एक कारक है और मामले का अंत नहीं है ।"

ये टिप्पणियां इस न्यायालय द्वारा फिरोज बामनजी देसाई वाले {(1974) 1 एस. सी. सी. 661 = [1974] 3 एस. सी. आर. 267} में दिए गए विनिश्चय के अनुपातिक भ्रान्ति पर आधारित है । उच्च न्यायालय ने यह अधिकथित करके त्रुटि कारित की है कि परीक्षा वैकल्पिक आवास की उपलब्धता है और अधिनियम की धारा 14(1)(ड) के तरह भू-स्वामी के सद्भावपूर्ण दावे के न्यायनिर्णयन में इस प्रकार के व्यवसाय का विधिक अधिकार नहीं है । इस न्यायालय द्वारा फिरोज बामनजी देसाई वाले मामले में {(1974) 1 एस. सी. सी. 661 = [1974] 3 एस. सी. आर. 267} में किए गए विनिश्चय में ऐसा कोई सिद्धांत नहीं दिया गया है । इसके विपरीत, इस न्यायालय ने बॉम्बे उच्च न्यायालय के निर्णय को उलट दिया जो इस आधार पर आगे बढ़ा था। उस मामले में, पहली मंजिल पर एक किराएदार के रूप में अपीलार्थी की मां का कब्जा था और प्रश्न बंगले की सही उपलब्धता के विषय में था जो इजाजत एवं अनुज्ञप्ति पर एक डा. भरुचा को दिया गया था । उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि ध्वस्त परिसर के भूतल के लिए अपीलार्थी की आवश्यकता, युक्तियुक्त और सद्भाविक नहीं थी क्योंकि अपीलार्थी के पास सही बंगले का विधिक कब्जा था । इस न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए कहा : (एस. सी. सी. पृष्ठ 668, पैरा 8)

> "अब, यह सत्य है कि जब परिसर इजाजत और अनुज्ञप्ति पर दिए जाते हैं तो अनुज्ञप्तिधारक, विधिक दृष्टिकोण से परिसर के कब्जे में बना रहता है और अनुज्ञप्तिधारक को मात्र कब्जा दिया जाता है और इसलिए, कठोरतः कहा जाए तो उच्च न्यायालय का यह कहना सही था

कि सही बंगला, जो डा. भरूचा को इजाजत और अनुज्ञप्ति पर दिया था, अपीलार्थी के कब्जे में था ।"

इसके बाद न्यायालय ने कहा : (एस. सी. सी. पृष्ठ 668, पैरा 8)

"परन्तु यह निर्धारित करने के उद्देश्य से कि क्या भूतल परिसर के लिए अपीलार्थी की आवश्यकता युक्तियुक्त और सद्भाविक थी, इस बात पर विचार करना आवश्यक नहीं है कि क्या अपीलार्थी विधिक रूप से सही बंगला अपीलार्थी के कब्जे में था, लेकिन क्या सही बंगला अपीलार्थी के अधिभोग के लिए उपलब्ध था, जिससे यह न कहा जा सके कि उसे भूतल परिसर की आवश्यकता है । यदि सही बंगला डा. भरूचा के कब्जे में था तो यह स्पष्ट रूप से अपीलार्थी के कब्जे के लिए उपलब्ध नहीं था और इसे भूतल परिसर के लिए अपीलार्थी की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता है ।"

तद्नुसार, हम सतपाल **बनाम** नंद किशोर (आई. एल. आर. 1983 दिल्ली 73) वाले मामले में, दिल्ली उच्च न्यायालय के विनिश्चय को खारिज करते हैं क्योंकि इसमें उचित विधि को अधिकथित नहीं किया गया है ।

4. इन आधार वाक्यों में, उच्च न्यायालय के निर्णय अपीलार्थियों के दावे का समर्थन नहीं कर सकते हैं । वैकल्पिक आवास की उपलब्धता पर विचार करते हुए, न्यायालय को न केवल इस बात पर विचार करना होगा कि क्या ऐसा आवास उपलब्ध है लेकिन यह भी विचार करना होगा कि क्या भू-स्वामी को ऐसे आवास में विधिक अधिकार है । अपीलार्थी ने अधिनियम की धारा 14(1)(ड) के अधीन ध्वस्त परिसर पर अपनी सद्भाविक व्यक्तिगत आवश्यकता सिद्ध कर दी थी और उसके दावे को केवल इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता था कि वह परिस्थितियों के कारण एक कुटुंब मित्र के साथ अतिथि के रूप में रह रही थी ।"

33. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा सिविल अपील सं. 231-232/2021 (बलवंत सिंह **उर्फ** बन्त सिंह और अन्य बनाम सुदर्शन कुमार और अन्य) ने तारीख 27 जनवरी, 2021 में अभिनिर्धारित किया है कि

कारबार के लिए भू-स्वामी के पास उपलब्ध जगह की पर्याप्ता या अन्यथा की आज्ञा किराएदार को नहीं देनी है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णय के पैरा 11 और 12 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "11. उपरोक्त पहलू पर, किराएदार यह आज्ञा नहीं दे सकता है कि प्रस्तावित कारबार उद्यम के लिए कितनी जगह पर्याप्त है या यह सुझाव नहीं दे सकता है कि भू-स्वामी के पास उपलब्ध जगह पर्याप्त होगी । जहां तक पहले की बेदखली कार्यवाही का प्रश्न है वह भू-स्वामियों के कब्जे के अधीन संबंधित खाली दुकानें सम्यक् रूप से प्रकट थी लेकिन भू-स्वामी का पक्षकथन यह है कि उनके कब्जे में परिसर/स्थान प्रस्तावित फर्नीचर कारबार के लिए अपर्याप्त है । आयु के पहलू पर यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी भी वरिष्ठ नागरिक हैं लेकिन इससे किराए के परिसर में अपना कारबार जारी रखने की उनकी इच्छा प्रभावित नहीं होती है । इसलिए, आयु के प्रस्तावित कारबार में भू-स्वामियों के विरुद्ध उम्र को कारक नहीं हो सकता है ।
>
> 12. किराएदारों को प्रतिवाद करने के अधिकार से वंचित करने और भू-स्वामी को खाली कब्जे को सौंपने का आदेश देते हुए, किराया नियंत्रक ने कहा कि भू-स्वामी भारत लौट आया है और उसे अपनी सद्भाविक आवश्यकता के लिए परिसर की आवश्यकता है और तद्नुसार सम्पूर्ण इमारत के कब्जे की बरामदगी के लिए धारा 13ख के अनुसार संक्षिप्त कार्यवाही न्यायोचित पाई जाती है । यह भी कहा गया कि धारा 13ख के अधीन वर्तमान कार्यवाही भू-स्वामी द्वारा बेदखली सुनिश्चित करने के लिए प्रस्तुत की गई, पहली कार्यवाही है और पिछली कार्यवाही अधिनियम की धारा 13 के अनुसार थी । इसके अलावा अधिनियम की धारा 13ख के अधीन किसी एक अनिवासी भारतीय के लिए अपनी पसंद की इमारत खाली करवाने पर कोई रोक नहीं है ।"

34. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्यों और सामग्रियों की मूल्यांकन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि वादियों ने स्पष्ट रूप से साबित कर दिया है कि उनके पास घर के निर्माण के लिए पर्याप्त राशि है और उन्होंने नक्शा भी प्रस्तुत किया है, इसलिए, प्रतिवादियों ने धारा 12(1)(ढ) के अधीन बेदखली के

लिए मामला बनाया है । इस निष्कर्ष को, अभिलेखों के विपरीत या माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस संबंध में अधिकथित विधि के विरुद्ध नहीं कहा जा सकता है । विचारण न्यायालय द्वारा धारा 12(1)(ढ) के अधीन बेदखली के लिए पारित निर्णय सही ही पारित किया गया है जिससे इस न्यायालय द्वारा किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

35. उपर्युक्त विधिक स्थिति और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों पर विचार करते हुए, मेरा यह निष्कर्ष है कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 12(1)(क), (ख), (ग) और (ढ) के अधीन प्रतिवादियों को बेदखल करने वाले पारित निर्णय और डिक्री में कोई अनुचितता या अवैधता नहीं है । तद्नुसार, अपील खारिज किए जाने योग्य है और खारिज की जाती है ।

36. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को निर्देश दिया कि वाद भूमि को वे तुरंत खाली करे और तारीख 23 फरवरी, 2012 तक वादियों को वाद भूमि का कब्जा तुरन्त सौंप दें, बहरहाल, चाहे जैसा भी दशा हो, भू-स्वामियों ने कब्जा हासिल नहीं किया है जो भी हो, न्यायालय अपीलार्थियों को परिसर का खाली कब्जा सौंपने के लिए तारीख 20 अगस्त, 2022 तक का समय दे सकता है । यदि अपीलार्थियों द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष कोई किराया जमा किया गया है तो उसे प्रत्यर्थियों द्वारा वापस ले लिया जाएगा ।

37. तद्नुसार डिक्री तैयार किया जाए ।

अपील खारिज की गई है ।

अम./क.

हेम राज शर्मा

बनाम

जागिन्द्रो देवी और अन्य

(2013 के आदेश संख्या 4121 से प्रथम अपील)

तारीख 25 अक्तूबर, 2021

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8) – धारा 30 और धारा 2(1)(ढ) – अपील – गृह निर्माण कार्य में नियोजित दैनिक मजदूर की निर्माण कार्य के दौरान मृत्यु – नियोजक का दायित्व – यदि कोई व्यक्ति गृह निर्माण कार्य में दैनिक मजदूरी के आधार पर नियोजित किया जाता है और निर्माण कार्य के दौरान उस मजदूर की मृत्यु हो जाती है तो उसकी मृत्यु के एवज में प्रतिकर संदाय करने का दायित्व नियोजक का होगा क्योंकि वह मजदूर संबंधित अधिनियम के अर्थान्तर्गत कर्मकार की परिभाषा के अन्तर्गत आएगा ।

वर्तमान मामले में, याचियों ने अधिनियम की धारा 4 के अधीन एक याचिका फाइल की जिसमें उन्होंने श्री कुलदीप सिंह के विधिक प्रतिनिधि और आश्रित होने के नाते श्री कुलदीप सिंह की मृत्यु के एवज प्रतिकर का दावा किया था । याचियों ने निचले न्यायालय के समक्ष यह दावा किया था कि मृतक कुलदीप सिंह को इसमें के प्रत्यर्थी/अपीलार्थी द्वारा वर्ष 2007 में अपने गृह का निर्माण करने के लिए 100/- रुपए प्रतिदिन की दर से दैनिक मजदूरी पर नियोजित किया गया था और तारीख 12 सितम्बर, 2007 को उपर्युक्त नामित मृतक कुलदीप सिंह की प्रत्यर्थी के गृह की कच्ची दीवाल के मलबे के नीचे दब कर मृत्यु हो गई थी । यद्यपि, पूर्वोक्त व्यक्ति को अस्पताल ले जाया गया था किन्तु उसे मृत घोषित कर दिया गया था । चूंकि, मृतक कुलदीप सिंह कुटुम्ब का एकमात्र आय अर्जित करने वाला व्यक्ति था, याचियों ने 3,00,000/- रुपए के प्रतिकर की ईप्सा करते हुए निचले न्यायालय में वाद फाइल

किया । प्रत्यर्थी ने पूर्वोक्त दावे का खंडन करते हुए, उत्तर फाइल किया और यह दावा किया कि उसने तारीख 12 सितम्बर, 2007 को स्वर्गीय कुलदीप सिंह को खुदाई के लिए नियोजित नहीं था, जैसा कि अभिकथित है । उसने इस बात से भी इनकार किया कि मृतक कुलदीप सिंह की मृत्यु कच्ची दीवाल के नीचे दबने के पश्चात् नहीं हुई थी । तत्पश्चात्, विद्वान् आयुक्त, कर्मकार प्रतिकर ने तारीख 20 अक्तूबर, 2012 के अधिनिर्णय द्वारा याचियों को 2,54,160/- रुपए के साथ 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज अर्थात् 1,52,496/- रुपए (कुल 4,06,656/- रुपए) प्रतिकर पाने का हकदार अभिनिर्धारित किया और विनिर्दिष्टतः यह आदेश किया कि यदि पूर्वोक्त रकम दो माह की अवधि के भीतर संदत्त नहीं की जाती है तो प्रत्यर्थी प्रतिकर की रकम पर 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज के साथ ही साथ उसके ऊपर संगणित ब्याज का संदाय करने के लिए भी दायी होंगे । पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, प्रत्यर्थी ने वर्तमान कार्यवाहियों में इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जिसमें उसने यह प्रार्थना की है कि वर्तमान कार्यवाहियों में आक्षेपित तारीख 20 अक्तूबर, 2021 के अधिनिर्णय को अपास्त करने के पश्चात् याचियों के दावे को खारिज कर दिया जाए । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अधिनियम की धारा 2(1)(ढ) के यथाउपबंधित 'कर्मकार' की परिभाषा का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात्, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि शब्द 'उस व्यक्ति के अलावा' अन्य व्यक्ति से है जिसका नियोजन आकस्मिक प्रकृति का है और जो नियोजक के व्यापार या कारबार के प्रयोजन के लिए अन्यथा नियोजित है" का संशोधन अधिनियम, 2000 द्वारा अर्थात् तारीख 8 दिसम्बर, 2000 के तत्काल प्रभाव से लोप कर दिया गया है, जिसके पश्चात्, कर्मकार की परिभाषा विस्तृत हो गई है और ऐसी हैसियत में नियोजित व्यक्ति जो अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट है, 'कर्मकार' के निबंधनों में आता है । अधिनियम की अनुसूची 2, पैरा 8 का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने से यह स्पष्ट होता है कि कोई व्यक्ति जो किसी भवन के निर्माण, रख-रखाव, मरम्मत या ध्वस्त करने में जो भूमि तल से ऊपर एक मंजिला से अधिक की है या

होनी है या हो गई है या छत के बराबर भूमि से 12 फीट या उससे अधिक है, में नियोजित है, अधिनियम के अर्थान्तर्गत 'कर्मकार' होगा । यह विवादित नहीं है कि संशोधन अधिनियम, 2000 के द्वारा 'कर्मकार' की परिभाषा संशोधित कर दी गई जिसके द्वारा शब्द 'उस व्यक्ति के अलावा अन्य व्यक्ति से है जिसका नियोजन आकस्मिक प्रकृति का है और जो नियोजक के व्यापार या कारबार के प्रयोजन के लिए अन्यथा नियोजित है' समाप्त कर दिए गए थे, इसका अभिप्राय यह है कि अभिकथित दुर्घटना के समय पर मृतक कुलदीप कुमार एक कर्मकार था और इस प्रकार, प्रत्यर्थी उसके विधिक प्रतिनिधि/आश्रित होने के नाते कर्मकार प्रतिकर अधिनियम की धारा 4 के अधीन सही ही याचिका फाइल की है और यह नहीं कहा जा सकता है कि निचले न्यायालय ने अधिनियम की धारा 2(1)(ढ) का गलत अर्थान्वयन और गलत निर्वचन किया है । अतएवं, निचले न्यायालय द्वारा आक्षेपित अधिनिर्णय पारित करते समय कोई अवैधता और कमी कारित नहीं की गई है, जो अन्यथा भी साक्ष्यों के साथ ही विधि के समुचित निर्वचन पर आधारित होना प्रतीत होता है । इस प्रकार, तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर दिया जाता है । परिणामस्वरूप, इसमें उपर्युक्त विस्तृत चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय तारीख 20 अक्तूबर, 2012 के आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता और कमी नहीं पाता है और इसे कायम रखा जाता है । वर्तमान अपील गुणागुण रहित होने के नाते असफल होती है और तद्नुसार, खारिज की जाती है । यह कहना अनावश्यक है कि निचला न्यायालय औपचारिक आवेदन फाइल करने पर याचियों को प्रत्यर्थियों द्वारा जमा रकम उनके बचत खाते में छूट देते हुए अवमुक्त करेगा, जिसका विस्तृत विवरण दो सप्ताह की अवधि के भीतर उपलब्ध कराया जाएगा । (पैरा 6, 7, 8 और 9)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2013 के आदेश संख्या 4121 से प्रथम अपील.

कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 30 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री के. एस. बान्याल, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ के. विजेन्दर कटोच, अधिवक्ता
प्रत्यर्थियों की ओर से	श्री वरूण राणा, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा – कर्मचारी प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 30 के अधीन फाइल वर्तमान अपील में विद्वान् आयुक्त, कर्मकार प्रतिकर, न्यायालय संख्या 1, डेहरा, जिला कांगड़ा, हि. प्र. द्वारा पारित तारीख 20 अक्तूबर, 2012 के आदेश को चुनौती दी गई है जिसके द्वारा विद्वान् निचले न्यायालय ने इसमें के याचियों/प्रत्यर्थियों (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् 'याचियों' कहा गया है) द्वारा कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 4 के अधीन फाइल दावा याचिका को मंजूर करते हुए उन्हें 2,54,160/- रुपए के साथ 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज अर्थात् 1,52,496/- रुपए (कुल 4,06,656/- रुपए) प्रतिकर के साथ यदि पूर्वोक्त अधिनिर्णय की तारीख से दो माह की अवधि के भीतर पूर्वोक्त रकम जमा नहीं की जाती है तो 12 प्रतिशत वार्षिक अतिरिक्त ब्याज के साथ प्रतिकर पाने का हकदार अधिनिर्णीत किया था ।

2. सुस्पष्ट रूप से, मामले के तथ्य, जैसा कि अभिलेखों से प्रकट होता है, यह हैं कि याचियों ने अधिनियम की धारा 4 के अधीन एक याचिका फाइल की जिसमें उन्होंने श्री कुलदीप सिंह के विधिक प्रतिनिधि और आश्रित होने के नाते श्री कुलदीप सिंह की मृत्यु के एवज प्रतिकर का दावा किया था । याचियों ने निचले न्यायालय के समक्ष यह दावा किया था कि मृतक कुलदीप सिंह को इसमें के प्रत्यर्थी/अपीलार्थी (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'प्रत्यर्थी' कहा गया है) द्वारा वर्ष 2007 में अपने गृह का निर्माण करने के लिए 100/- रुपए प्रतिदिन की दर से दैनिक मजदूरी पर नियोजित किया गया था और तारीख 12 सितम्बर, 2007 को उपर्युक्त नामित मृतक कुलदीप सिंह की प्रत्यर्थी के गृह की कच्ची

दिवाल के मलबे के नीचे दब कर मृत्यु हो गई थी । यद्यपि, पूर्वोक्त व्यक्ति को अस्पताल ले जाया गया था किन्तु उसे मृत घोषित कर दिया गया था । चूंकि, मृतक कुलदीप सिंह कुटुम्ब का एकमात्र आय अर्जित करने वाला व्यक्ति था, याचियों ने 3,00,000/- रुपए के प्रतिकर की ईप्सा करते हुए निचले न्यायालय में वाद फाइल किया । प्रत्यर्थी ने पूर्वोक्त दावे का खंडन करते हुए, उत्तर फाइल किया और यह दावा किया कि उसने तारीख 12 सितम्बर, 2007 को स्वर्गीय कुलदीप सिंह को खुदाई के लिए नियोजित नहीं था, जैसा कि अभिकथित है । उसने इस बात से भी इनकार किया कि मृतक कुलदीप सिंह की मृत्यु कच्ची दिवाल के नीचे दबने के पश्चात् नहीं हुई थी । क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों के आधार पर तारीख 16 अगस्त, 2010 को निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए गए थे :–

(i) क्या मृतक कुलदीप सिंह प्रत्यर्थी के पास एक कर्मकार था ?

(ii) क्या याची प्रतिकर के लिए हकदार हैं, जैसा कि अभिकथित है ?

3. तत्पश्चात्, विद्वान् आयुक्त, कर्मकार प्रतिकर ने तारीख 20 अक्तूबर, 2012 के अधिनिर्णय द्वारा याचियों को 2,54,160/- रुपए के साथ 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज अर्थात् 1,52,496/- रुपए (कुल 4,06,656/- रुपए) प्रतिकर पाने का हकदार अभिनिर्धारित किया और विनिर्दिष्टतः यह आदेश किया कि यदि पूर्वोक्त रकम दो माह की अवधि के भीतर संदत्त नहीं की जाती है तो प्रत्यर्थी प्रतिकर की रकम पर 12 प्रतिशत वार्षिक ब्याज के साथ ही साथ उसके ऊपर संगणित ब्याज का संदाय करने के लिए भी दायी होंगे । पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, प्रत्यर्थी ने वर्तमान कार्यवाहियों में इस न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की जिसमें उसने यह प्रार्थना की है कि वर्तमान कार्यवाहियों में आक्षेपित तारीख 20 अक्तूबर, 2021 के अधिनिर्णय को अपास्त करने के पश्चात् याचियों के दावे को खारिज कर दिया जाए ।

4. पूर्वोक्त अपील को निम्नलिखित विधि के सारवान् प्रश्न पर स्वीकार कर लिया गया :–

> "क्या विद्वान् आयुक्त ने अभिवचनों और साक्ष्यों का गलत अर्थान्वयन और गलत निर्वचन किया है, यह निष्कर्ष निकालने में कि कुलदीप कुमार, कर्मकार प्रतिकर अधिनियम के अधीन एक कर्मकार था ?"

5. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुनने और क्रमशः पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत अभिवचनों के साथ ही साक्ष्यों का परिशीलन करने के पश्चात्, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी/प्रत्यर्थी की मूल शिकायत यह है कि निचले न्यायालय ने मृतक कुलदीप कुमार को कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 के अधीन एक कर्मकार के रूप में मानने में त्रुटि कारित की है । अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री के. एस. बान्याल ने यह जोरदार तर्क दिया है कि अधिनियम की धारा 2(1)(ढ) के अधीन कर्मकार की परिभाषा के अनुसार, "कर्मकार का अभिप्राय उस व्यक्ति के अलावा अन्य व्यक्ति से है जिसका नियोजन आकस्मिक प्रकृति का है और जो नियोजक के व्यापार या कारबार के प्रयोजन के लिए अन्यथा नियोजित है ।" उन्होंने यह भी तर्क दिया कि प्रत्यर्थियों द्वारा स्थापित स्वयं के मामले के अनुसार, मृतक कुलदीप सिंह को आकस्मिक प्रकृति का कार्य करने के लिए दैनिक मजदूरी पर नियोजित किया गया था और इस प्रकार, वह 'कर्मकार' के निर्बंधनों में नहीं आ सकता है, अतएवं, एकमात्र इस आधार पर दावा याचिका खारिज कर दी जानी चाहिए ।

6. तथापि, अधिनियम की धारा 2(1)(ढ) के यथाउपबंधित 'कर्मकार' की परिभाषा का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के पश्चात्, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि शब्द 'उस व्यक्ति के अलावा' अन्य व्यक्ति से है जिसका नियोजन आकस्मिक प्रकृति का है और जो नियोजक के व्यापार या कारबार के प्रयोजन के लिए अन्यथा नियोजित है" का संशोधन अधिनियम, 2000 द्वारा अर्थात् तारीख 8 दिसम्बर, 2000 के तत्काल प्रभाव से लोप कर दिया गया है, जिसके पश्चात्, कर्मकार की परिभाषा

विस्तृत हो गई है और ऐसी हैसियत में नियोजित व्यक्ति जो अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट है, 'कर्मकार' के निबंधनों में आता है । तारीख 12 सितम्बर, 2007 को जब अभिकथित घटना घटित हुई थी, उस समय अधिनियम की धारा 2(1)(ढ) में दी गई कर्मकार की परिभाषा निम्नलिखित थी :-

"(ढ) 'कर्मकार' का अभिप्राय कोई व्यक्ति जो -

(i) ....

(iक) ....

(ख) ....

(ग) ....

(घ) ....

(iii) किसी ऐसी हैसियत में नियोजित है, जो अनुसूची 2 में विनिर्दिष्ट है, चाहे नियोजन की संविदा इस अधिनियम में पारित किए जाने से पहले या उसके पश्चात् की गई थी और चाहे ऐसी संविदा अभिव्यक्त या विवक्षित हो, मौखिक या लिखित में हो ; किन्तु इसमें ऐसा कोई व्यक्ति सम्मिलित नहीं है, जो संघ के सशस्त्र बलों के सदस्य की हैसियत में कार्य कर रहा है और किसी कर्मचारी के प्रतिनिर्देश में, जो आहत हो गया हो, जहां कर्मचारी की मृत्यु हो गई है, उसके आश्रितों या उनमें से किसी के प्रतिनिर्देश सम्मिलित हैं ।"

7. इसी प्रकार, अधिनियम की अनुसूची 2, पैरा 8 का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने से यह स्पष्ट होता है कि कोई व्यक्ति जो किसी भवन के निर्माण, रख-रखाव, मरम्मत या ध्वस्त करने में जो भूमि तल से ऊपर एक मंजिला से अधिक की है या होनी है या हो गई है या छत के बराबर भूमि से 12 फीट या उससे अधिक है, में नियोजित है, अधिनियम के अर्थान्तर्गत 'कर्मकार' होगा ।

8. यह विवादित नहीं है कि संशोधन अधिनियम, 2000 के द्‌वारा

'कर्मकार' की परिभाषा संशोधित कर दी गई जिसके द्वारा शब्द 'उस व्यक्ति के अलावा अन्य व्यक्ति से है जिसका नियोजन आकस्मिक प्रकृति का है और जो नियोजक के व्यापार या कारबार के प्रयोजन के लिए अन्यथा नियोजित है' समाप्त कर दिए गए थे, इसका अभिप्राय यह है कि अभिकथित दुर्घटना के समय पर मृतक कुलदीप कुमार एक कर्मकार था और इस प्रकार, प्रत्यर्थी उसके विधिक प्रतिनिधि/आश्रित होने के नाते कर्मकार प्रतिकर अधिनियम की धारा 4 के अधीन सही ही याचिका फाइल की है और यह नहीं कहा जा सकता है कि निचले न्यायालय ने अधिनियम की धारा 2(1)(ढ) का गलत अर्थान्वयन और गलत निर्वचन किया है । अतएवं, निचले न्यायालय द्वारा आक्षेपित अधिनिर्णय पारित करते समय कोई अवैधता और कमी कारित नहीं की गई है, जो अन्यथा भी साक्ष्यों के साथ ही विधि के समुचित निर्वचन पर आधारित होना प्रतीत होता है । इस प्रकार, तद्नुसार, विधि के सारवान् प्रश्न का उत्तर दिया जाता है ।

9. परिणामस्वरूप, इसमें उपर्युक्त विस्तृत चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय तारीख 20 अक्तूबर, 2012 के आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता और कमी नहीं पाता है और इसे कायम रखा जाता है । वर्तमान अपील गुणागुण रहित होने के नाते असफल होती है और तद्नुसार, खारिज की जाती है । यह कहना अनावश्यक है कि निचला न्यायालय औपचारिक आवेदन फाइल करने पर याचियों को प्रत्यर्थियों द्वारा जमा रकम उनके बचत खाते में छूट देते हुए अवमुक्त करेगा, जिसका विस्तृत विवरण दो सप्ताह की अवधि के भीतर उपलब्ध कराया जाएगा ।

लम्बित आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हो, को भी निपटाया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.

संसद् के अधिनियम

भविष्य निधि अधिनियम, 1925

(1925 का अधिनियम संख्यांक 19)[1]

[27 अगस्त, 1925]

सरकारी भविष्य निधियों और अन्य भविष्य निधियों से संबंधित विधि संशोधित और समेकित करने के लिए अधिनियम

सरकारी भविष्य निधियों और अन्य भविष्य निधियों से संबंधित विधि संशोधित और समेकित करना समीचीन है ;

अत: एतद्द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित किया जाता है :–

1. **संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ** – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम भविष्य निधि अधिनियम, 1925 है ।

(2) इसका विस्तार [2][जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय] [3]*** संपूर्ण भारत पर है ।

---

[1] इस अधिनियम को 1936 के विनियम सं. 4 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा खोण्डमाल जिले में, 1936 के विनियम सं. 5 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा आंगुल जिले में तथा 1941 के मध्य प्रान्त तथा बरार अधिनियम सं. 4 द्वारा आंशिक रूप में बरार में भी प्रवृत्त घोषित किया गया है ; इसका आंशिक रूप में संशोधन उत्तर प्रदेश राज्य में 1953 के उत्तर प्रदेश अधिनियम सं. 19 द्वारा किया गया है ।

इस अधिनियम का 1962 के विनियम सं. 12 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा गोवा, दमण और दीव पर ; 1963 के विनियम सं. 7 की धारा 3 और अनुसूची 1 द्वारा (1-7-1963 से) पांडिचेरी पर ; 1963 के विनियम सं. 6 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा (1-10-1965 से) दादरा और नागर हवेली पर और 1965 के विनियम सं. 8 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा (1-1-1967 से) लक्षद्वीप, मिनीकाय और अमीनदीवी द्वीप समूह पर विस्तार किया गया ।

[2] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "भाग ख राज्यों को छोड़ कर" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] भारतीय स्वतत्रता (केन्द्रीय अधिनियम तथा अध्यादेश अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा "ब्रिटिश बलूचिस्तान सहित" शब्दों का लोप किया गया ।

(3) यह उस तारीख[1] को प्रवृत्त होगा, जिसे केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, जब तक कि कोई बात विषय या संदर्भ में विरुद्ध न हो, –

(क) "अनिवार्य निक्षेप" से किसी भविष्य निधि में ऐसा अभिदाय या निक्षेप अभिप्रेत है जो उस निधि के नियमों के अधीन, जीवन बीमा की किसी पालिसी के संबंध में प्रीमियम के संदाय [2][या किसी कुटुम्ब पेंशन निधि के संबंध में अभिदाय या प्रीमियम के संदाय] के प्रयोजन के अन्यथा, मांग पर तब तक प्रतिसंदेय नहीं है जब तक कोई विनिर्दिष्ट घटना न हो जाए और कोई अंशदान [3]**** तथा कोई ऐसा ब्याज या वृद्धि जो किसी ऐसे अभिदाय, निक्षेप या अंशदान पर निधि के नियमों के अधीन प्रोद्भूत हो जाती है और कोई ऐसा अभिदाय, निक्षेप, अंशदान, ब्याज या वृद्धि भी जो ऐसी किसी घटना होने के पश्चात् अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के खाते में बाकी बच जाती है, इसके अंतर्गत है ;

(ख) "अंशदान" से कोई ऐसी रकम अभिप्रेत है जो किसी भविष्य निधि में [4][उस निधि का प्रबंध करने वाले किसी प्राधिकारी] द्वारा, उस निधि में [5][किसी खाते में जमा अभिदाय, या निक्षेप या अतिशेष] के परिवर्धन के तौर पर जमा की गई है ; और "अंशदायी भविष्य निधि" से ऐसी भविष्य निधि अभिप्रेत है जिसके नियम अंशदानों को जमा करने के लिए उपबंध करते हैं ;

(ग) "आश्रित" से किसी भविष्य निधि में अभिदाय या निक्षेप करने वाले किसी मृत व्यक्ति के निम्नलिखित नातेदार अभिप्रेत हैं,

---

[1] 1 अप्रैल, 1926 ; देखिए भारत का राजपत्र, 1925 भाग 1, पृ. 1182.

[2] 1930 के अधिनियम सं. 1 की धारा 2 द्वारा अंत:स्थापित ।

[3] 1930 के अधिनियम सं. 1 की धारा 2 द्वारा "ऐसे किसी अभिदाय या निक्षेप की बाबत जमा" शब्दों का लोप किया गया ।

[4] 1925 के अधिनियम सं. 28 की धारा 2 द्वारा "प्राधिकार जिसके अधीन निधि गठित की गई है" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[5] 1930 के अधिनियम सं. 1 की धारा 2 द्वारा "या, अभिदाय या निक्षेप की बाबत से अन्यथा" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

अर्थात् पत्नी, पति, माता-पिता, संतान, अवयस्क भाई, अविवाहित बहिन और मृत पुत्र की विधवा तथा संतान, और जहां अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के माता-पिता में से कोई भी जीवित नहीं है वहां पितामह-पितामही ;

(घ) "सरकारी भविष्य निधि" से ऐसी कोई भविष्य निधि अभिप्रेत है जो रेल भविष्य निधि से भिन्न है और जो [1][सेक्रेटरी आफ स्टेट, केन्द्रीय सरकार, क्राउन रिप्रिजैंटेटिव या किसी राज्य सरकार] के प्राधिकार से, उस [2][सरकार की सेवा में व्यक्तियों] के अथवा [3][शैक्षिक संस्थाओं में नियोजित अथवा केवल शैक्षिक प्रयोजनों के लिए विद्यमान निकायों द्वारा नियोजित] किसी वर्ग के व्यक्तियों या किन्हीं वर्गों के व्यक्तियों के लिए बनाई गई है, [4][तथा इस अधिनियम में सरकार के प्रति निर्देशों का तद्नुसार अर्थ किया जाएगा] ;

(ङ) "भविष्य निधि" से ऐसी निधि अभिप्रेत है जिसमें किसी वर्ग या किन्हीं वर्गों के कर्मचारियों के अभिदाय या निक्षेप प्राप्त किए जाते हैं और उनके पृथक् खातों में रखे जाते हैं, और कोई अंशदान तथा कोई ऐसा ब्याज या वृद्धि जो ऐसे [5]*** अभिदाय, निक्षेप या अंशदान पर निधि के नियमों के अधीन प्रोद्भूत होती है इसके अंतर्गत है ;

[6][(च) "रेल प्रशासन" से अभिप्रेत है –

---

[1] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सरकार" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1942 के अधिनियम सं. 25 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "इसके कर्मचारी" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1927 के अधिनियम सं. 7 की धारा 2 द्वारा "शिक्षा संस्थाओं में शिक्षकों के लिए" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[4] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा अंतःस्थापित ।

[5] 1930 के अधिनियम सं. 1 की धारा 2 द्वारा "ऐसे अभिदायों या निक्षपों की बाबत जमा" शब्दों का लोप किया गया ।

[6] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा मूल खंड (च) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(i) [1][भारत के किसी भाग में] या तो [2][यूनाइटेड किंगडम की] पार्लियामेंट के किसी विशेष अधिनियम या किसी भारतीय विधि के अधीन अथवा सरकार के साथ की गई किसी संविदा के अधीन किसी रेल या ट्राम का प्रशासन करने वाली कोई कंपनी, या

(ii) [3][केन्द्रीय सरकार] द्वारा या किसी राज्य सरकार द्वारा प्रशासित किसी रेल या ट्राम का प्रबंधक,

और उपखंड (ii) में निर्दिष्ट किसी दशा में, यथास्थिति, [3][केन्द्रीय सरकार] या वह राज्य सरकार इसके अंतर्गत है ;]

(छ) "रेल भविष्य निधि" से किसी रेल प्रशासन के प्राधिकार से उसके किसी वर्ग या किन्हीं वर्गों के कर्मचारियों के लिए बनाई गई भविष्य निधि अभिप्रेत है ।

3. **अनिवार्य निक्षेप का संरक्षण** – (1) किसी सरकारी भविष्य निधि या रेल भविष्य निधि का कोई अनिवार्य निक्षेप किसी भी प्रकार से समनुदेशित या भारित नहीं किया जा सकेगा और अभिदायकर्ता अथवा निक्षेपकर्ता द्वारा उपगत किसी ऋण या दायित्व के संबंध में किसी सिविल, राजस्व या दांडिक न्यायालय की किसी डिक्री या आदेश के अधीन कुर्क नहीं किया जा सकेगा तथा न तो कोई शासकीय समुदेशिती और न कोई रिसीवर ही, जो प्रांतीय दिवाला अधिनियम, 1920 (1920 का 5) के अधीन नियुक्त किया गया हो, किसी ऐसे अनिवार्य निक्षेप का हकदार होगा और न उसका उस पर कोई दावा ही होगा ।

(2) किसी ऐसी निधि में किसी अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के खाते में उसकी मृत्यु के समय जमा कोई राशि, जो निधि के नियमों के अधीन उस अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के किसी आश्रित को अथवा ऐसे

---

[1] 1951 के अधिनियम सं. 3 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा "भाग क राज्य या भाग ग राज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] विधि अनुकूलन आदेश, 1950 द्वारा अंत:स्थापित ।

[3] भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा "संघीय रेल प्राधिकरण" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

व्यक्ति को संदेय है जो इस निमित्त संदाय प्राप्त करने के लिए विधि द्वारा प्राधिकृत किया जाए, इस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत किसी कटौती के अधीन रहते हुए और उस दशा को छोड़कर जब आश्रित अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता की विधवा या संतान है, इस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व किए गए किसी समनुदेशन के अधीन, किसी समनुदेशिती के अधिकारों के भी अधीन रहते हुए, आश्रित में निहित होगी और मृत व्यक्ति द्वारा उपगत अथवा उस अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता की मृत्यु से पूर्व आश्रित द्वारा उपगत किसी ऋण या अन्य दायित्व से, यथापूर्वोक्त अधीन रहते हुए, मुक्त होगी ।

4. **प्रतिसंदायों के बारे में उपबंध** – (1) जब किसी सरकारी भविष्य निधि या रेल भविष्य निधि के नियमों के अधीन किसी अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के खाते में जमा राशि या उसका अतिशेष इस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत कोई कटौती करने के पश्चात्, संदेय हो गया है तब वह अधिकारी, जिसका कर्तव्य उसका संदाय करना है, यथास्थिति, उस राशि या अतिशेष का अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता को संदाय करेगा अथवा यदि उसकी मृत्यु हो गई तो –

(क) यदि वह राशि या अतिशेष अथवा उसका कोई भाग धारा 3 के उपबंधों के अधीन किसी आश्रित में निहित है तो उसका संदाय उस आश्रित को या ऐसे व्यक्ति को करेगा जो उसके निमित्त संदाय प्राप्त करने के लिए विधि द्वारा प्राधिकृत है ; या

(ख) यदि सम्पूर्ण राशि या अतिशेष पांच हजार रुपए से अधिक नहीं है तो उसका या उसके किसी भाग का संदाय, जो खंड (क) के अधीन संदेय नहीं है, निधि के नियमों के अधीन उसे प्राप्त करने के लिए नामनिर्देशित किसी व्यक्ति को अथवा यदि कोई व्यक्ति इस प्रकार नामनिर्देशित नहीं है तो किसी ऐसे व्यक्ति को करेगा जो उसे प्राप्त करने के लिए, अन्यथा उसको हकदार प्रतीत हो ; या

(ग) यदि ऐसी राशि या अतिशेष या उसका कोई भाग खंड (क) या खंड (ख) के अधीन किसी व्यक्ति को संदेय नहीं है, तो

उसका संदाय –

(i) निधि के नियमों के अधीन उसे प्राप्त करने के लिए नामनिर्देशित किसी व्यक्ति को, ऐसे व्यक्ति द्वारा मृत व्यक्ति की संपदा का प्रबंध उसे देना साक्ष्यित करने वाला प्रोबेट या प्रशासन पत्र अथवा उत्तराधिकार प्रमाणपत्र अधिनियम, 1889[1] के अधीन या 1827 के मुम्बई विनियम 8 के अधीन दिया गया प्रमाणपत्र, जो उसके धारक को ऐसी राशि, अतिशेष या भाग का संदाय प्राप्त करने का हकदार बनाता हो, पेश किए जाने पर करेगा, या

(ii) यदि कोई नामनिर्देशित व्यक्ति नहीं है तो किसी ऐसे व्यक्ति को करेगा जो ऐसा प्रोबेट, प्रशासन पत्र या प्रमाणपत्र पेश करे :

परन्तु जहां अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के खाते में जमा संपूर्ण राशि या उसका कोई भाग इस अधिनियम के प्रारंभ के पूर्व किसी अन्य व्यक्ति को समनुदेशित किया गया है, और समनुदेशन की लिखित सूचना अधिकारी को समनुदेशिती से मिल चुकी है, वहां वह अधिकारी इस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत कोई कटौती तथा अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता की विधवा या संतान को या उनके निमित्त खंड (क) के अधीन देय कोई संदाय करने के पश्चात् –

(i) यदि अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता, अथवा यदि उसकी मृत्यु हो गई है तो वह व्यक्ति, जिसको किसी विधिमान्य समनुदेशन के अभाव में वह राशि या अतिशेष उस उपधारा के अधीन संदेय होता, अपनी लिखित सहमति दे देता है तो, यथास्थिति, उस राशि या भाग का या उसके अतिशेष का संदाय समनुदेशिती को करेगा, या

(ii) यदि ऐसी सहमति प्राप्त नहीं होती है, तो, यथास्थिति, उस राशि, भाग या अतिशेष का संदाय, उसे प्राप्त

---

[1] अब भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का 39) देखिए ।

करने के हकदार व्यक्ति के बारे में किसी सक्षम सिविल न्यायालय के विनिश्चय तक के लिए रोक रखेगा ।

(2) उपधारा (1) द्‌वारा प्राधिकृत संदाय करने पर, यथास्थिति, सरकार या रेल प्रशासन, अभिकर्ता या निक्षेपकर्ता के खाते में जमा राशि में, इतनी राशि के संबंध में, जितनी इस प्रकार संदत्त की गई रकम के बराबर है समस्त दायित्व से पूर्ण रूप से उन्मोचित हो जाएगा ।

5. **नामनिर्देशितियों के अधिकार** – [1][(1) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में या किसी सरकारी भविष्य निधि या रेल भविष्य निधि के किसी अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता द्‌वारा उस निधि में अपने खाते में जमा राशि या उसके किसी भाग के, वसीयती या अन्य, किसी बयान में किसी बात के होते हुए भी, जहां निधि के नियमों के अनुसार सम्यक् रूप से किया गया कोई नामनिर्देशन, उस राशि के संदेय हो जाने के पूर्व, अथवा उस राशि के संदेय हो जाने पर उसका संदाय किए जाने के पूर्व अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता की मृत्यु पर ऐसी सम्पूर्ण राशि या उसके किसी भाग को प्राप्त करने का अधिकार किसी व्यक्ति को प्रदान करना तात्पर्यित करता है वहां उक्त व्यक्ति अन्य सभी व्यक्तियों का अपवर्जन करते हुए, उस अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता को यथापूर्वोक्त मृत्यु पर, यथास्थिति, ऐसी राशि या उसके किसी भाग को प्राप्त करने का हकदार हो जाएगा, किन्तु यदि –

(क) ऐसा नामनिर्देशन उसी प्रकार किए गए दूसरे नामनिर्देशन से किसी समय परिवर्तित किया गया है अथवा उन नियमों द्‌वारा विहित रीति से और प्राधिकारी को दी गई सूचना से अभिव्यक्ततः रद्द कर दिया गया है ; अथवा

(ख) ऐसा नामनिर्देशन किसी समय उसमें विनिर्दिष्ट किसी घटना के होने के कारण अविधिमान्य हो गया है,

तो वह व्यक्ति हकदार नहीं होगा, और यदि उक्त व्यक्ति, अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता से पहले मर जाता है तो नामनिर्देशन, जहां तक वह उक्त

---

[1] 1946 के अधिनियम सं. 11 की धारा 2 द्‌वारा उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

व्यक्ति को प्रदत्त अधिकार से संबंधित है, शून्य और प्रभावहीन हो जाएगा :

परन्तु जहां निधि के नियमों के अनुसार, नामनिर्देशन में मृत व्यक्ति के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को ऐसा अधिकार प्रदान करने के लिए सम्यक् रूप से उपबंध किया गया है वहां ऐसा अधिकार, उक्त व्यक्ति की यथापूर्वोक्त मृत्यु हो जाने पर ऐसे अन्य व्यक्ति को संक्रंत हो जाएगा ।]

(2) [1][भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का 39)] या 1827 के मुम्बई विनियम 8 में किसी बात के होते हुए भी किसी [2][व्यक्ति को जो यथापूर्वोक्त हकदार हो जाता है] ऐसी राशि या भाग का संदाय प्राप्त करने का हकदार बनाने वाला हक प्रमाणपत्र, यथास्थिति, उस अधिनियम या उस विनियम के अधीन [2][दिया जा सकेगा] और ऐसा प्रमाणपत्र मृत व्यक्ति की सम्पदा के लिए किसी अन्य व्यक्ति को प्रोबेट या प्रशासन पत्र दिए जाने से अविधिमान्य या अधिक्रान्त हुआ नहीं समझा जाएगा ।

[3][(3) भविष्य निधि (संशोधन) अधिनियम, 1946 (1946 का 11) की धारा 2 की उपधारा (1) द्वारा यथासंशोधित इस अधिनियम के उपबंध उस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से पूर्व किए गए समस्त ऐसे नामनिर्देशनों को भी लागू होंगे :

परंतु इस प्रकार संशोधित इस उपधारा के उपबंध किसी ऐसे मामले पर प्रभाव नहीं डालेंगे जिसमें उक्त तारीख से पूर्व, किन्हीं नियमों के अनुसार सम्यक्ततः किए गए किसी नामनिर्देशन के अनुसरण में किसी राशि का संदाय कर दिया गया है या निधि के नियमों के अधीन वह संदेय हो गई है ।]

6. **कटौतियां करने की शक्ति** – जब किसी सरकारी भविष्य निधि

---

[1] 1950 के अधिनियम सं. 35 की धारा 3 और अनुसूची 2 द्वारा "उत्तराधिकार प्रमाणपत्र अधिनियम, 1889" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1946 के अधिनियम सं. 11 की धारा 2 द्वारा कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1946 के अधिनियम सं. 11 की धारा 2 द्वारा अंतःस्थापित ।

या रेल भविष्य निधि के, जो अंशदायी भविष्य निधि है, किसी अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के खाते में जमा राशि संदेय हो जाती है तब, यदि [1][निधि के नियमों में उस निमित्त विनिर्दिष्ट] प्राधिकारी निदेश देता है तो उसमें से निम्नलिखित रकम काट ली जाएगी और, [2][यथास्थिति, सरकार या रेल प्रशासन] को संदत्त कर दी जाएगी –

(क) अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता द्वारा उपगत किसी दायित्व के अधीन [2][सरकार या रेल प्रशासन] को देय कोई रकम किन्तु जो किसी भी दशा में अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता के खाते में जमा किन्हीं अंशदानों की तथा किसी ऐसे ब्याज या वृद्धि की, जो ऐसे अंशदानों पर प्रोद्भूत हो गई है, कुल रकम से अधिक नहीं होगी ; या

(ख) जहां अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता को [3][उसके नियोजन से] किन्हीं ऐसे कारणों से, जो निधि के नियमों में इस निमित्त विनिर्दिष्ट हैं, पदच्युत कर दिया गया है अथवा जहां उसने ऐसे नियोजन को उसके प्रारंभ के पांच वर्ष के अन्दर त्याग दिया है, वहां किन्हीं ऐसे अंशदानों, ब्याज और वृद्धि की संपूर्ण रकम या उसका कोई भाग ।

[4][**6क. सेवानिवृत्ति के दो वर्ष के भीतर पूर्व अनुज्ञा के बिना वाणिज्यिक नियोजन ग्रहण करने वाले केन्द्रीय सरकार के अधिकारियों की दशा में सरकारी अंशदानों को रोक लेना या उनकी वसूली** – (1) इस धारा में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो :–

(क) "केन्द्रीय सरकार का अधिकारी" से केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाई गई अंशदायी भविष्य निधि में कोई ऐसा अभिदायकर्ता या निक्षेपकर्ता अभिप्रेत है, जो अपनी सेवानिवृत्ति के ठीक पूर्व केन्द्रीय

---

[1] 1925 के अधिनियम सं. 28 की धारा 3 द्वारा "जिससे कि निधि गठित हुई है" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1925 के अधिनियम सं. 28 की धारा 3 द्वारा "उस प्राधिकरण" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1925 के अधिनियम सं. 28 की धारा 3 द्वारा "उस प्राधिकरण के नियोजन" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[4] 1975 के अधिनियम सं. 46 की धारा 2 द्वारा (7-2-1977 से) अंत:स्थापित ।

सेवा वर्ग 1 का सदस्य है, किन्तु किसी विनिर्दिष्ट अवधि के लिए किसी सेवा-संविदा के अधीन नियुक्त किया गया कोई अधिकारी इसके अंतर्गत नहीं है ;

(ख) "वाणिज्यिक नियोजन" से व्यापारिक, वाणिज्यिक, औद्योगिक, वित्तीय या वृत्तिक कारबार में लगी हुई किसी कंपनी, सहकारी सोसाइटी, फर्म या व्यष्टि के अधीन (अभिकर्ता की हैसियत सहित) किसी भी हैसियत में नियोजन अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत निम्नलिखित भी हैं :–

(i) किसी कंपनी का निदेशक पद ;

(ii) किसी सहकारी सोसाइटी में अध्यक्ष, सभापति, प्रबंधक, सचिव, कोषपाल जैसे किसी भी नाम से ज्ञात किसी पद को, चाहे वह निर्वाचित हो या न हो, धारण करना ; और

(iii) ऐसे विषयों में सलाहकार या परामर्शी के तौर पर या तो स्वतंत्र रूप से या किसी फर्म के भागीदार के रूप में व्यवसाय प्रारम्भ करना, जिनकी बाबत –

(क) केन्द्रीय सरकार के अधिकारी के पास कोई वृत्तिक अर्हताएं नहीं हैं और वे विषय, जिनकी बाबत ऐसा व्यवसाय प्रारम्भ किया जाना है या चलाया जाता है, उसकी शासकीय जानकारी या अनुभव से संबद्ध हैं, या

(ख) केन्द्रीय सरकार के अधिकारी के पास वृत्तिक अर्हताएं हैं, किन्तु वे विषय, जिनकी बाबत ऐसा व्यवसाय प्रारंभ किया जाना है, ऐसे हैं जिनसे यह संभव है कि केन्द्रीय सरकार के अधीन उनके द्वारा धारित पदों के कारण उसके व्यवहारियों को नावाजिब फायदा हो ; या

(ग) केन्द्रीय सरकार के अधिकारी को ऐसे कार्य का भार ग्रहण करना है जिसमें केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों या अधिकारियों से संपर्क या संबंध अंतर्ग्रस्त है,

किन्तु किसी ऐसे निगम या कंपनी में या उसके अधीन नियोजन, जो पूर्ण रूप से या पर्याप्त रूप से सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण में है अथवा किसी ऐसे निकाय में या उसके अधीन नियोजन, जो पूर्ण रूप से या पर्याप्त रूप से सरकार के नियंत्रण में है या उसके द्वारा वित्तपोषित किया जाता है, इसके अंतर्गत नहीं है ;

(ग) "सरकारी अंशदान" से भविष्य निधि (संशोधन) अधिनियम, 1975 के प्रारंभ होने के पश्चात्, केन्द्रीय सरकार द्वारा या किसी राज्य सरकार द्वारा या स्थानीय प्राधिकारी उधार अधिनियम, 1914 (1914 का 9) के अर्थ में किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा ऐसे प्रारंभ के पश्चात् किसी अवधि की बाबत किए गए अंशदान अभिप्रेत हैं ;

(घ) "विहित" से केन्द्रीय सरकार द्वारा, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ।

(2) केन्द्रीय सरकार के किसी भी अधिकारी को, उस दशा में जब वह अपनी सेवानिवृत्ति की तारीख से दो वर्ष की समाप्ति के पूर्व किसी समय, केन्द्रीय सरकार की पूर्व अनुज्ञा के बिना, वाणिज्यिक नियोजन ग्रहण करता है, किसी अंशदायी भविष्य निधि में उसके नाम में जमा किए गए, सरकारी अंशदानों के संबंध में कोई अधिकार नहीं होगा ।

स्पष्टीकरण 1 – इस उपधारा और उपधारा (7) के प्रयोजनों के लिए "सेवानिवृत्ति की तारीख" से, सेवानिवृत्ति के पश्चात् केन्द्रीय सरकार के अधीन उसी या किसी अन्य वर्ग 1 पद पर या किसी राज्य सरकार के अधीन वैसे ही किसी अन्य पद पर सेवा-विच्छेद के बिना पुनर्नियोजित केन्द्रीय सरकार के अधिकारी के संबंध में, वह तारीख अभिप्रेत होगी जिसको केन्द्रीय सरकार का ऐसा अधिकारी सरकारी सेवा में अन्ततः पुनर्नियोजित नहीं रहता ।

स्पष्टीकरण 2 – केन्द्रीय सरकार के किसी अधिकारी के बारे में, जिसे उसकी सेवानिवृत्ति-पूर्व छुट्टी के दौरान किसी विशिष्ट वाणिज्यिक नियोजन को ग्रहण करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा अनुज्ञा दी गई

है, इस उपधारा के प्रयोजनों के लिए, यह समझा जाएगा कि उसने सेवानिवृत्ति के पश्चात् ऐसे नियोजन में अपने बने रहने के लिए केन्द्रीय सरकार की पूर्व अनुज्ञा प्राप्त की ली है ।

(3) उपधारा (4) के उपबंधों के अधीन रहते हुए यह है कि केन्द्रीय सरकार के किसी अधिकारी द्वारा विहित प्ररूप में आवेदन किए जाने पर, केन्द्रीय सरकार लिखित आदेश द्वारा ऐसे अधिकारी को, उस आवेदन में विनिर्दिष्ट वाणिज्यिक नियोजन को ग्रहण करने के लिए, ऐसी शर्तों के अधीन, यदि कोई हों, जो वह आवश्यक समझे, अनुज्ञा दे सकती है, या ऐसे कारणों से, जो आदेश में अभिलिखित किए जाएंगे, अनुज्ञा देने से इनकार कर सकती है ।

(4) केन्द्रीय सरकार के किसी अधिकारी को कोई वाणिज्यिक नियोजन ग्रहण करने के लिए इस धारा के अधीन अनुज्ञा देने में या देने से इनकार करने में, केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित बातों को ध्यान रखेगी, अर्थात् :–

(क) जिस नियोजन को ग्रहण करने का विचार है उसकी प्रकृति और नियोजक के पूर्ववृत्त ;

(ख) क्या उस नियोजन में जिसे ग्रहण करने का उसका विचार है, उसके कर्तव्य ऐसे हो सकते हैं जिनसे उसे सरकार का विरोध करना पड़े ;

(ग) क्या ऐसे अधिकारी ने सेवा के दौरान उस नियोजक के साथ, जिसके अधीन उसका नियोजन प्राप्त करने का विचार है, ऐसे कोई संव्यवहार किए थे जो इस संदेह के लिए युक्तियुक्त आधार हो सकते हैं कि ऐसे अधिकारी ने उस नियोजक के साथ पक्षपात किया था ;

(घ) कोई अन्य सुसंगत बातें जो विहित की जाएं ।

(5) यदि उपधारा (3) के अधीन आवेदन की प्राप्ति की तारीख से साठ दिन की अवधि के भीतर, केन्द्रीय सरकार ऐसी अनुज्ञा देने से इनकार नहीं करती है जिसके लिए आवेदन किया गया है, या आवेदक

को ऐसे इनकार की संसूचना नहीं देती है, तो यह समझा जाएगा कि केन्द्रीय सरकार ने ऐसी अनुज्ञा दे दी है जिसके लिए आवेदन किया गया है ।

(6) यदि केन्द्रीय सरकार ऐसी अनुज्ञा किन्हीं शर्तों के अधीन देती है या ऐसी अनुज्ञा देने से इनकार करती है जिसके लिए आवेदन किया गया है तो आवेदक, उस आशय के केन्द्रीय सरकार के आदेश की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर, किसी ऐसी शर्त या इनकार के विरुद्ध अभ्यावेदन कर सकता है, और केन्द्रीय सरकार उस पर ऐसे आदेश कर सकती है जो वह ठीक समझे :

परन्तु इस उपधारा के अधीन कोई आदेश जो ऐसी शर्त को रद्द करने या किन्हीं शर्तों के बिना ऐसी अनुज्ञा देने वाले आदेश से भिन्न है, अभ्यावेदन करने वाले व्यक्ति को प्रस्तावित आदेश के विरुद्ध कारण दर्शित करने का अवसर दिए बिना नहीं किया जाएगा ।

(7) यदि केन्द्रीय सरकार का कोई अधिकारी अपनी सेवानिवृत्ति की तारीख से दो वर्ष की समाप्ति के पूर्व किसी समय केन्द्रीय सरकार की पूर्व अनुज्ञा के बिना, कोई वाणिज्यिक नियोजन ग्रहण करता है या कोई ऐसी शर्त भंग करता है जिस पर कोई वाणिज्यिक नियोजन ग्रहण करने के लिए उसे इस धारा के अधीन अनुज्ञा दी गई है तो केन्द्रीय सरकार लिखित आदेश द्वारा और ऐसे कारणों से, जो उसमें अभिलिखित किए जाएंगे, यह घोषणा करने के लिए सक्षम होगी कि वह ऐसे सरकारी अंशदानों के, जो उस अधिकारी के संबंध में किए गए हों, इतने भाग का हकदार नहीं होगा जितना उस आदेश में विनिर्दिष्ट किया जाए, और यदि वह उसे प्राप्त कर चुका है तो यह निदेश देने के लिए सक्षम होगी कि वह सरकारी अंशदानों के उक्त भाग के बराबर रकम केन्द्रीय सरकार को वापस करे :

परन्तु कोई भी ऐसा आदेश, सम्बन्धित अधिकारी को ऐसी घोषणा या निदेश के विरुद्ध कारण दर्शित करने का अवसर दिए बिना, नहीं किया जाएगा :

परन्तु यह और कि इस उपधारा के अधीन कोई आदेश करने में, केन्द्रीय सरकार निम्नलिखित बातों का ध्यान रखेगी, अर्थात् :–

(i) संबंधित अधिकारी की वित्तीय परिस्थिति ;

(ii) संबंधित अधिकारी द्वारा ग्रहण किए गए वाणिज्यिक नियोजन की प्रकृति और उससे उपलब्धियां ;

(iii) ऐसी अन्य सुसंगत बातें जो विहित की जाएं ।

(8) यदि कोई ऐसी रकम, जो उपधारा (7) के अधीन किसी आदेश द्वारा वापस की जानी अपेक्षित है, विहित अवधि के भीतर वापस नहीं की जाती है तो वह भू-राजस्व की बकाया के रूप में वसूल की जा सकेगी ।

(9) इस धारा के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा पारित प्रत्येक आदेश संबंधित अधिकारी को संसूचित किया जाएगा ।

(10) इस धारा के उपबंध, इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध में या किसी अंशदायी भविष्य निधि को लागू नियमों में इसके प्रतिकूल किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे ।

(11) इस धारा के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से पहले उसके अधीन की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।]

7. **सद्भावपूर्वक किए गए कार्यों के लिए संरक्षण** – इस अधिनियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के संबंध में किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई वाद या अन्य विधिक कार्यवाही

नहीं होगी ।

8. **अधिनियम को अन्य भविष्य निधियों को लागू करने की शक्ति** – [1][(1)] [2][समुचित सरकार,] राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, निदेश दे सकेगी कि [3][(धारा 6क को छोड़कर) इस अधिनियम के सब उपबन्ध,] स्थानीय प्राधिकारी उधार अधिनियम, 1914 (1914 का 9) के अर्थ में किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा अपने कर्मचारियों के फायदे के लिए स्थापित किसी भविष्य निधि को लागू होंगे, और ऐसी घोषणा कर दिए जाने पर, यह अधिनियम तद्नुकूल ऐसे लागू होगा मानो ऐसी भविष्य निधि, सरकारी भविष्य निधि हो और ऐसा स्थानीय प्राधिकारी, सरकार हो ।

[4][(2)] [5][समुचित सरकार,] राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, निदेश दे सकेगी कि [6][(धारा 6क को छोड़कर) इस अधिनियम के सब उपबंध,] अनुसूची में विनिर्दिष्ट संस्थाओं में से किसी के अथवा ऐसी संस्थाओं के किसी समूह के कर्मचारियों के फायदे के लिए स्थापित किसी भविष्य निधि को लागू होंगे और ऐसी घोषणा कर दिए जाने पर, यह अधिनियम तद्नुकूल ऐसे लागू होगा मानो ऐसी भविष्य निधि, सरकारी भविष्य निधि हो और वह प्राधिकारी, जिसकी अभिरक्षा में निधि है, सरकार हो :

परन्तु धारा 6 इस प्रकार लागू होगी मानो उस धारा में निर्दिष्ट अंशदान करने वाला प्राधिकारी, सरकार हो ।

(3) [5][समुचित सरकार,] राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, अनुसूची में किसी ऐसी सार्वजनिक संस्था का नाम जोड़ सकेगी जिसे वह ठीक समझे और इस प्रकार जोड़ा जाना ऐसे प्रभावी होगा मानो वह इस अधिनियम

---

[1] 1930 के अधिनियम सं. 1 की धारा 3 द्वारा धारा 8 को उसकी उपधारा (1) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया ।

[2] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "स्थानीय सरकार" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1975 के अधिनियम सं. 46 की धारा 3 द्वारा (7-2-1977 से) अंतःस्थापित ।

[4] 1930 के अधिनियम सं. 1 की धारा 3 द्वारा जोड़ा गया ।

[5] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा "सपरिषद् गवर्नर जनरल" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[6] भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्वारा अंतःस्थापित ।

द्‌वारा किया गया हो ।]

[1][(4) इस धारा में "समुचित सरकार" से अभिप्रेत है –

(क) किसी छावनी प्राधिकरण, किसी महापत्तन के लिए पत्तन प्राधिकरण और किसी ऐसी संस्था के संबंध में, जो या जिसके उद्देश्य केन्द्रीय सरकार की [2][संविधान] की सप्तम अनुसूची की सूची 1 के अंतर्गत प्रतीत हों, केन्द्रीय सरकार ; और

(ख) अन्य मामलों में राज्य सरकार ।

स्पष्टीकरण – सोसाइटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1860 (1860 का 21) के अधीन रजिस्ट्रीकृत किसी संस्था के संबंध में "राज्य सरकार" से उस राज्य की राज्य सरकार अभिप्रेत है जिसमें यह सोसाइटी रजिस्ट्रीकृत है ।]

9. **सैनिकों की सम्पदाओं के बारे में व्यावृत्तियां** – धारा 4 या धारा 5 की कोई बात किसी ऐसी संपदा के धन को लागू नहीं होगी जिसके प्रबंध के प्रयोजनों के संबंध में रेजीमैंटल डैट ऐक्ट, 1893 (56 और 57 विक्ट. सी. 5) लागू होता है ।

10. [**निरसन** ।] – निरसन अधिनियम, 1927 (1927 का 12) की धारा 2 और अनुसूची द्‌वारा निरसित ।

---

1 भारत शासन (भारतीय विधि अनुकूलन) आदेश, 1937 द्‌वारा अंतःस्थापित ।

2 विधि अनुकूल आदेश, 1950 द्‌वारा "भारत शासन अधिनियम, 1935" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[1][**अनुसूची**

[धारा 8 की उपधारा (2) देखिए]

संस्थाओं की सूची

1. पास्चर इंस्टीच्यूट आफ इंडिया, कसौली ।

2. कलकत्ता सुधार अधिकरण ।

3. प्रतिपाल्य अधिकरण ।

4. भारतीय केन्द्रीय कपास समिति ।

5. रांची में मानसिक रोगों के लिए यूरोपियन अस्पताल के न्यासी ।

6. भारतीय महिलाओं को महिला चिकित्सा सहायता उपलब्ध करने के लिए राष्ट्रीय संस्था ।

7. कानून द्वारा स्थापित विश्वविद्यालय से संबद्ध कोई महाविद्यालय ।

[2]8. भारतीय कोयला श्रेणीकरण बोर्ड ।

9. लेडी मिन्टो इंडियन नर्सिंग एसोसिएशन ।

10. भारतीय रैडक्रास सोसाइटी ।

11. भारतीय लाख उपकर समिति ।

12. भारतीय रैडक्रास सोसाइटी की मद्रास राज्य शाखा ।

13. इम्पीरियल बैंक आफ इंडिया ।

14. बिहार और उड़ीसा चिकित्सा परीक्षा बोर्ड ।

[3]* * * * *

---

[1] 1930 के अधिनियम सं. 1 की धारा 4 द्वारा मद 1 से 7 से युक्त अनुसूची जोड़ी गई । 1927 के अधिनियम सं. 12 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा मूल अनुसूची का लोप किया गया ।

[2] अधिनियम की धारा 8(3) के अधीन अधिसूचनाओं द्वारा समय-समय पर 7 के पश्चात् मदें जोड़ी गईं ।

[3] भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश का अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा प्रविष्टि "15. पंजाब विश्वविद्यालय ।" का लोप किया गया ।

16. चाय जिला उत्प्रवासी अधिनियम, 1932 (1932 का 22) के अधीन उत्प्रवासी श्रमिकों के नियंत्रण के लिए बनाई गई संस्था ।

17. मुम्बई फिल्म सैंसर बोर्ड ।

18. कलकत्ता विश्वविद्यालय ।

19. केन्द्रीय सिंचाई बोर्ड ।

20. भारतीय रिजर्व बैंक ।

[1]* * * * *

22. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ।

23. भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद् ।

24. भारतीय काफी उपकर समिति ।

25. आंग्ल-भारतीय तथा यूरोपियन शिक्षा के लिए अंतर्राज्यिक बोर्ड ।

26. भारतीय अनुसंधान निधि संस्था ।

27. दिल्ली संयुक्त जल और मल बोर्ड ।

28. भारतीय क्षय रोग संस्था ।

29. कोयला खान भरण बोर्ड ।

30. भारतीय रेल स्लीपर पूल ग्रुप समिति ।

31. भारतीय काफी मंडी वृद्धि बोर्ड ।

32. कोयला खान बचाव स्टेशन समिति ।

33. भारतीय काफी बोर्ड ।

[1]* * * * * *

---

[1] भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश का अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा प्रविष्टि "21 दि ट्रस्टीज आफ दि विक्टोरिया मैमोरियल पार्क रंगून" का लोप किया गया ।

35. भारतीय रबड़ बोर्ड ।

36. भारतीय केन्द्रीय गन्ना समिति ।

37. अखिल भारतीय पशु प्रदर्शन समिति ।

38. कोयला खान श्रम कल्याण निधि ।

39. भारतीय नारियल समिति ।

40. भारतीय केन्द्रीय तंबाकू समिति ।

41. कर्मचारी राज्य बीमा निगम ।

42. भारतीय चाय अनुज्ञापन समिति ।

43. कोयला खान (संरक्षण और सुरक्षा) अधिनियम, 1952 (1952 का 12) के अधीन स्थापित कोयला बोर्ड ।

44. दिल्ली सड़क परिवहन प्राधिकारी, नई दिल्ली ।

45. केन्द्रीय चाय बोर्ड ।

46. भारतीय केन्द्रीय तिलहन समिति ।

47. औषधियों की देशी पद्धतियों के बारे में केन्द्रीय अनुसंधान संस्था, जामनगर ।

48. भारतीय मानक संस्थान, दिल्ली ।

49. सूती कपड़ा निधि समिति ।

50. देशबंधु कालेज, कालका जी ।

51. दमोदर घाटी निगम ।

52. केन्द्रीय रेशम बोर्ड ।

53. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली ।

54. खादी और ग्रामोद्योग आयोग ।

---

[1] भारतीय स्वतंत्रता (केन्द्रीय अधिनियम और अध्यादेश का अनुकूलन) आदेश, 1948 द्वारा प्रविष्टि "34. दी एन. डब्ल्यू. एफ. प्रोविन्शियल ब्रांच आफ दी इण्डियन रेड क्रास सोसाइटी" का लोप किया गया ।

55. लारेंस स्कूल (सनावर) सोसाइटी ।

56. कलावती सरन शिशु अस्पताल, नई दिल्ली ।

57. श्री गुरु तेगबहादुर खालसा कालेज, दिल्ली ।

58. चाय बोर्ड, नई दिल्ली ।

59. लेडी श्रीराम महिला कालेज, नई दिल्ली ।

60. भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली ।

61. केन्द्रीय कर्मकार शिक्षा बोर्ड ।

62. तेल और प्राकृतिक गैस आयोग ।

63. योजना तथा वास्तुकला स्कूल, नई दिल्ली ।

64. कर्मचारी भविष्य निधि स्कीम, 1952 के अधीन स्थापित भविष्य निधि के प्रशासन के लिए केन्द्रीय न्यासी बोर्ड ।

65. गुजरात राज्य सड़क परिवहन निगम ।

66. राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 (1951 का 63) के अधीन (निगमित) स्थापित उत्तर प्रदेश वित्तीय निगम ।

67. इंडियन इंस्टीच्यूट आफ टैक्नालोजी, मुम्बई ।

68. भारतीय नर्सिंग काउंसिल ।

69. राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 (1951 का 63) के अधीन (निगमित) स्थापित गुजरात राज्य वित्तीय निगम ।

70. इंडियन इंस्टीच्यूट आफ टैक्नालोजी, मद्रास ।

71. राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 (1951 का 63) के अधीन निगमित राजस्थान वित्तीय निगम ।

72. एयर इंडिया इन्टरनेशनल कार्पोरेशन ।

73. साहित्य अकादमी, नई दिल्ली ।

74. पन्नालाल गिरधारी लाल डी.ए.वी. कालेज, नई दिल्ली ।

75. दिल्ली सामाजिक कार्य स्कूल, दिल्ली ।

76. अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान ।

77. कोयला खान भविष्य निधि स्कीम, 1948 के अधीन स्थापित भविष्य निधि के प्रबंध के लिए न्यासी बोर्ड ।

78. जानकी देवी महाविद्यालय, नई दिल्ली ।

79. भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, नई दिल्ली ।

80. राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद् ।

81. राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम लिमिटेड ।

82. आयुर्वेदिक स्नातकोत्तर प्रशिक्षण केन्द्र, जामनगर ।

83. भारतीय विनिधान केन्द्र, नई दिल्ली ।

84. इंडियन एयर लाइंस कार्पोरेशन ।

85. इंडियन इंस्टीच्यूट आफ टैक्नालोजी, कानपुर ।

86. डॉक कर्मकार (नियोजन का विनियमन) अधिनियम, 1948 (1948 का 9) के अधीन स्थापित विशाखापत्तनम डॉक श्रमिक बोर्ड ।

87. केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ।

88. राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 (1951 का 63) के अधीन निगमित उड़ीसा राज्य वित्तीय निगम ।

89. संगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली ।

90. आर्थिक विकास संस्थान, दिल्ली ।

91. दिल्ली वक्फ बोर्ड ।

92. अनुप्रयुक्त जनशक्ति अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ।

93. भारतीय विधि संस्थान ।

94. इंडियन इंस्टीच्यूट आफ टैक्नालोजी, दिल्ली ।

95. दयाल सिंह कालेज, नई दिल्ली ।

96. प्रमिला कालेज, दिल्ली ।

97. सनातन धर्म कालेज, नई दिल्ली ।

98. भारतीय फार्मेसी परिषद् ।

99. भारतीय प्रबंध संस्थान, कलकत्ता ।

100. सैनिक स्कूल सोसाइटी ।

101. सालार जंग संग्रहालय बोर्ड, हैदराबाद ।

102. ललित कला अकादमी, नई दिल्ली ।

103. राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 (1951 का 63) के अधीन निगमित मध्य प्रदेश वित्तीय निगम ।

104. केन्द्रीय गोसंवर्धन परिषद् ।

105. भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम, 1955 (1955 का 23) द्वारा गठित भारतीय स्टेट बैंक ।

106. अखिल भारतीय मानसिक स्वास्थ्य संस्थान, बंगलौर ।

107. भारतीय विदेश व्यापार संस्थान, नई दिल्ली ।

108. दिल्ली पुस्तकालय बोर्ड, दिल्ली ।

109. राष्ट्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण संस्थान, नई दिल्ली ।

110. अखिल भारतीय वाक् और श्रवण संस्थान, मैसूर ।

111. भारतीय संग्रहालय, कलकत्ता ।

112. भारतीय प्रेस परिषद् ।

113. राष्ट्रीय शैक्षिक, अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ।

114. भारतीय जनसंचार-संस्थान ।

115. राष्ट्रीय औद्योगिक इंजीनियरी प्रशिक्षण संस्थान, मुम्बई ।

116. कोचीन पत्तन न्यास ।

117. विशाखापत्तनम पत्तन न्यास ।

118. कांदला पत्तन न्यास ।
119. मोरमुगाव पत्तन न्यास ।
120. पारादीप पत्तन न्यास ।
121. नेहरू स्मारक म्यूजियम और लाइब्रेरी, नई दिल्ली ।
122. नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली ।
123. भारतीय निर्यात निरीक्षण परिषद् ।
124. निर्यात निरीक्षण अभिकरण, मुम्बई ।
125. निर्यात निरीक्षण अभिकरण, दिल्ली ।
126. निर्यात निरीक्षण अभिकरण, कलकत्ता ।
127. निर्यात निरीक्षण अभिकरण, मद्रास ।
128. निर्यात निरीक्षण अभिकरण, कोचीन ।
129. ढलाई एवं गढ़ाई तकनीक का राष्ट्रीय संस्थान, रांची ।
130. भारतीय यूनिट ट्रस्ट अधिनियम, 1963 (1963 का 52) के अधीन स्थापित भारतीय यूनिट ट्रस्ट ।
131. भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली ।
132. नेशनल इंस्टीट्यूट आफ बैंकिंग मैनेजमेंट, मुम्बई ।
133. स्नातकोत्तर आयुर्विज्ञान शिक्षा और अनुसंधान, चंडीगढ़ ।
134. इलायची अधिनियम, 1965 (1965 का 42) के अधीन स्थापित इलायची बोर्ड ।
135. विक्टोरिया मैमोरियल हाल, कलकत्ता ।
136. केन्द्रीय जन सहयोग अनुसंधान तथा प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली ।
137. डॉक कर्मकार (नियोजन का विनियमन) अधिनियम, 1948 (1948 का 9) के अधीन मोरमुगाव डॉक श्रम बोर्ड ।
138. डॉक कर्मकार (नियोजन का विनियमन) अधिनियम, 1948

(1948 का 9) के अधीन स्थापित कोचीन डॉक श्रम बोर्ड ।

139. सांविधानिक तथा संसदीय अध्ययन संस्थान, नई दिल्ली ।

140. रक्षा अध्ययन और विश्लेषण संस्थान, नई दिल्ली ।

141. नीति अनुसंधान केन्द्र, नई दिल्ली ।

142. लौह अयस्क बोर्ड ।

143. भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली ।

144. भारतीय खनिज विद्यापीठ, धनबाद ।

145. नाविक भविष्य निधि संगठन ।

146. रूरल इलैक्ट्रीफिकेशन कारपोरेशन लिमिटेड ।

147. भारतीय भूचुंबकत्व संस्थान, मुम्बई ।

148. केन्द्रीय विद्यालय संगठन ।

149. बाल भवन सोसाइटी (इंडिया) ।

150. पावर इंजीनियर्स ट्रेनिंग सोसाइटी ।

151. राष्ट्रीय जन विज्ञान संस्थान ।

152. रमण रिसर्च इंस्टीट्यूट, बंगलौर ।

153. राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली ।

154. राष्ट्रीय श्रम संस्थान ।

155. राष्ट्रीय सहकारिता विकास निगम, नई दिल्ली ।

156. राष्ट्रीय जल विकास अभिकरण, नई दिल्ली ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145
2.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
3.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संविधान संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
4.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2024	कीमत रु. 2,500
2. भारत का संविधान (पाकेट एडीशन)	2024	कीमत रु. 325

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in

Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in